जैन विश्वभारती संस्थान

लाडनूं-३४१३०६ (राज.)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

णाणस्स सारमायारो

वाणिज्य स्नातक-तृतीय वर्ष

Bachelor of Commerce (Third Year)

सप्तम पत्र

Paper-VII

भारतीय बैंकिंग पद्धति

Indian Banking System

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

COPYRIGHT
Jain Vishva Bharati Institute, Ladnun

Written By :
Dr. Sanjay Kushvaha (Section-A)
Dr. Usha Rathi (Section-B,D)
Sh. Amarchand Rathi (Section-C)

Edition : 2013

Printed Copies : 200

Printed By:

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

	vuØef.kdk (Contents)	
[k.M&v	बैंक–परिभाषा, महत्व, कार्य, बैंक का चिट्ठा, सम्पत्तियां दायित्व और उनका महत्व भारतीय बैंकिंग प्रणाली का ढांचा और संगठन, बैंक के प्रकार	
[k.M&c	केन्द्रीय बैंक–भारतीय रिजर्व बैंक–उद्देश्य, कार्य, साख नियमन एवं नियंत्रण, आर्थिक विकास में योगदान 53–111	
[k.M&l	बैंकिंग अधिनियम 1949–इतिहास, सामायिक नियंत्रण, अधिनियम का बैंकिंग कम्पनियां, सार्वजनिक क्षेत्र और सहकारी बैंकों पर लागू होना।	
[k.M&n	सहकारी साख संस्थाएं, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक–उद्देश्य, कार्य, महत्व और निश्पादन	

खण्ड–अ

(Section-A)

भारतीय बैंकिंग पद्धति

(Indian Banking System)

बैंक की परिभाषा (Definiton of Bank)

बैंक शब्द इटालियन भाषा के बैंकों (Banco) से बना है जो कि फ्रेंच भाषा के बैंके (Banke) में बदलता हुआ, अंग्रेजी भाषा में 'बैंक' (Bank) हो गया। अन्य विचार यह भी है कि बैंक शब्द कास स्रोत जर्मन भाषा का शब्द 'Banck' है, जिसका अर्थ है– सम्मिलित स्कन्ध कोष। आधुनिक बैंकों का आरम्भ यूरोप में हुआ और क्रमशः ये बैंक पूरे विश्व में फैल गये। "प्रबन्धकीय लेखा–विधि से आशय लेखांकन के किसी भी ऐसे प्रारूप से है जिससे व्यवसाय को अधिक कुशलतापूर्वक चलाया जा सके।"

बैंकिंग विकास के अन्तर्गत आरम्भ से लेकर अब तक बैंक के स्वरूप तथा कार्यों में निरन्तर परिवर्तन हुए हैं, अतः विभिनन विद्वानों ने बैंक को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है–

भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम –1949 धारा 5 (b) के अनुसार, "बैंक या बैंकिंग कम्पनी वह कम्पनी है जो बैंकिंग का व्यवसाय करे।" बैंकिंग से तात्पर्य ऋण देने या विनियोजन के लिए जनता से धन जमा करना है जिसे मांग पर लौटाना तथा चेक, ड्राफ्ट, आदेश अथवा अन्य किसी प्रकार आज्ञा द्वारा निकाली जा सके।" इसी प्रकार भारतीय विनियम साध्य विलेख अधिनियम के अनुसार – "बैंकिंग के अन्तर्गत बैंकिंग का कार्य करने वाला प्रत्येक व्यक्ति तथा डाकघर बचत बैंक शामिल है।"

प्रो. किनले के अनुसार, "बैंक एक ऐसी संस्था है जो ऋण को सुरखा का ध्यान रखते हुए ऐसे व्यक्तियों को मुद्रा उधार देती है जिन्हें उसकी आवश्यकता होती है तथा जिसके पास व्यक्तियों द्वारा अपनी अतिरिक्त मुद्रा जमा की जाती है।"

सर जॉन पजेट के अनुसार, "किसी भी व्यक्ति अथवा संस्था को तभी बैंकर कहा जाता है जब वह (i) स्थायी जमा स्वीकार करे, (ii) चालू जमा प्राप्त करें, (iii) उस पर लिखे गये चैकों का भुगतान करे, (iv) ग्राहकों से प्राप्त चैकों की रकम एकत्र करें।

वेबस्टर शब्द कोष के अनुसार, "बैंक वह संस्था है जो मुद्रा में व्यवसय करती है एक ऐसा प्रतिष्ठान है जहाँ धन का जमा, संरक्षण तथा निर्गमन होता है तथा ऋण एवं कटौती सुविधाएं प्रदान की जाती है और एक स्थान से दूसरे स्थान पर रकम भेजने की व्यवस्था की जाती है।"

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

बैंकों का महत्व (Importance of Banks)

बैंक आधुनिक चलन वयवस्था का हृदय तथा केन्द्र बिन्दु हैं एक राष्ट्र के आर्थिक विकास में बैंकों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। वर्तमान में प्रत्येक राष्ट्र का उत्पादन, उद्योग, व्यापार तथा व्यवसाय बैंकिंग व्यवस्था पर आश्रित होते हैं। आर्थिक एवं औद्योगिक विकास को योजनाओं की सफलता के लिए बैंकिंग व्यवस्था पर पर्याप्त ध्यान देना होगा। अतः आधुनिक अर्थव्यवस्था में बैंकों को वाणिज्य व व्यापार का तंत्रिका केन्द्र कहना ही उचित है।

बैंकों का महत्व को निम्नांकित विवरण से स्पष्ट किया जा सकता है–

(1) **बचत प्रोत्साहन (Encouragement to saving)-** बैंक लोगों में बचत करने की आदत को प्रोत्साहन देते हैं और उनकी छोटी–छोटी बचतों को संग्रहित करते हैं। बचतकर्ताओं को ब्याज का प्रलोभन तो रहता ही है। परन्तु बैंक द्वारा नियमित भुगतान से विश्वास तथा सुरक्षा की भावना बढ़ती है। पिछड़े राष्ट्रों में जहां लोगों में बचत करने की आदत कम है तथा आय का स्तर कम होने से बचतें बहुत कम होती है, बैंक उनकी छोटी–छोटी बचतों को जमाकर बिखरे धन को एक जगह इकट्ठा कर व्यापार एवं उद्योग के लिए उपलब्ध करते हैं।

(2) **पूँजी निर्माण (Capital formation)-** बैंक साख निर्माण तथा लोगों से अनेक प्रकार के खातों में धन जमा कर पूंजी निर्माण करते हैं। आर्थिक विकास में पूंजी निर्माण प्राथमिक आवश्यकता है। जो लोग जोखिम उठाना नहीं चाहते, बैंक उनके धन को जमा कर व्यापार, उद्योग, व्यवसाय आदि उत्पादक कार्यों में लगाते हैं।

(3) **औद्योगिक एवं आर्थिक विकास (Industrial and economic development)-** बैंक अर्थव्यवस्था के त्वरित आर्थिक विकास के लिए उत्तरदायित्व है क्योंकि बैंकों द्वारा ही उद्योगों को वित्तीय सहायता प्राप्त होती है।

(४) विनियोग एवं अर्थ प्रबन्धन– वित्तीय साधन उद्योग के रक्तदान हैं। अब बड़े पैमाने के उद्योगों में बड़ी मात्रा में स्थायी एवं कार्यशील पूंजी की आवश्यता होती है। आज कोई भी व्यक्ति कितना ही धनवान क्यों न हो बड़े उद्योगों के संचालन हेतु अकेला वित्तीय साधन नहीं जुटा सकता। उसके साधनों की व्यवस्था बैंकिंग व्यवस्था से होती है। आज व्यापार, उद्योग, व्यवसाय सभी में बड़ी मात्रा में बैंकों द्वारा पूंजी विनियोग किया जाता है।

(5) **साख का सृजन (Creation of Credit)-** साख–उद्योग व व्यापार का जीवन रक्त है, वर्तमान युग में मुद्रा चलन की कुल मात्रा में बैंक मुद्रा व साख मुद्रा का महत्वपूर्ण स्थान है। सभी प्रकार के सौदों के लिए चैक, ड्राफ्ट आदि निकट मुद्राओं का प्रयोग होता है।

(6) **व्यापारिक क्रियाओं का विस्तार (Expansion of business activities)-** बैंकिंग विस्तार की व्यवस्था न केवल मूल्यों में स्थिरता रखने में सहायक होती है, अपितु वह आर्थिक व व्यापारिक क्रियाओं पर भी व्यापक प्रभाव डालती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(७) साधनों में गतिशीलता– बैंक उत्पत्ति के साधनों को गतिशीलता प्रदान करते हैं बैंक उन कार्यों में धन लगाते हैं, जो अधिक उत्पादकण कम जोखिमपूर्ण तथा आर्थिक प्रगति के लिए उपयुक्त हो। अतः बैंकों के कारण साधनों का स्थानान्तरण कम उत्पादक उद्योगों से अधिक उत्पादक उद्योगों में होता है जिससे उत्पादन और रोजगार में वृद्धि के साथ–साथ सामान्य जीवन–स्तर में वृद्धि होती है और देश के विकास का मार्ग प्रशस्त होता है।

(८) मुद्रा प्रणाली में लोच एवं कीमतों में स्थायित्व– आर्थिक विकास के लिए मुद्रा प्रणाली में लोच और कीमतों में सापेक्षिक स्थायित्व आवश्यक है। बैंक साख निर्माण से मुद्रा प्रणाली को लोच प्रदान करते हैं। इस लोच एवं साख सृजन पर उचित नियन्त्रण करके बैंकिंग व्यवस्था कीमतों में होने वाले उच्चावचनों को रोक कर स्थायित्व ला सकती है।

(९) राजकीय वित्त व्यवस्था– आजकल राज्य का आर्थिक गतिविधियों में हस्तक्षेप बढ़ता जा रहा है। आधुनिक राज्य को अनेक प्रकार से आय प्राप्त होती है और अनेक प्रकार के व्यय करने पड़ते हैं। राज्य के प्रतिनिधि के रूप में बैंक सार्वजनिक ऋणों का संग्रह करते है। सरकार को वित्तीय परामर्श देते हैं तथा सरकार को ऋण प्रदान कर उनको आर्थिक विकासके कार्यों के लिए प्रेरित करते हैं।

(१०) क्षेत्रीय आधार पर कोषों का उपयुक्त वितरण– बैंक पूंजी को अत्याधिक पूंजी वाले क्षेत्रों से कमी वाले क्षेत्रों को स्थानान्तरित करते हैं, जिसमें उस पूंजी का लाभदायक तथा कुशल उपयोग होता है। पिछड़े क्षेत्रों के आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है और क्षेत्रीय विषमता (Regional Imbalances) कम होती है।

(११) बहुमूल्य धातुओं की बचत एवं विनिमय का सस्ता साधन– बैंकों के द्वारा साख–पत्रों, चैकों, ड्राफ्टों आदि के प्रयोग को प्रोत्साहन मिलता है जिनसे विनिमय में अत्यधिक सुविधा ही नहीं होती बल्कि उनके उपयाग से जो स्वर्ण रजत या बहुमूल्य धातुओं की बचत हुई है उनका उपयोग अधिक महत्वपूर्ण कार्यों में होने लगा है।

(१२) मुद्रा हस्तांतरण सुगम एवं सस्ता – बैंकों ने आन्तरिक एवं बाह्य भुगतानों में मुद्रा हस्तान्तरण को बहुत ही सस्ता, सुविधाजनक एवं कम से कम जोखिमपूर्ण बना दिया है। इससे राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहन मिला है और आर्थिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त होता है। आज बैंकों के माध्यम से विदेशी पूँजी देश के उत्पाद कार्यों में लगाई जा रही है। विदेशों में पूँजी का आयात सरल हो गया है।

(१३) प्रतिनिधित्व एवं परामर्श – बैंक अपने ग्राहकों, उत्पादकों, व्यापारियों एवं व्यवसायियों के लिए प्रतिनिधित्व का कार्य कर अनेक सेवाएं प्रदान करते हैं, सलाह भी देते हैं

(१४) रोजगार में वृद्धि – बैंकिंग विकास से न केवल बैंकिंग क्षेत्रों में लोगों को रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं,बल्कि बैंकों द्वारा पूंजी विनियोग, अर्थ प्रबन्ध आदि से व्यापार उद्योग एवं क्षेत्रों में विकास से रोजगार की वृद्धि होती हैं।

बैंकों के कार्य (Functions of the Banks)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

बैंकिंग प्रणाली का विकास धीरे–धीरे हुआ साथ ही उनके कार्यों का भी विस्तार होता गया। प्रारम्भ में बैंक केवल मुद्राओं की अदला–बदली ही करते थे। तत्पश्चात् लोगों से ब्याज पर ऋण भी स्वीकार करने लगे। उनके पास धन अधिक जमा हो जाने के पश्चात् इस धन से ऋण देना भी प्रारम्भ कर दिया। धीरे–धीरे चैक एवं साख पत्रों का प्रयोग होने लगा। नोट निर्गमन का अधिकार भी सरकार के हाथ से केन्द्र बैंकों के पास आ गया। आधुनिक व्यापारिक बैंक अनेक प्रकार के कार्य करते हैं, उनके प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं–

(A) प्राथमिक या आधारभूत कार्य (Primary or Basic Functions)

(i) निक्षेप स्वीकार करना (Collection of Deposits)– बैंकिंग संस्थान जनसाधारण से छोटी–छोटी बचतों को संगृहीत कर अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती है। अतः बैंकों द्वारा जमा संग्रहण करना आधारभूत व प्राथमिक कार्य कहलाता है। बैंकों द्वारा जमा स्वीकार करने पर उनके तथा जमा कर्ताओं के मध्य ऋणी एवं ऋणदाता (Debtor and Creditor) का सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।

बैंक निम्नांकित खातों में जमा स्वीकार करते हैं–

१. **स्थायी जमा खाता (Fixed Deposit Accounts)**– इस प्रकार के खाते में राशि एक निश्चित अवधि के लिए जमा की जाती है। प्रायः यह अवधि 3 माह से 5 वर्ष तक के लिए होती ह। जमाकर्ता को राशि जमा की रसीद (Fixed Deposit Receipt -FDR) दे दी जाती है जिसमें जमाकर्ता का नाम, जमा की गई राश, ब्याज दर तथा जमा अवधि का उल्लेख होता है। सामान्यतः जमाकर्ता से राशि निश्चित अवधि पश्चात् ही लौटाई जाती है, यदि अवधि पूर्व राशि की आवश्यकता हो तो ऐसी स्थिति में बैंक ग्राहक को देय ब्याज में कुछ कटौती कर देता है। स्थायी जमा खाते की ब्याज दरें सामान्यतः अधिक दी होती है।

२. **चालू खाता (Current Account)** – व्यापारी तथा बड़ी–बड़ी संस्थाओं के लिए इस प्राकर के खाते बहुत उपयोगी होते हैं, जिन्हें दिन में कई बार भुगतान प्राप्त होते हैं अथवा करने होते हैं। सामान्यतः इसप्राकर के खाते में जमा राशियों पर कोई ब्याज नहीं दिया जाता है, कभी–कभी कुछ बैंक तो जमाकर्ताओं से कुछ सेवा शुल्क भी वसूल कर लेलते हैं। चालू खाता खोलने पर बैंक द्वारा एक पास बुक (Pass Book) तथा राशि जमा कराने के लिए फार्म (Pay-in-Slip) भी दिये जाते हैं।

३. **बचत खाता (Saving Account)** –छोटी बचत वाले लोगों के लिए बचत खाते अधिक उपयुक्त होते हैं, इस खाते में सप्ताह में कई बार राशि जमा करवायी जा सकती है, परन्तु एक या दो बार से अधिक नहीं निकाली जा सकती हे। इस खाते से राशि प्राप्त करने के लिए निम्नांकित तरीके हैं– (i) पास बुक का प्रस्तुतीकरण तथा राशि निकालने (withdrawal form) के प्रपत्र भरकर (ii) चेक से राशि निकालना अथवा भुगतान करना तथा (iii) ए.टी.एम. (Automated Teller Machine-ATM) से राशि प्राप्त करना। वेतनभोगी कर्मचारियों तथा सामान्य आय वर्ग के व्यक्तियों के लिए बचत खाता अधिक उपयोगी है, क्योंकि इस पर सावधि जमा खाते की अपेक्षा कम मात्रा में ब्याज भी प्राप्त होता है। ऐसे

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

खाते नौकरी–पेशा लोगों एवं छोटे व्यापारिक बैंक ही इस कार्य को करते हैं। पोस्ट–आफिस सेविंग्स खाता भी इसी का विभागीय रूप है।

४. **गृह बचत खाता (Home Safe Saving Bank A/c)** – कुछ बैंकों द्वारा छोटी बचतों को प्रोत्साहन देने के लिए ग्राहकों को गुल्लक (Safe) दे दी जाती है जिसमें समय–समय पर वे राशि डालते रहते हैं। गुल्लक की चाबी बैंक के पास होती है, गुल्लक से राशि बैंक में ही निकाली जाती है तथा जमाकर्ता के खाते में राशि जमा कर दी जाती है। इन खातों में ब्याज दर कम ही दी जाती है।

५. **अनिश्चित जमा खाता (Indefinite Period Deposit A/c)** – इस प्रकार के खातों में अनिश्चित व दीर्घकाल के लिए राशि जमा करवाई जाती है, जिसे कुछ विशेष दशाओं में ही निकाला जा सकता है। इस प्रकार के खाते भारतीय बैंकिंग व्यवस्था में नहीं खोले जाते हैं।

६. **संचयी आवृत्ति खाता (Recuring Deposit Account)** – इस प्रकार खाते उन व्यक्तियों द्वारा खोले जाते हैं जो निश्चित अवधि में निश्चित राशि निरन्तर जमा कराना चाहते हैं, संचयकर्ता निश्चित राशि ब्याज सहित अवधि पश्चात् प्राप्त कर लेता है।

उपर्युक्त खातों में बैंक राशि जमा करते हैं तथा अतिरिक्त तरलता का संचय करते हैं, इन खातों में राशि सुरक्षित भी रहती है तथा ब्याज के रूप में आय भी प्राप्त होती है।

(ii) ऋण प्रदान करना (Advancing in Loans) – जमाकर्ताओं की सम्पूर्ण रकम बैंक के पास जमा नहीं रहती है। बैंक जमा राशि का एक निश्चित प्रतिशत अनुपात कोश में रखकर शेष सारी जरूरत मदों को उधार (ऋण के रूप में) दे देते हैं। अतः ऋण देना भी बैंक का प्रमुख कार्य है। बैंक सामान्यतः निम्नलिखित प्रकार से ऋण देते हैं–

(1) **ऋण एवं अग्रिम (Loans and Advances)** – एक निश्चित राशि निश्चित समय के लिए उधार दी जाने की व्यवस्था ऋण व अग्रिम कहलाती है। यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि ऋण प्राप्त करने वाले व्यक्ति के नाम एक निश्चित स्वीकृत राशि उसके खाते में जमा कर दी जाती है तथा ऋणी समय–समय पर राशि प्राप्त करता रहती है, मुख्य तथ्य यह है कि ब्याज केवल उसी राशि पर देय होगा, जो राशि प्राप्त कर ली जाती है। ब्याज दर का निर्धारण ग्राहक की साख ऋण के उद्देश्य तथा धरोहर की किस्म पर होता है।

(2) **नकद साख (Cash Credit)** – इसके अन्तर्गत बैंक, व्यापारिक माल, स्वीकृत प्रतिभूतियों, अंश व बॉण्ड आदि की जमानत पर ग्राहकों को निश्चित मात्रा में ऋण देता हैं ग्राहक के खाते की रकम जामा कर ली जाती है ओर जमानत में दी गई वस्तुओं को बैंक अपने अधिकारएवं संरक्षण में लेता है। ग्राहक ऋण समय–समय पर चुकाता रहता है और अपनी जमानत की वस्तुएं लेता रहता है। बकाया राशि का ही ब्याज लिया जाता है। नकद साख और अधिविकर्ष में यह मौलिक अन्तर है कि नकद साख किसी को भी स्वीकार

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

की जा सकती है पर अधिविकर्ष केवल चालू खाता रखने वाले व्यक्तियों को ही दिये जाते हैं । नकद साख जमानत पर एक वर्ष के लिए तथा कुछ अधिक व्याज दर पर दी जाती है जबकि अधिविकर्ष बिना जमानत के आपातकाल के लिए तथा नकद साख के मुकाबले कम ब्याज पर दिये जाते हैं।

(3) **अधिविकर्ष (Overdraft)** – इस व्यवस्था के अन्तर्गत बैंक ग्राहक के साथ एक समझौता करता है जिसके अनुसार चालू खाता संचालित करने वाले अपने ग्राहकों को उसकी जमा राशि से एक निश्चित सीमा तक, अधिक राशि निकालने की सुविधा प्रदान करता है, इसे अधिविकर्ष कहते हैं। यह सुविधि उन ग्राहकों को प्रदान की जाती है, जिनकी व्यक्तिगत साख व जमानत उत्तम प्रकार की होती हैं।

(4) **विनिमय बिलों व हुण्डियों की कटौती या भुनाना (Discounting of the Bills & Hundies)** – इस व्यवस्था के अन्तर्गत जो विनिमय विपत्र (Bill of Exchange) उधार माल के प्रतिफल में बिल लेखक (Drawer) को स्वीकारकर्ता (Acceptor) की स्वीकृति पश्चात् प्राप्त होते हैं तथा जिनका भुगतान निश्चित राशि काटकर पूर्व में ही प्राप्त कर लेना बिलों की कटौती कहलाती है। परिपक्वता तिथि पर ऋण (स्वीकारकर्ता) द्वारा भुगतान बैंक का प्राप्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त बैंक आवश्यकता पड़ने पर केन्द्रीय बैंक से पुनर्कटौती Redisounting) भी करवा सकता है। विक्रेता बिल या हुण्डी को बैंक से कटौती करा लेता है या भुनाता है। बैंक इसमें उल्लेखित राशि में से भुगतान अवधि तक का ब्याज काट कर विक्रेता को तत्काल नकद भुगतान कर देता है और देय तिथि को क्रेता से भुगतान प्राप्त कर लेता है। अगत क्रेता निर्धारित तिथि पर इस बिल या हुण्डी का भुगतान नहीं करता तो बैंक विक्रेता को उत्तरदायी ठहराकर उससे रकम वसूल कर लेता है।

(5) **बैंक द्वारा साख निर्माण (Creation of Credit)** – बैंक जनता से रूपया जमा पर प्राप्त करते और उधार देते हैं। इससे जहाँ एक ओर जमाओं से ऋण उत्पन्न होते हैं वहाँ दूसरी ओर ऋणों से जमाओं को जन्म मिलता है। यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती हैं इससे बैंक अपनेपास नकद जमाओं से कहीं अधिक ऋण देने में समर्थ हो जाते हैं। बैंक नोओ। का निर्गमन करके भी साख का निर्माण करते हैं। भारत में केन्द्रीय बैंक नोट निर्गमन कर साख का निर्माण करता है। दूसरे बैंक नहीं।

(6) **नोट निर्गमन का कार्य (Issue of Paper Currency)** – पत्र–मुद्रा विकास की प्रारम्भिक अवस्था में अनेक व्यापारिक बैंक नोट निर्गमन का कार्य करते थे। भारत में भी 1935 से पूर्व इम्पीरियल बैंक (अब स्टेट बैंक) व अन्य बड़े प्रेसीडेन्सी बैंक नोट निर्गमन का कार्य करते थे पर 1935 से रिजर्व बैंक को ही नोट निर्गमन करने का एकाधिकार है। अब विश्व के प्रायः सभी देशों में नोट निर्गमन कार्य व्यापारिक बैंकों के हाथ में न होकर प्रत्येक देश के केन्द्रीय बैंक के हाथ में है।

बैंक द्वारा ग्राहकों को दिये गये ऋण– यदि पर्याप्त धरोहर पर दिये गये हो तो वे ऋण सुरक्षित ऋण कहलाते हैं। इसके विपरीत यदि दिये गये ऋण गैर जमानती हो तो वे असुरक्षित ऋण कहलाते हैं। वर्तमान में बैंकिंग ऋण व्यवस्था में पिछले वर्षों में भारी बदलाव आया है क्योंकि वर्तमान ऋण सरल व सुलभ प्रक्रिया पर उपलब्ध करवाये जाने लगे हैं।

(B) अभिकर्ता सम्बन्धी कार्य (Agency or Representative Functions)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

आधुनिक बैंक अपने ग्राहकों के लिए एजेंट अथवा अभिकर्ता के रूप में भी कार्य करते हैं। इनमें से कुछ कार्य तो निःशुल्क एवं सशुल्क या कमीशन के बदले में किये जाते हैं। ये कार्य निम्नांकित हैं–

१. **प्रपत्रों का संग्रहण (Collection of Documents)-** चैकों, विनिमय विपत्रों एवं हुण्डियों तथा अन्य साख पत्रों का भुगतान इकट्ठा करता है तथा संग्रहण कर ग्राहकों के खाते में जमा कर देता है। स्थानीय सेवाएं प्रायः निःशुल्क और बाहर के साख पत्रों के लिए शुल्क वसूल किया जाता है।

२. **विपत्रों का भुगतान (Payment of Documents)**– ग्राहकों द्वारा जिन चेकों, साख–पत्र, बिलों व हुण्डियों का भुगतान अन्तिम तिथि पर दूसरे ऋणदाताओं को करना है, बैंक भुगतान कर रकम ग्राहकों के नाम लिख देता है।

३. **ग्राहकों के दायित्वों का भुगतान (Making payments on the behalf of the customer)**– बैंक अपने ग्राहकों के निर्देशानुसार ग्राहक के दायित्वों का भुगतान भी करते हैं, उदराहरणार्थ –मकान किराया, बीमा प्रीमियम, टेलीफोन, बिजली व अन्य बिलों का भुगतान आदि।

४. **ग्राहकों के लिए भुगतान प्राप्त करना (Receiving the payments)**– बैंक मकान किराया, लाभांश, ब्याज आदि प्राप्त कर राशि खाते में जमा कर देता है।

५. **प्रतिभूतियों का क्रय व विक्रय (Purchase and sale of the securities)**–बैंक प्रतिनिधि के रूप मेंअपने ग्राहकों के लिए अंशें तथा प्रतिभूतियों का क्रय करता है और उन्हें आवश्यकता न होने पर बेच देता है क्योंकि शेयर बाजार से ग्राहकों की अपेक्षा बैंक भलीभांति परिचित ही नहीं रहते बल्कि उनका शेयर बाजारों के दलालों व कमीशन एजेन्टों से निकटतम सम्पर्क रहता है। इन कार्य के लिए बैंक कुछ कमीशन वसूल करते हैं।

६. **अभिगोपन व्यवसाय (Underwriting Business)** – सामान्यतः वृहत् औद्योगिक व व्यावसायिक इकाईयां ऋण पत्र जारी करती हैं। इन ऋण पत्रों को किसी फर्म के लिए विक्रय करना अभिगोपन कार्य कहलाता है अर्थात् जो ऋण पत्र पूर्ण रूप से जारी नहीं हो जाते हैं, उन्हें बैंक स्वयं क्रय कर लेती है। इसके बदले में भी बैंक कमीशन प्राप्त करता है।

७. **ट्रस्टी तथा प्रबन्धक का कार्य (Act as these trustee and executer)** – ग्राहक के निर्देश के अनुसार अथवा सरकार व न्यायालय में आदेशानुसार बैंक स्थायी सम्पत्ति की व्यवस्था विभाजन या प्रबन्ध का उत्तरदायित्व भी स्वीकार करता है।

८. **राशि का हस्तान्तरण (Remittance of cash or funds)** – बैंक द्वारा अपेन ग्राहकों की सुविधा के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर रकम भेजने की व्यवस्था की जाती हे। नकद धन जमा कराकर बैंक ड्राफ्ट के रूप में दूसरी जगह भेजना या एक स्थान से दूसरे स्थान पर उसी व्यक्ति के खाते में धनराशि का हस्तान्तरण करना बैंकों की महत्वपूर्ण सेवा है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

९. **अन्य कार्य (Other Functions) –**

1. विदेशी विनिमय का कार्य
2. पासपोर्ट एवं आयकर प्रपत्र तैयार करना।
3. समशोधन कार्य–समाशोधन गृहों के माध्यम से।
4. उपभोग ऋण–दैनिक उपभोग सामग्री, क्रय करने हेतु।
5. आवास व तकनीकी शिक्षा ऋण।
6. राष्ट्रीय आपदा पर सुरक्षा कोषों का निर्माण।
7. वित्तीय मामलों में परामर्श व मार्गदर्शन देना।

(C) जन उपयोगी एवं साख निर्माण कार्य (General Utility and Credit Creation Functions)

बैंक के सामान्य कार्यों मं भी अनेक कार्यों का समावेश होता है, जो वे अपने सहायक कार्यों के रूप में करते हैं–

१. **विदेशी मुद्रा का क्रय-विक्रय** – साधारतणतः विदेशी विनिमय के क्रय–विक्रय का कार्य विदेशी विनिमय बैंक (Foreign Exchange Bank) करते हैं। परन्तु जिन देशें मे विदेशी विनिमय बैंकों का पर्याप्त विकास नहीं हो पाता है वहाँ व्यापारिक बैंक भी इस कार्य को करते हैं। भारत में भी विदेशी विनिमय क्रय–विक्रय का कार्य यातो व्यापारिक बैंकों या विदेशी बैंकों की शाखाओं द्वारा किया जाता है।

२. **आन्तरिक एव विदेशी व्यापार का अर्थ प्रबन्ध–** बैंकों के अल्पकालीन ऋण में व्यापार के अर्थ प्रबन्ध का कार्य महत्वपूर्णहै। वे यह कार्य बिलों, हुण्डियों, साख–पत्रों के क्रय–विक्रय या कटौती द्वारा करते हैं।

३. **यात्री बैंक एवं साख पत्रों की व्यवस्था–** बैंक अपने ग्राहकों को यात्राी चैक व साख–पत्र देकर देश–विदेश में उनकी यात्रा की वित्त–व्यवस्था करते हैं। यहाँ धन जमा किया जाता है और देश–विदेश में जहा वे भुगतान प्राप्त करना चाहें, पूर्व नियोजित व्यवस्था के अनुसार भुगतान प्राप्त कर लेते हैं। इस प्राकर बैंक धन को साध लेकर चलने की जोखिम या विदेशी मुद्रा के परिवर्तन की समस्याओं से छुटकारा दिलाते हैं।

४. **सम्पत्ति या मूल्यवान वस्तुओं की सुरक्षा–**बैंक अपने ग्राहकों को उनके सोने–चांदी के जेवरात,जोखिमपूर्ण प्रलेखों (Documents), कम्पनियों के हिस्से, ऋण पत्रों को साधारण वार्षिक शुल्क पर लॉकर्स (Lockers) की व्यवस्था से सुरक्षित रखते हैं जिससे चोरी, डकैती एवं नष्ट होने आदि का भय नहीं रहता।

५. **आर्थिक आंकड़ों का संकलन–** आजकल देश का केन्द्रीय बैंक और व्यापारिक बैंक अपने व्यवसाय के आधार पर मुद्रा, व्यापार, उद्योग आदि से सम्बन्धित तथ्यों तथा आंकड़ों का संकलन एवं

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

आवश्यक आर्थिक जानकारी उपलब्ध करते हैं जिसके आधार पर बैंक या सरकार अपनी नीतियों का निर्माण एवं संचालन करते हैं।

६. **वित्तीय विषयों पर परामर्श–** बैंक पूर्णतः वित्तीय संस्थाएं होने से वित्तीय विशेषज्ञों की सेवाओं का नियोजन करते हैं और अपने ग्राहकों को भी वित्तीय मामलों पर उपयोगी सलाह देते हैं।

७. **साख सम्बन्धी सूचना–** व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने में प्रत्येक उद्योगपति, व्यापारी परस्पर एक–दूसरे की आर्थिक स्थिति एवं वित्तीय सुदृढ़ता की जानकारी चाहते हैं ताकि भावी भुगतानों के बारे में विश्वास हो जाये और नुकसान से मुक्ति मिल सके। इस सम्बन्ध में बैंक अपने ग्राहकों के लिए साख सम्बन्धी सूचना एकत्रित करते हैं तथा देते हैं। इससे जोखिम कम होती है।

८. **ग्राहकों की ओर से विनिमय बिलों को स्वीकार करना–** जब बैंक ग्राहकों के लिए यह कार्य करते हैं तो ऋणदाता को ऋणी की साख में विश्वास हो जाता है। इससे व्यापार विस्तार में सहायता मिलती है।

९. **व्यक्तिगत साख–** कभी–कभी बैंक अपने ग्राहकों को विक्रय गारन्टी सुविधा से उन्हें ऐसी वस्तुओं के उपभोग का भी अवसर प्रदान करते हें जो उनकी सामान्य बचत से परहे हैं किश्तों पर भुगतान के आधार पर स्कूटर, रेफ्रीजरेटर, मशीनें या अन्य सामान की गारण्टी द्वारा विक्रय की व्यवस्था करते हैं। भारत में भी कुछ बैंक यह कार्य करने लगे हैं। इससे औद्योगिक विकास को बल मिलता है तथा जीवन स्तर में वृद्धि होती है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि आधुनिक आर्थिक आर्थिक जीवन में बैंक रक्तवाहिनी नाड़ियों की भांति कार्य करते हैं और देश की अर्थव्यवस्था को स्वस्थ, सबल और अधिकाधिक सक्रिय बनाकर आर्थिक विकास और आर्थिक स्थायित्व की ओर अग्रसर करते हैं देश के वित्तीय साधनों को प्राथमिकता के अनुसार वितरण कर नियोजन की सफलता में योगदान देते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

Balance Sheet of a Bank

महत्व (Significance)

नया प्रारूप (New Formet) :

31 मार्च, 1991 तक समाप्त हुए लेखा वर्षो के सम्बन्ध में बैंकों पर चिटठे और लाभ–हानि खाते के सम्बन्ध में पुराना प्रारूप लागू होता था। इस प्रारूप के अनुसार चिट्ठा एवं लाभ–हानि खाता क्षैतिज स्वरूप (Horizontal form) में बनाया जाता था। चिट्ठे के बायीं ओर पूंजी तथा दायित्वों को व दाहिनी ओर सम्पतियों को दिखाया जाता था। कुछ मदों को चिट्ठे के दोनों ओर दिखाया जाता था (जैसे : Acceptances, Endorsements and other obligations)। मदों की संख्या भी काफी होती थी। एक सामान्य व्यक्ति के लिए इन सब मदों को समझना मुश्किल होता था। लाभ–हानि खाता भी क्षेतिज स्वरूप में होता था। बायीं ओर खर्चों को तथा दाहिनी ओर आय सम्बन्धी मदों को दिखाया जाता था।

31 मार्च, 1992 को समाप्त हुए लेखा वर्ष से उक्त पुराने प्रारूप को समाप्त कर दिया गया है। अब बैंकिंग कम्पनियों को अपना चिट्ठा व लाभ–हानि खाता नये प्रारूप में तैयार करने पड़ते हैं। नये प्रारूप की विशेषताएं एवं महत्व निम्नलिखित हैं :

(i) नये प्रारूप में चिट्ठा तथा लाभ–हानि का खड़ा स्वरूप (Vertical Form) दिया गया है। चिट्ठे का स्वरूप ''क'' तथा लाभ–हानि खाते का ''ख'' हैं।

(ii) चिट्ठे में पहले पूंजी तथा दायित्वों सम्बन्धी मदों को पांच शीर्षकों के अन्तर्गत दिखाया जाता है। इसका विस्तृत वर्णन क्रमशः 1 से 5 तक सारणियों में चिट्ठे के साथ नत्थी किया जाता है। पूंजी तथा दायित्वों की पांचों मदो को जोड़ लगा दिया जाता है।

(iii) पूंजी तथा दायित्वों के जोड़ के पश्चात् सम्पितयों को छः शीर्षकों के अन्तर्गत दिखाया गया है। इनका विस्तृत वर्णन क्रमशः 6 से 11 तक सारणियों में दिया जाता है। सम्पतियों की समस्त छः मदों का जोड़ लगा दिया जाता है।

(iv) सम्पतियों के जोड़ के नीचे संदिग्ध दायित्वों को दिखया जाता है। इनका विस्तृत वर्णन सारणी 12 में दिखाया जाता है।

(v) संदिग्ध दायित्वों के पश्चात् संग्रह के लिए आये बिलों (Bills for collection) की मद को दिखाया जाता है। इस मद के विस्तृत वर्णन के लिए पृथक् से कोई सारणी निर्धारित नहीं की गई है।

(vi) उपरोक्त प्रारूप में चिट्ठा देने के पश्चात् उससे सम्बनिधत 12 सारणियां दी जाती हैं।

(vii) समस्त 12 सारणियां देने के पश्चात् ''स्वरूप ख'' के अनुसार लाभ–हानि खाता तेयार किया जाता है।

(viii) लाभ–हानि खाते में आय की मदों को दो शीर्षकों के अन्तर्गत दिया जाता है और इनका विस्तृत वर्णन क्रमशः सारणी 13 और 14 में दिया जाता है। लाभ–हानि खाते में आय की दोनों मदों का जोड़ लगा दिया जाता हैं।

(ix) आय के जोड़ के पश्चात् व्यय की मदों को दो शीर्षकों के अन्तर्गत दिया जाता है जिनका विस्तृत वर्णन क्रमशः सारणी 15 और 16 में दिया जाता हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(x) इसके पश्चात् आयोजन और सम्भाव्यताओं (Provisions and Contingencies) को दिखाया जाता है। इनके विस्तृत विवरण के लिए कोई सारणी तैयार नहीं की जाती है बल्कि इनसे सम्बन्धित सभी मदों को लाभ–हानि खातें में ही दिखा दिया जाता है।

(xi) तत्पश्चात् उपरोक्त (ix) व (x) मदों का जोड़ लगा दिया जाता हैं।

(xii) आय व व्यय की मदों का अनतर लाभ या हानि को प्रकट करेगा। व्यय की मदों के जोड़ के पश्चात् लाभ या हानि (जैसी भी स्थिति हो) की मद लिख दी जावेगी। इसमें पिछले वर्षो के लाभ या हानि को जोड़ा या घटाया जावेगा। इस प्रकार नियोजन के लिए कुछ लाभ उपलब्ध हो जावेगा।

(xiii) उपरोक्त लाभों में से किये गये नियोजनों (Appropriations) को दिखाया जावेगा और फिर चिट्ठे में ले जाये गये शेष को लिखा जावेगा। नियोजनों और इस शेष का जोड़ लगा दिया जावेगा।

(xiv) चिट्ठे व लाभ–हानि खाते तथा सभी सारणियों में चालू वर्ष की मदों के साथ–साथ पिछले वर्ष के भी तत्सम्बन्धी आंकड़े दिये जावेगे।

(xv) चिट्ठे व लाभ–हानि खाते के पश्चात् अनुसूची 17 में लेखों पर टिप्पणियां तथा मुख्य लेखा नीतियां दी जाती हैं। बैंक इनके लिए पृथक्–पृथक् सारणी 17 व सारणी 18 तैयार करते हैं।

चिट्ठा तथा उससे सम्बन्धित सारणियों का प्रारूप
(Format of Balance Sheet and Concerning Schedules)
THE THIRD SCHEDULE
(See Section 29)
Form 'A'
FORM OF BALANCE SHEET
Balance Sheet ….. (here enter name of the banking company)
Balance Sheet as on 31 st March, …… (year)

CAPITAL & LIABILITIES	Schedule No.	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
		Rs.	Rs.
Capital	1		
Reserves & Surplus	2		
Deposits	3		
Borrowings	4		
Other liabilities and provisions	5		
TOTAL			
ASSETS			
Cash and balance with Reserve Bank of India	6		
Balances with banks and money at Call and short notice	7		
Investments	8		
Advances	9		
Fixed Assets	10		

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

Other Assets	11		
TOTAL			
Contingent liabilities	12		
Bills for collection			

SCHEDULE 1 : CAPITAL

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
	Rs.	Rs.
I. FOR NATIONALISED BANKS		
Capital (Fully owned by Central Government)		
II. FOR BANKS INCORPORATED OUTSIDE INDIA		
Capital		
(i) The amount brought in by banks by way of Start-up capital as prescribed by RBI should be Shown under this head.		
(ii) Amount of deposit kept with the RBI under Section 11(2) of the Banking Regulation Act, 1949.		
TOTAL		
III. FOR OTHER BANKS		
Authorised Capital		
(…… Shares of Rs …… each)		
Issued Capital		
(…… Shares of Rs …… each)		
Subscribed Capital		
(…… Shares of Rs …… each)		
Called-up Capital		
(…… Shares of Rs …… each)		
Less : Calls unpaid		
Add : forfeited shares		
TOTAL		

SCHEDULE 2 : RESERVES & SURPLUS

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

	Rs.	Rs.
I. Statutory Reserves		
Opening Balance		
Additions during the year		
II. Capital Reserves		
Opening Balance		
Additions during the year		
Deductions during the year		
III. Share Premium		
Opening Balance		
Additions during the year		
Deductions during the year		
IV. Revenue and other Reserves		
Opening Balance		
Additions during the year		
Deductions during the year		
V. Balance in Profit and Loss Account		
TOTAL (I, II, III, IV and V)		

SCHEDULE 3 : DEPOSITS

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
	Rs.	Rs.
A. I. Demand Deposits		
(i) From banks		
(ii) From others		
II. Savings Bank Deposits		
III. Term Deposits		
(i) From banks		
(ii) From others		
TOTAL (I, II, and III)		
B. Demand Deposits		
(i) Deposits of branches in India		
(ii) Deposits of branches outside India		
TOTAL		

SCHEDULE 4 : BORROWINGS

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
	Rs.	Rs.
I. Borrowings in India		
(i) Reserve Bank of India		
(ii) Other Banks		
(iii) Other Institutions and Agencies		
II. Borrowings outside India		
TOTAL (I, II, and III)		
Secured borrowings in I and II above Rs.		

SCHEDULE 5 : OTHER LIABILITIES AND PROVISIONS

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
	Rs.	Rs.
I. Bills payable **II.** Inter-office adjustments (net) **III.** Interest accrued **IV.** Others (including provisions)		
TOTAL		

SCHEDULE 6 : CASH AND BALANCES WITH RESERVE BANK OF INDIA

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
	Rs.	Rs.
I. Cash in hand **II.** (including foreign currency notes) Balance with Reserve Bank of India (i) In Current Account (ii) In Other Accounts		
TOTAL (I) & (II)		

SCHEDULE 7 : BALANCES WITH BANKS & MONEY AT CALL & SHORT NOTICE

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
	Rs.	Rs.
I. In India (i) Balances with banks (a) in current Accounts (b) in Other Deposit Accounts (ii) Money at call and short notice (a) With banks (b) With other institutions		
TOTAL (i) & (ii)		
II. Outside India (i) in Current Accounts (ii) in other Deposit Accounts (iii) Money at call and short notices		
TOTAL (i) + (ii) + (iii)		
GRAND TOTAL (I & II)		

SCHEDULE 8 : INVESTMENTS

	As on 31.3……	As on 31.3……

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

	(Current year)	(Previous year)
	Rs.	Rs.
I. Investments in India in		
(i) Government Securities		
(ii) Other approved securities		
(iii) Shares		
(iv) Debentures and Bonds		
(v) Others (to be specified)		
TOTAL		
II. Investment outside India in		
(i) Government securities (Including local authorities)		
(ii) Subsidiaries and/or joint ventures abroad		
(iii) Other investments (to be specified)		
TOTAL		
GRAND TOTAL (I & II)		

SCHEDULE 9 : ADVANCES

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
	Rs.	Rs.
A. (i) Bills purchased and discounted		
(ii) Cash credits, overdrafts And loans payable on demand		
(iii) Term loans		
TOTAL		
B. (i) Secured by tangible assets		
(ii) Covered by Bank/Government Guarantees		
(iii) Unsecured		
TOTAL		
C. I. Advances in India		
(i) Priority Sectors		
(ii) Public Sector		
(iii) Banks		
(iv) Others		
TOTAL		
II. Advances outside India		
(i) Due from banks		
(ii) Due Bills purchased and discounted		
(a) Bills purchased and discounted		
(b) Syndicated loan		
(c) Others		
TOTAL		
GRAND TOTAL (I & II)		

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

SCHEDULE 10 : FIXED ASSETS

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
I. Premises		
At cost as on 31st March of the preceding year		
Additions during the year		
Deductions during the year		
Depreciation to date		
TOTAL		
II. Other Fixed Assets (including Furniture and Fixtures)		
At cost as on 31st March of the preceding year		
Additions during the year		
Deductions during the year		
Depreciation to date		
TOTAL		
TOTAL (I & II)		

SCHEDULE 11 : OTHER ASSETS

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
I. Inter-office adjustments (net)		
II. Interest accrued		
III. Tax paid in advance/tax deducted at source		
IV. Stationery and stamps		
V. Non-banking assets acquired in satisfaction of claims		
VI. Others*		
TOTAL		

*In case there is any unadjusted balances of loss the same may be shown under this item with appropriate foot-note.

SCHEDULE 12 : CONTINGENT LIABILITIES

	As on 31.3…… (Current year)	As on 31.3…… (Previous year)
	Rs.	Rs.
I. Claims against the bank not acknowledged as debts		
II. Liability for partially paid investments		
III. Liability on account of outstanding forward exchange contracts		
IV. Guarantees given on behalf of constituents		
(a) In India (b) Outside India		
V. Acceptances, endorsements and other obligations		
VI. Other items for which the bank is contingently liable.		
TOTAL		

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

चिट्ठे की मदों का स्पश्टीकरण
(Explanation of Items of Balance Sheet)

रिजर्व बैंक ने अन्तिम खाते बनाने के सम्बन्ध में कुछ दिशानिर्देश (Guidelines) दिये हैं। इनके आधार पर तथा सारणी तृतीय की आवश्यकताओं के आधार पर चिट्ठे सम्बन्धी मदों का स्पष्टीकरण निम्नलिखित है :

1. **पूँजी (Capital)–सारणी 1** :

(i) **राश्ट्रीयकृत बैंक** : केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व वाली पूँजी को दिखाया जाना चाहिए।

(ii) **भारत से बाहर समामेलित बैंकिंग कम्पनियाँ** : रिजर्व बैंक द्वारा लायी गयी प्रारम्भिक पूंजी (Start up Capital) को इस शीर्षक के अन्तर्गत दिखाया जाना चाहिए। बैंकिंग विनियमन अभिनियम, 1949 की धारा 11(2) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक के पास निक्षेप के रूप में रखी गई राशि को भी दिखाया जाना चाहिए।

(iii) **अन्य बैंक (भारतीय)** : अधिकृत, निर्गमित, अभ्दित तथा मांगी गई पूंजी को पृथक पृथक दिखाया जाना चाहिए। मांगी गई पूंजी में सें बकाया मांग को घटाया जाना चाहिए और इसमें जप्त अंशों पर चुकाई गई राशि को जोड़ाजाना चाहिए, इस प्रकार प्रदत पूंजी (Paid- up Capital) की राशि ज्ञात की जावेगी। जहाँ आवश्यक हो , मदों को मिलाकर भी दिखाया जा सकता है , जैसे 'Issued and Subscribed Capital'

उपरोक्त मदों में वर्ष के दौरान हुए परिवर्तनों कों टिप्पणियों में स्पष्ट किया जा सकता है।

2. संचय और आधिक्य (Reserves and Surplus) - सारणी 2 :

(i) **वैधानिक संचय (**Statutory Reserves**) :** बैंकिग विनियमन अधिनियम की धारा 17 या अन्य किसी धाा के अन्तर्गत निर्मित वैधनिक संचय को पृथक् दिखाया जाना चाहिए।

(ii) **पूजीगत संचय** (Capital Reserves) : इसमें मुक्त संचय (Free Reserve) को सम्मिलित नहीं किया जावेगा। पुनर्मूल्यांकन सम्बन्धी आधिक्य को पूँजीगत संचय माना जावेगा।

(iii)**अं□ा प्रीमियम** (Share Premium) **:** अंश पूँजी के निर्गमन पर प्रीमियम को इस शीर्षक के अन्तर्गत पृथक्से दिखाया जावें।

(iv) आयगत तथा अन्य संचय (Revenue and other Reserves) : पूँजीगत संचय के अतिरिक्त अन्य संचय को आयगत संचय कहा जाता है। पृथक् रू‍प से वर्गीकृत संचय के अतिरिक्त सभी संचय इसमें सम्मिलित होते है। इसमें किाी दाचित्व या सम्पति के पूल्य–हास के लिए किया गया दायित्व सम्मिलित नहीं किया जावेगा।

(v) लाभ का शेष (Balance of Profit) **:** इसमें नियोजन के पश्चात शेष को सम्मिलित किया जाता है।

3. निक्षेप (Deposits) **–सारणी 3** :

(i) माँग निक्षेप (Demand Deposits) **:** इसमें बैंकों तथा गैर बैंकिंग क्षेत्र से माँग पर देय निक्षेपों को सम्मिलित किया जाता है। बैंक अधिविकर्ष , नकद साख खाते , नकद प्रमाण पत्र आदि इसमें आते है। चालू खाते जो गतिशील नहीं हैं उनको भी सम्मिलित किया जाता हैं।

(ii) बचत बैंक निक्षेप (Savings Bank Depodits**) :** बचत बैंक खाते जो गतिशील नहीं हैउनके सहित सभी बचत बैंक निक्षेपों को सम्मिलित किया जाता है।

(iii) सावधि निक्षेप (Term Deposits) **:** इसमें एक निश्चित अवणि के पश्चात् देय बैंकिंग और गैर–बैंकिंग क्षेत्र के निक्षेपों को सम्मिलित किया जाता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

भारतिय शाखाओं के निक्षेप तथा भारत से बाहर की शाखाओं के निक्षेपों को पृथकृ पृथकृ दिखाया जावेगा। निक्षेपों पर जो ब्याज अर्जित कर लिया गया है लेकिन नहीं हुआ है उसको अन्य दायित्व वाले शीर्षक के अन्तर्गत दिखाया जावेगा। परिपक्व हुई सावधि जमा की माँग को निक्षेप समझा जाना चाहिए।

4. उधार (Borrowings) –सारणी 4 :

(i) भारत में उधार (Borrowings in India) **:** इसमें रिजर्व बैंक , अन्य बैंकों जथा अन्य संस्थाओं से दिये गये उधार को सम्मिलित किया जावेगा।

(ii) भारत के बाहर से उधार (Borrowings outside India) **:** इसमें भरत से बाहर की भारीय शाखाओं तथा विदेशी शाखाओं के उधार को सम्मिलित किया जावेगा।

उपरोक्त में सम्मिलित सुरक्षित उधारों (Secured borrowings) को पृथक् दिखाया जावेगा।

5. अन्य दायित्व तथा आयोजन (Other Liabilities and Provisions)–सारणी 5 :

इस मद में निम्नलिखित को सम्मिलित किया जाता है–

(i) देय बिल (Bills payable)

(ii) अन्तर – कार्यालय समायोजन (शुद्ध) (Inter– office adjustments net)

(iii) अर्जित ब्याज (Interest accrued)

(iv) अन्य (आयोजन सहित) (Others– including Provisions)

6. नकद तथा भारतीय रिजर्व बैंक के पास भोश (Cash and Balsnces with the Reserve Bank of India) – सारणी 6 :

इनमें विदेशी पूद्रा सहित (विदेशी शाखाओं कोंसम्मिलित करते हुए) हाथ में रोकड. को सम्मिलित किया जावेगा।

7. बैंकों के पास भोश, माँग व अल्पकालीन नोटिस पर देय रा□ा (Balances with Banks and money at call and short notices) – सारणी 7 :

इसमें निम्नलिखित राशियों को सम्मिलित किया जाता है –

(i) भारत में बैंकों में जमा समस्त शेष,

(ii)15 या इससे कम दिनों के नाटिस पर प्राप्त करने योग्य अन्तर – बैंक निक्षेप,

(iii)विदेशी शाखाओं तथा विदेशों में भारतीय शाखाओं के पास शेष।

8. विनियोग (Investments) सारणी 8 :

(i) सरकारी प्रतिभूतियाँ : इसमें केन्द्रीय तथा राज्य सरकार की प्रतिभूतियाँ तथा ट्रेजरी बिल्स को सम्मिलित किया जाता है।

इनकों पुस्तक पूल्य पर दिखाया जाना चाहिए। लेकिन बाजार मूल्य तथा पुस्तक मूल्य क अन्तर को चिह्ने के साथ टिप्पणियों में दिखाना चाहिए।

(ii) अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियाँ : सरकारी प्रतिभूतियाँ के अतिरिक्त अन्य प्रतिभूतियाँ जो बैंकिंग विनियमन अधिनियम द्धारा अनुमोदित हैं , इस मद में सम्मिलित की जाती हैं।

(iii) अंश : कम्पनियाँ तथा निगमों के अंशों में किया गया विनियोग जिसे उपराक्त (ii) में सम्मिलित नहीं किया गया हों , यहाँ सम्मिलित किया जावेगा।

(iv) ऋण–पत्र और बॉड : कम्पनियों तथा निगमों के ऋणपत्रों तथा बॉण्डों में विनियोग जिसे उपराक्त **(ii)** में नहीं दिखाया गया हो , यहाँ दिखाया जावेगा।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(v) सहायक कम्पनियों तथा संयूक्त साहसों में विनियोग : ग्रामीण बैंकों में किये गये को भी इस मद में सम्मिलित किया जावेगा।

भारत में किये गये विनियोगों तथा भरत से बाहर किये गये विनियोगों को पृथक्–पृथक् दिखाया जावेगा।

9. अग्रिम (Advances) – सारणी 9 :

सरणी 9 में दिखाई गई 'A' व 'B' मदों के सम्बन्ध में भी भारत और भारत से बाहर सम्बन्धी निक्षेपों के विवरण दिये जायेंगे। 'A' मदों का जोड. तथा 'B' मदों का जोड. मिलना चाहिए।

10.स्थायी सम्पतियाँ (Fixed Assets) – सारणी 11 :

भवन में बैंक द्वारा रिहायशी काम में आने वाले भवनों सहित व्यवसाय में काम में आने वाले भवनों को सम्मिलित किया जावेगा चाहे उन पर पूर्ण स्वामित्व हो अथवा आंशिक स्वामित्व हो। मोटर गाडि.यों को अन्य स्थायी सम्पतियों में सम्मिलित किया जावेगा।

11.अन्य समपतियाँ (Other Assets) – सारणी 11 :

(i) अन्तर – कार्यालय समायोजन सम्बन्धी समस्त खातों को एकत्रित करके एक शुद्ध राशि ज्ञात कर लेनी चाहिए। यदि इस राशि का डेबिट शेष है तो उसे यहाँ दिखाना चाहिए।

(ii) विनियोगों तथा अग्रिमों पर जो ब्याज अर्जित हो गया है लेकिन देय नहीं हुआ है तथा जो देय हो चूका है लेकिन प्राप्त नहीं हुआ है उसे अर्जित आय की मद में सम्मिलित किया जावेगा।

(iii) अग्रिम कर तथा उद्गम पर काटे गये कर को यदि सम्बन्धित आयोजन से नहीं काटा गया है तो उसे यहाँ दिखाया जाना चाहिए।

(iv) स्टेशनरी पर अपवादजना रूप से बडी. मात्रा में किये गये क्रय को ही यहाँ सम्मिलित किया जाना चाहिए। यह स्टेशनरी ऐसी होनी चाहिए जिसे कई वर्षो में अपलिखित किया जाना हैं।इनका पूल्यांकन वास्तविक आधार पर किया जाना चाहिए और यदि लागत बढ. भी जावे तो उसका ध्यान नहीं रखा जाना चाहिए।

(v) दावों के भुगतान में प्राप्त अचल सम्पतियों तथा दृश्य सम्पतियों को यहाँ दिखाया जाता है।

(vi) इस मद में सम्मिलित की जाने वाली मदों के उदाहरण इस प्रकार है –

एक नियोक्ता के रूप में कर्मचारियों को दिये गये अग्रिम, ब्याज के अतिरिक्त अर्जित आय आदि।

12. संदिग्ध दायित्व (Contingent Liabilities) – सारणी 12 :

(i) बैंक के विरूद्ध ऐसे दावे जिन्हें ऋण के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है , इस मद में सम्मिलित किये जाते है।

(ii) इस मद में आंशिक प्रदत अंशों व ऋणपत्रों के सम्बन्ध में दायित्व को सम्मिलित किया जावेगा।

(iii) अदत अग्रिम विनिमय अनुबन्धों को इस मद में सम्मिलित किया जावेगा।

(iv) भारत और भारत से बाहर ग्राहकों के लिए दी गई गारन्टी को पृथक् पृथक् दिखाया जाना चाहिए।

(v) इसमें बैंक द्वारा ग्राहकों की तरफ से स्वीकृत बिल तथा साख पत्रों को सम्मिलित किया जावेगा।

(vi) संचयी लाभांशों की बकाया , अभिगोपन अनुबन्धों के अन्तर्गत पुनर्भुनाये गये बिल आदि इस मद में दिखाये जायेंगे।

13. संग्रह के लिए आये बिल (Bills for Collection) :

इस मद के सम्बन्ध में पृथक्से कोई सारणी नहीं दी गई हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

भारतीय बैंकिंग प्रणाली (Indian Banking Systesm)

किसी भीदेश के आर्थिक विकास में उस देश की बैंकिंग प्रणाली का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। बैंकिंग प्रणाली में किसी भी देश में कार्य करने वाली बैंकिंग संस्थाओं को सम्मिलित किया जाता है। बैंकिंग प्रणाली में केन्द्रीय बैंक से लेकर उन समस्त बैकिंग संस्थाओं को सम्मिलित किया जाता है जो किसी न किसी विकास क्षेत्र जैसे कृषि, उद्योग, व्यापार, गृह निर्माण आदि के लिए वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने का कार्य करती हैं।

भारतीय बैंकिंग प्रणाली की प्रमुख वित्तीय संस्थाओं को निम्नांकित चार्ट के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है–

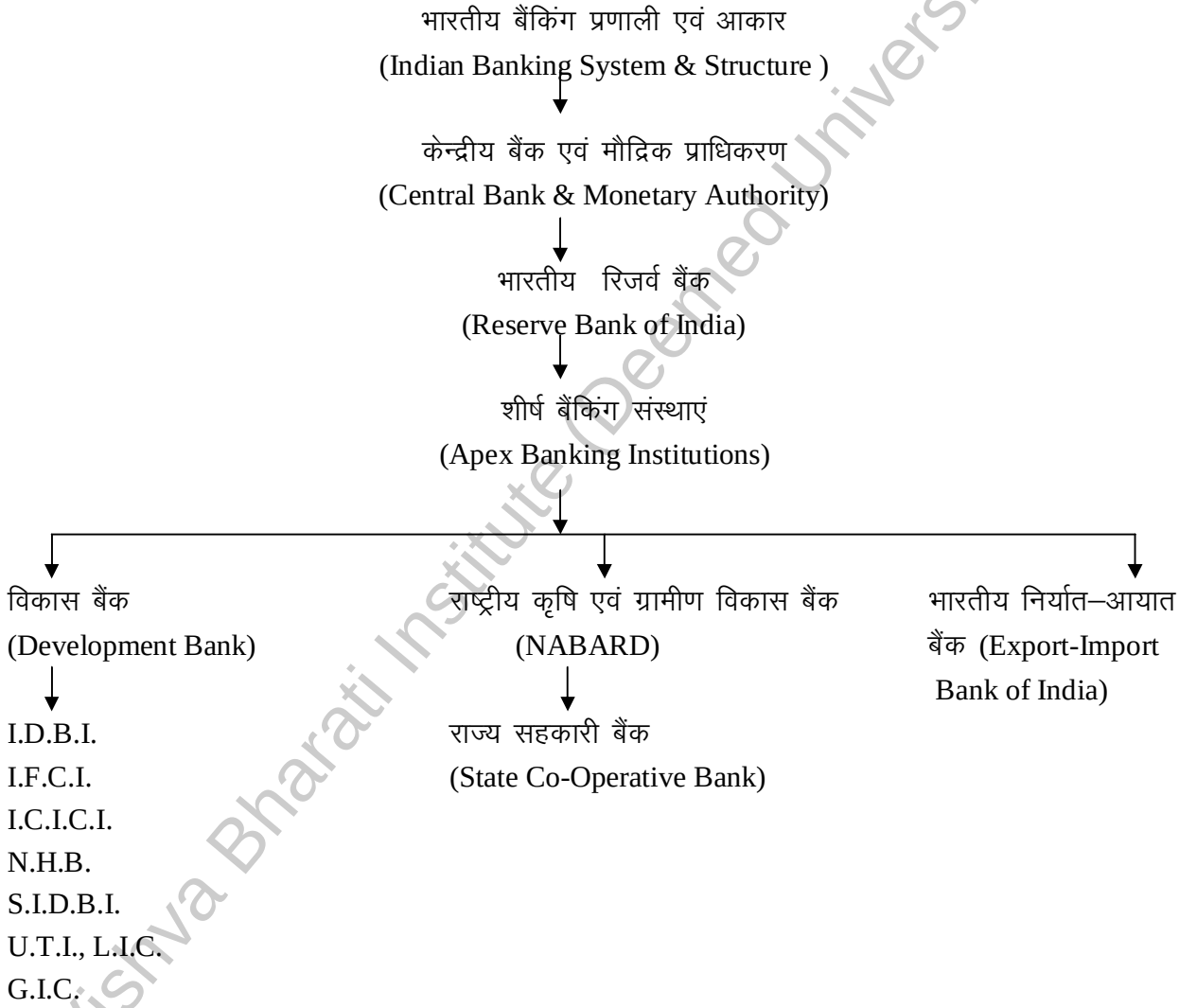

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

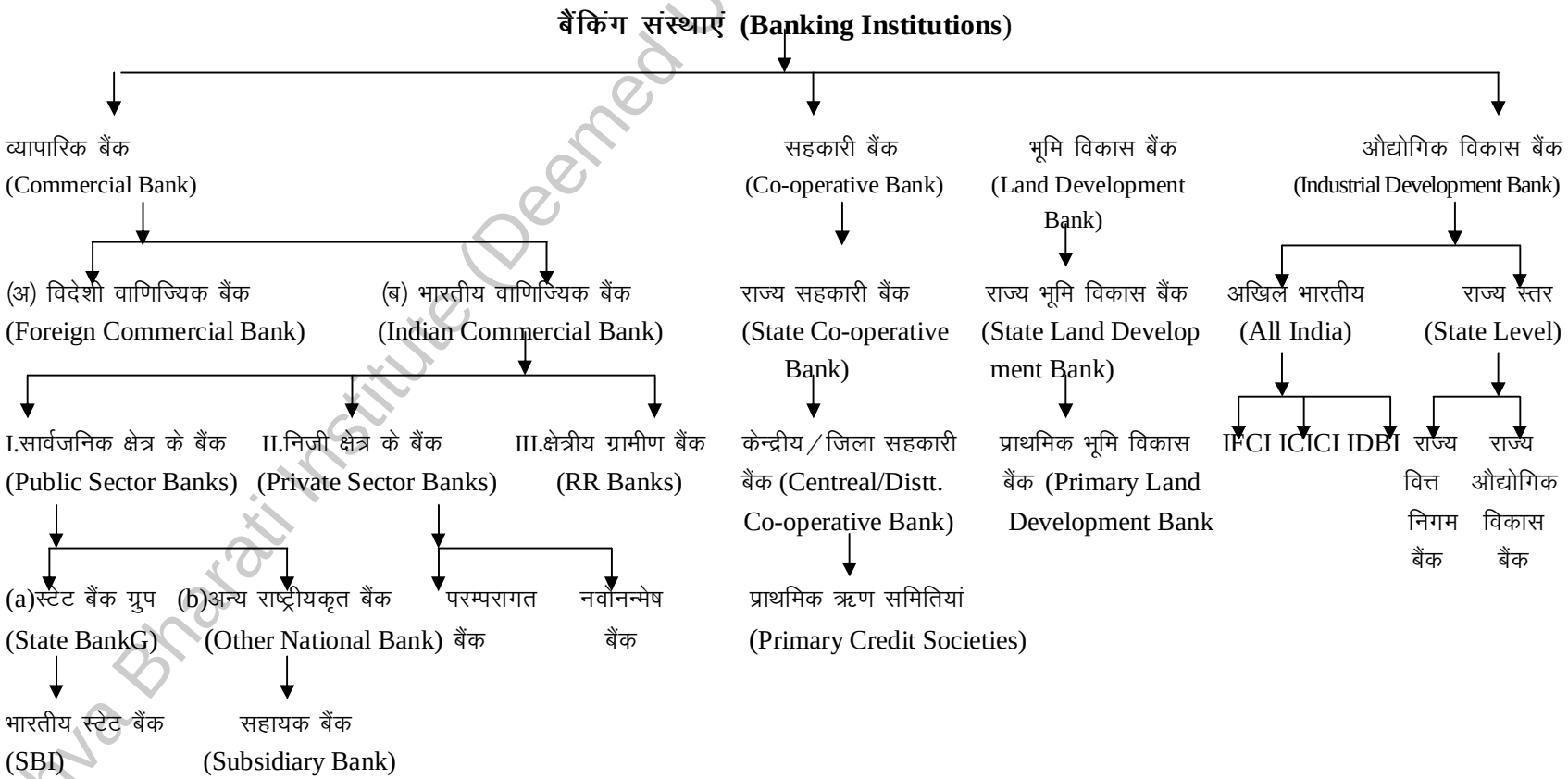

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University)

भारतीय बैंकिंग सरंचना के अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक के रूप में भारतीय रिजर्व बैंक, बैंकिंग संस्थाओं को नियमित तथा नियन्त्रित त्रकत्ररने वाली संस्था के रूप में कार्यरत हैं इसके अतिरिक्त अर्थव्यवस्था के विभिन्न अंगों की वित्तीय आवश्यकताओं कीा पूर्ति हेतु पृथक–पृथक वित्तीय संस्थाएं हैं। असंगठित क्षेत्र में देशी बैंकर तथा साहूकार भी अपना प्रभुत्व बनाए हुए हैं ग्रामीण आंचलिक क्षेत्रों के लिए ग्रामीण बैंक भी स्थापित हुए हैं। सहकारी साख संरचना भी काफी लम्बे समय से देश में कार्यरत है। व्यावसायिक एवं औद्योगिक वित्त की व्यवस्था हेतु विकास बैंकिंग संरचना भी विद्यमान है। इस प्रकार देश की बैंकिंग संरचना पर यदि दृष्टि डाली जाए तो भारत में वर्तमान में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की सुदृढ़ संरचना दिखाई देती है जो वैश्वीकृत आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम है।

इस प्रकार भारत की बैंकिंग संरचना विस्तृत रूप लिये हुए है। उच्च–स्तरीय बैंकिंग संस्थाएं केन्द्रीय संस्थाओं के रूप में अपनी भूमिका का निर्वहन करती है। भारतीय रिजर्व बैंक केन्द्रीय बैंक के रूप में बैंकिंग व्यवस्था का मुख्य नियामक है। आई.डी.बी.आई. औद्योगिक क्षेत्र की शीर्ष संस्था के रूप में कार्यरत है। नाबार्ड कृषि एवं ग्रामीण साख हेतु शीर्ष संस्था के रूप में कार्यरत हैं। आयात–निर्यात बैंक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की सर्वोच्च संस्था है। राष्ट्रीय आवास बैंक गृह–निर्माण के क्षेत्र की शीर्ष संस्था है। इस प्रकार चारों उच्च बैंकिंग संस्थाएं व्यापारिक बैंकों, अन्य संस्थाओं को पुनर्वित्तीय तथा अन्य बैंकिंग सेवाएं प्रदान कर बैंकिंग व्यवस्था को गति प्रदान करती है।

रिजर्व बैंक आफ इण्डिया

(Reserve Bank of India)

रिर्जर्व बैंक आफ इण्डिया भारतीय बैंकिंग व्यवस्था की शीर्षस्थ संस्था है। यह सभी बैंकों का बैंक तथा उनका सलाहकार तथा मार्गदर्शक बैंक हैं। इसकी स्थापना 1 अप्रैल, 1935 को एक विशेष अधिनियम से की गई तथा 1 जनवरी, 1949 को इसका राष्ट्रीयकरण कर दिया गया।

भारतीय रिजर्व बैंक देश में नोट निर्गमन की एकाधिकारी संस्था ही नहीं, यह बैंकों का बैंक तथा अन्तिम ऋणदाता एवं मार्गदर्शक है। यह देश के विदेशी विनिमय कोषों का संरक्षक है। देश की साख का नियन्त्रण करता है तथा मौद्रिक नीति का संचालन करता है। देश की सरकार के बैंकर एवं सलाहकार के रूप में कार्य करता है। आंकड़ों का संकलन करता है। समाशोधन गृह के रूप में कार्य करता है। देश के बहुमूल्य धात्विक कोषों को अपने संरक्षण में रखता हे। रिजर्व बैंक का संचालन भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 के अन्तर्गत किया जाता है।

शीर्ष बैंकिंग संस्थाएं (Appex Banking Institutions)

१. राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक–नाबार्ड (NationalBank for Agriculture for Agriculture and Rural Development-NABARD) –

ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि तथा सम्बद्ध कार्यों के लिए पुनर्वित सुविधा प्रदान करने के लिए 12 जुलाई 1982 को इस बैंक की स्थापना की गयी। इस बैंक पर यह उत्तरदायित्व डाला गया है कि देश में कृषि एवं ग्रामीण विकास की समस्याओं को दूर करने हेतु सहकारीसाख संरचना को एकीकृत करके की गई।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

सहकारी बैंकों को आवश्यक सहायकता, सलाह एवं परामर्श देने हेतु एक विशेष संस्था के रूप में सन् 1963 में कृषि पुनर्वित्त निगम (ARDC) की स्थापना की गई थी जो 1975 में कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम के रूप में कार्यरत रहीं। यह बैंक राज्य सरकारों को भी राज्य सहकारी बैंकों के अंश खरीदने के लिए 20 वर्ष तक की अवधि के लिए ऋण दे सकता है। यह बिलों की पुनर्कटौती करता है तथा विदेशी भुगतानों की गारण्टी देता है।

नाबार्ड की पूंजी स्थापना के समय 100 करोड़ रूपये निर्धारित की गई जिसमें 50–50 प्रतिशत अंश भारत सरकार तथा रिजर्व बैंक द्वारा क्रय किये गये। वर्तमान में नाबार्ड की पूंजी 100 करोड़ रूपये से बढ़ाकर 2000 करोड़ रूपये कर दी गयी है। अंश पूंजी के अतिरिक्त कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम की सॅपूर्ण सम्पत्ति नाबार्ड को हस्तान्तरित कर दी गयी। नाबार्ड अपने कोष वृद्धि हेतु ऋण–पत्रों का विक्रय, बैंकों की दीर्घकालीन जमाएं प्राप्त करने का अधिकार रखता है। साथ ही केन्द्र एवं राज्य सरकारों से पूंजी की पूर्ति हेतु ऋण भी प्राप्त कर सकता है।

इस बैंक की स्थापना से देश के पूंजीगत एवं भारती उद्योगों के निर्यातों को बढ़ाने में काफी मदद मिली है।

नाबार्ड की प्रबन्ध व्यवस्था 11 सदस्यों वाले प्रबन्ध मण्डल के द्वारा की जाती है। प्रबन्ध मण्डल में भारत सरकार द्वारा विभिन्न विशेषज्ञों, अधिकारियों इत्यादि को मनोनीत किया जाता है। वर्तमान मेंएक अध्यक्ष, दो ग्रामीण आर्थिक विशेषज्ञ, तीन भारतीय रिजर्व बैंक के निदेशक, तीन केन्द्र सरकार के अधिकारी तथा विभिनन राज्यों के दो प्रतिनिधि अधिकारी को मिलाकर प्रबन्ध मण्डल बनाया जाता है।

२. भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (Small Industry Development Bank-SIDBI) -

देश के लघु उद्योगों को पर्याप्त वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के उद्देश्य से अप्रैल, 1990 भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक की स्थापना की गयी। इस बैंक ने निर्यातोन्मुखी लघु उद्योग इकाईयों को प्रोत्साहन देने के लिए एक नई योजना प्रारम्भ की जिसके अन्तर्गत उन्हें आसान शर्तों पर ऋण देने के साथ–साथ 25 हजार रूपये तक अनुदान के व्यवस्था की।

लघु उद्योगों के विकास वित्त की दृष्टि से इस बैंक की महत्वपूर्ण भूमिका है। ग्रामीण क्षेत्रों में शोध कार्यों को प्रोत्साहन देता है तथा ग्रामीण क्षेत्र की विभिन्न विकास संस्थाओं के कार्य में समन्वय स्थापित करता है। बैंक को बैंकिंग नियम अधिनियम 1949 में संशोधन कर सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के निरीक्षण (Inspection) का कार्य भी सौपा गया है।

वर्तमान में यह बैंक कृषि तथा ग्रामीण विकास वित्त व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

३. भारतीय निर्यात–आयात बैंक (Export-Import Bank of India)-

देश के निर्यातों को प्रोत्साहन के लक्ष्य से प्रेरित होकर भारत सरकार द्वारा मार्च, 1982 में एक विशिष्ट अधिनियम के तहत भारतीय निर्यात–आयात बैंक की स्थापना की गयी ।

यह बैंक देश के आयात तथा निर्यात के लिए वित्तीय सुविधाएं उपलब्ध करता है। यह बैंक देश के विदेशी व्यापार संवर्द्धन हेतु तकनीकी सलाह देने के साथ शोध एवं सर्वेक्षण कार्यों को भी पोत्साहन देता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

४. राष्ट्रीय आवास बैंक (National Housing Bank)-

भारत में आवास और बेरोजगारी की समस्या से निराकरण के लिए सरकार द्वारा गृह निर्माण कार्यों की वित्त व्यवस्था हेतु 1988 में राष्ट्रीय आवास बैंक की स्थापना एक महत्वपूर्ण कदम है। यह बैंक न केवल गृह निर्माण कार्यों के लिए अधिकाधिक वित्त व्यवस्था करेंगा वरन समाज के पिछड़े एवं कमजोर वर्ग के लोगों के लिए आवास वित्त व्यवस्था में अग्रणी रहेगा और गृह निर्माण कार्यों में संलग्न संस्थाओं के कार्यों में समन्वय भी स्थापित करेगा।

५. भारतीय औद्योगिक पुर्निर्माण बैंक (Industrial Reconstruction Bank of India-IRBI)-

बीमार एवं बन्द औद्योगिक इकाइयों के क्रमशः पुनर्निर्माण तथा पुनर्स्थापना के लिये वित्त प्रदान करने के लिये 1 अप्रैल, 1971 को भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण निगम की स्थापना की गई थी किन्तु 1984 में एक विशेष अधिनियम पारित कर इस निगम को नव गठित भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक (IRBI) में विलीन कर दिया। अब यही बैंक देश की बीमार एवं बन्द औद्योगिक इकाईयों के पुनर्निर्माण एवं पुनर्स्थापन के लिये वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था करता है। 1993–94 तक बैंक ने 1618 करोड़ रू. वित्तीय सहायता वितरित की है।

व्यापारिक बैंकिंग संस्थाएं (Commercial Banking Institutions)

व्यापारिक बैंकों से अभिप्राय उन बैंकों से है जो संयुक्त स्कन्ध बैंक के रूप में सामान्य बैंकिंग का कार्य करते हैं। व्यापारियों, उद्योगपतियों, व्यवसायियों अथवा कृषि कार्यों के लिए अल्पकालीन ऋण– प्रायः 3 महीने तक प्रदान करते हैं सामान्य बैंकिंग कार्यों के अन्तर्गत ये बैंक जनता से जमा पर धन प्राप्त करते हैं, ऋण देते हैं, ग्राहकों के चैकों का संग्रहण एवं भुगतान करते हैं, उनके धन को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने, विदेशी मुद्रा की व्यवस्था करने, साख–पत्र जारी करने तथा ग्राहकों को लॉकर्स उपलब्ध कराने तथा ग्राहकों के एजेन्ट के रूप में कार्य करते हैं।

व्यापारिक बैंकिंग संस्थाएं देश की सर्वाधिक प्राचीन बैंकिंग संस्थाएं हैं। देश में बैंकिंग का विकास ही व्यापारिक बैंक के रूप में हुआ। व्यापार उद्योग आदि क्षेत्रों को वित्त प्रदान करने वाले व्यापारिक बैंक धीरे–धीरे समाज के लिए एक उपयोगी वित्तीय संस्था के रूप में विकसित हो गये तथा जनसाधारण को बैंकिंग सेवाएं प्रदान करने वाले सभी बैंक व्यापारिक बैंक कहलाने लगे। देश भर में अपनी शाखाओं का विस्तार कर यह बेंक समाज के हर वर्ग को बैंकिंग सेवाएं प्रदान कर रहे हैं। इन बैंकों को उपयोगिता को देखते हुए सरकार द्वारा इनका राष्ट्रीयकरण किया गया तथा भारतीय स्टेट बैंक सहित 28 बड़े व्यापारिक बैंकों को सरकार के अधिकार में लिया गया। फलस्वरूप सावर्जनिक क्षेत्र में सुदृढ़ बैंकिंग प्रणाली का विकास हुआ। देश में भारतीय बैंकों के अतिरिक्त विदेशी बैंकों ने भी व्यापारिक बैंकिंक कार्य प्रारम्भ किया। कानूनन इनकी स्थिति भारतीय व्यापारिक बैंकों की तरह ही मानी जाती है।

हमारे देश में वर्तमान में लगभग 283 व्यापारिक बैंक हैं जिनमें 280 अनुसूचित बैंक (Scheduled Banks) तथा 3 गैर–अनुसूचित बैंक (Non-Scheduled Banks) हैं

1. **अनुसचित बैंक (Scheduled Banks) –** अनुसूचित बैंकों से अभिप्राय उन बैंकों से है जिनका नाम रिजर्व बैंक की द्वितीय अनुसूची में सम्मिलित किया जा चुका है। भारत में अनुसूचित बैंकों की संख्या 30

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

जून, 1996 को 280 थी और उनकी शाखाओं की संख्या 62849 थी। इस अनुसूची में केवल उन बैंकों का नाम सम्मिलित किया जाता है जो निम्नलिखित शर्तों की पूर्ति करते हैं–

(अ) बैंक की प्रदत्त पूंजी एवं कोष 5 लाख रूपये से कम नहीं है।

(ब) बैंक का कार्य उसके जमाकर्ताओं के हितों के विरुद्ध नहीं हो तथा

(स) यदि यह विदेशी बैंक है तो उस बैंक के देश में भारतीय बैंकों के विरुद्ध कोई अनुसूचित नियम या प्रतिबन्ध लागू नहीं हो।

ऐसे अनुसूचित बैंकों को रिजर्व बैंक से प्रायः निम्नलिखित सुविधाएं मिल जाती हैं–

(i) ऐसे बैंक रिजर्व बैंक से बैंक दर पर ऋण प्राप्त करने के अधिकारी हो जाते हैं।

(ii) ऐसा बैंक स्वतः समाशोधन गृह का सदस्य हो जाता है।

(iii) ऐसे बैंकों को रिजर्व बैंक प्रथम श्रेणी बिलों की पुनर्कटौती सुविधा प्रदान करता है।

2. **गैर–अनुसचित बैंक (Non-Scheduled Banks)** – जिन बैंकों का नाम रिजर्व बैंक की द्वितीय अनुसूची में सम्मिलित नहीं हैं उन्हें गैर–अनुसूचित बैंक कहा जाता है। भारत में ऐसे बैंकों की संख्या 1969 में 16 थी वह घटकर 1991 में केवल 3 रह गई। वर्तमान संख्या 3 है।

इन बैंकों को रिजर्व बैंक की वे सुविधाएं नहीं मिल पाती जो अनुसूचित बैंकों को प्राप्त हैं। 30 जून, 1996 को गैर–अनुसूचित बैंकों की संख्या 3 तथा उनकी शाखाएं 32 थीं।

भारत में व्यापारिक बैंकों का वर्गीकरण (Classification of Commercial Banks in India)

भारत में व्यापारिक बैंकों का वर्गीकरण प्रायः तीन भागेां में किया जा सकता है–

(A) सार्वजनिक क्षेत्र बैंक

(B) निजी क्षेत्र बैंक

(C) विदेशी व्यापारिक बैंक

(A) सार्वजनिक क्षेत्र बैंक (Public Sector Banks) – भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के व्यापारिक बैंकों में हम 28 बैंकों का समावेश करते हैं जिनमें एक भारतीय स्टेट बैंक (SBI) तथा 7 उसके सहयोगी बैंक तथा 20 राष्ट्रीयकृत व्यापारिक बैंक शामिल हैं। इन बैंकों के पास देश की कुल जमाओं का लगभग 92% भाग है।

स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया तथा उसके सहयोगी बैंक– गोरवाला ग्रामीण सख सर्वेक्षण समिति की सिफारिश पर जुलाई 1955 में इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया का राष्ट्रीयकरण कर स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना की गई तब से इस बैंक ने तीव्र गति से प्रगति की है और ग्रामीण साख में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। साथ ही सात अन्य रियासती बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर इसके सहयोगी बैंक का दर्जा दिया गया तथा स्टेट बैंक समूह के रूपमे देश का पहला व्यापारिक बैंक सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित हुआ। स्टेट बैंक समूह के अनतर्गत भारतीय स्टेट बैंक तथा इसके सात सहयोगी बैंक आते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

भारतीय स्टेट बैंक की स्थापना का प्रमुख कारण यह था कि इम्पीरियल बैंक आफ इण्डिया विशाल संसाधनों वाला प्रमुख व्यापारिक बैंक था जो सरकारी नियन्त्रण में आने पर सरकार के लिए नियोजन का उद्देश्य पूरा करने में सहायक हो सके। अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति ने भी अपने प्रतिवेदन में ग्रामीण साख व्यवस्था हेतु इम्पीरियल बैंक के राष्ट्रीयकरण की अनुशंसा की थी। इस प्रकार ग्रामीण बैंकिंग जांच समिति ने इम्पीरियल बैंक पर अधिकाधिक सरकारी नियन्त्रण स्थापित करने की सिफारिश की थी। फलस्वरूप 1 जुलाई, 1955 को इम्पीरियल बैंक का राष्ट्रीयकरण कर भारतीय स्टेट बैंक नाम दिया गया।

भारतीय स्टेट बैंक को भी अधिक सुदृढ़ करने तथा उसे सरकारी क्षेत्र का एक शक्तिशाली व्यापारिक बैंकिंग संगठन का रूप प्रदान करने हेतु देश के सात बड़े रियासती बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर भारतीय स्टेट बैंक सहायक बैंक अधिनियम 1958 के तहत उन्हें सहायक बैंक बनाया। 1960 के बाद भारतीय राज्यों में स्थित निम्नांकित 7 बैंकों को स्टेट बैंक के सहयोगी बैंकों के रूप में स्टेट बैंक ग्रुप में शामिल किया गया–

1. स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर
2. स्टेट बैंक आफ हैदराबाद
3. स्टेट बैंक आफ मैसूर
4. स्टेट बैंक आफ इन्दौर
5. स्टेट बैंक आफ पटियाला
6. स्टेट बैंक आफ सौराष्ट्र
7. स्टेट बैंक आफ ट्रावनकोर

२० राष्ट्रीयकृत बैंक (20 Nationalised Banks) – भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में 20 राष्ट्रीयकृत बैंक भी शामिल हैं इन निजी व्यापारिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण दो चरण में पूरा हुआ। बैक राष्ट्रीयकरण के प्रथम चरण में 19 जुलाई, 1969 कोएक अध्यादेश द्वारा प्रथम 14 निजी व्यापारिक बैंकों को जिनकी प्रत्येक की कुल जमाएं 50 करोड़ रूपये से अधिक थीं उन्हें सरकारी स्वामित्व में ले लिया गया।

बैंक राष्ट्रीयकरण के दूसरे चरण में एक दूसरे अध्यादेश द्वारा 6 और निजी क्षेत्र व्यापारिक बैंकों को जिनकी प्रत्येक की कुल जमाएं 200 करोड़ रू. से अधिक थी उनका राष्ट्रीयकरण कर लिया गया जो क्रम संख्या 15 से 20 में शामिल हैं–

प्रथम चरण –

1. पंजाब नेशनल बैंक
2. सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया
3. यूको बैंक
4. बैंक आफ बड़ौदा
5. बैंक आफ इण्डिया

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

6. कैनारा बैंक
7. सिण्डीकेट बैंक
8. देना बैंक
9. यूनाइटेड बैंक आफ इण्डिया
10. यूनियन बैंक आफ इण्डिया
11. इण्डियन बैंक
12. इलाहाबाद बैंक
13. बैंक आफ महाराष्ट्र
14. इण्डियन ओवरसीज बैंक

द्वितीय चरण–

15. विजया बैंक
16. आन्ध्र बैंक
17. पंजाब एण्ड सिंध बैंक
18. न्यू बैंक ऑफ इण्डिया
19. कारपोरेशन बैंक
20. ओरियन्टल बैंक आफ कामर्स।

(B) निजी क्षेत्र व्यापारिक बैंक (Private sector Commercial Banks)- देश में निजी क्षेत्रीय व्यापारिक बैंकों से आशय उन बैंकों से लगाया जाता हे जो संयुक्त पूंजी कम्पनी के रूप में भारतीय कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित हुए तथ बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949 द्वारा संचालित होते हैं। भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा लाइसेन्स जारी करने पर ही निजी क्षेत्र में व्यापारिक बैंक स्थापित किये जा सकते हैं रिजर्व बैंक की स्थापना से पूर्व जितने भी बैंक देश में संचालित थे, उन सभी बैंकों को रिजर्व बैंक अधिनियम के अन्तर्गत लेकर भारतीय रिजर्व बैंक के नियन्त्रण में ले लिया गया तथा सभी बैंकों के व्यक्तिगत विधानों को समाप्त कर उन पर बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949 लागू कर दिया। रिजर्व बैंक जिन बैंकों का व्यवसाय प्रारम्भ करने की अनुमति देता है वह उन्हें अपनी प्रथम अनुसूची में सम्मिलित करता है। उनमें से उन बैंकों को जिनकी चुकता पूंजी (Paid-up Capital) 5 लाख रूपये से अधिक है तथा अपनी मांग देयताओं का रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित प्रतिशत रिजर्व बैंक के पास नकद कोष के रूप में जमा रखते हों तथा आवश्यक विवरण एवं प्रपत्र रिजर्व बैंक को समय–समय पर प्रेषित करते हों तथा जिनका व्यवहार जमाकर्ताओं के हितों के विरूद्ध नहीं हो– इन सभी बैंकों को रिजर्व बैंक की द्वितीय अनुसूची में सम्मिलित किया जाता है

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

तथा यह अनुसूचित बैंक (Schedule Bank) कहलाते हैं। देश में वर्तमान में सभी बैंक अनुसूचित बैंकों की श्रेणी में आते हैं।

निजी क्षेत्रीय बैकों ककी संरचना में इन बैंकों के दो रूप दिखाई देते हैं– प्रथम – स्वाधीनता से पहले स्थापित व्यावसायिक बैंक तथा स्वाधीनता के पश्चात स्थापित वे व्यापारिक बैंक जो परम्परागत बैंकिंग पद्धति से बैंकिंग व्यवसाय कर रहे हैं। यह बैंक साधारण बैंकिंग सम्बन्धी समस्त कार्य सम्पन्न करते हैं। द्वितीय– वे बैंक जो आर्थिक उदारीकरण के फलस्वरूप सन् 1990 के पश्चात् आई तकनीकी क्रान्ति के कारण हाई टेक बैंकिंग के साथ नवोन्मेषी बैंकिंग कार्य सम्पन्न करते हैं। प्रथम वर्ग के बैंक परम्परागत व्यापारिक बैंक कहलाते हैं तथा द्वितीय वर्ग के बैंक नवोन्मेष बैंक कहलाते हैं।

(C) विदेशी व्यापारिक बैंक– इसके अन्तर्गत विदेशी बैंकों की शाखाओं का समावेश है जो भारत में कार्य कर रहे हैं । भारत में 30 जून, 1996 को विदेशी बैंकों की संख्या 21 थी और उनकी लगभग 136 शाखायें थीं। ये भारत के निर्यात व्यापार का 70% तथा आयातों का 90% वित्त प्रबन्ध करते हैं।

२. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (Regional Rural Banks) – देश के राष्ट्रीयकृत बैकों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में वित्त व्यवस्था तथा बचतों को एकत्रित कर पूंजी निर्माण की ओर अग्रसर करने के लिए ये बैंक स्थापित किये गये हैं भारत में 30 जून, 1996 को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या 196 थी और उनकी शाखाओं की संख्या 14530 थी।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के उद्देश्य–

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के निम्नांकित उद्देश्य हैं–

1. कृषि, फुटकर व्यापारी, छोटे किसानों, दस्तकारों तथा लघु उद्यमियों को ऋण एवं अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराना
2. सुदूर ग्रामीण आंचलिक क्षेत्रों कमें बैंकिंग सेवाओं का विस्तार करना।
3. ग्रामीण मनोवृत्ति वाले कार्यकर्ताओं के माध्यम से ग्रामीण विकास की समस्याओं का निराकरण करना।
4. ग्रामीण क्षेत्रों में लघु बचतों को गतिमान कर वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करना।
5. ग्रामीण क्षेत्रों में साख–सुविधाओं का विस्तार कर साहूकारों का प्रभुत्व समाप्त करना।

इस प्रकार स्पष्ट है कि लघु कृषकों, भूमिहीन कृषि मजदूरों, दुर्गम एवं दूरस्थ स्थानों पर रहने वाले ग्रामीणों को बैंकिंग सुविधाएं पहुंचाने का ही क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रमुख उद्देश्य है।

बैंक की पूँजी एवं प्रबन्ध (Capital and Management of Banks):

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की अधिकृत पूंजी एक करोड़ रूपये निर्धारित की गई जिसमें से चुकता पूंजी 25 लाख है, जिसमें 50% भारत सरकार द्वारा, 15% सम्बन्धित राज्य सरकार तथा शेष 35% प्रायोजित व्यापारिक बैंक द्वारा विनियोजित की जायेगी। सभी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक किसी व्यापारिक बैंक के द्वारा प्रायोजित होंगे। इन बैंकों पर प्रायोजित बैंक का पूर्ण नियन्त्रण रहता है। बैंक की प्रबन्ध व्यवस्था निदेशक मण्डल के माध्यम से की

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

जाती है जिसमें 2 सदस्य होते हैं। यह सभी सदस्य केन्द्र सरकार, राज्य सरकार तथा प्रायोजक बैंक द्वारा मनोनीत किये जाते है। संचालक मण्डल बैंकिंग सिद्धान्तों तााि समय–समय पर जारी किये गये आदेशों को मानने के लिए बाध्य होते हैं। यह सभी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक भारतीय रिजर्व बैंक की द्वितीय अनुसूची में सम्मिलित होकर अनुसूचित बैंक कहलाते हैं।

संगठनात्मक संरचना (Organisational Structure)

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की संरचना अपने आप में विशिष्टता लिये हुए है। यह पूर्णरूपेण अनुसूचित बैंक होते हुए भी किसी व्यपारिक बैंक के माध्यम से प्रायोजित होते हैं। इनका कार्य क्षेत्र भी सीमित होता है। यह रिजर्व बैंक के अतिरिक्त सरकार द्वारा भी बंधे हुए होते हैं। सामान्यतः एक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक जिलानुसार स्थापित होता है किन्तु निकटवर्ती जिले में शाखा स्थापित करने की अनुमति दी जाती है। अपवाद–स्वरूप मणिपुर राज्य में स्थापित क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक सम्पूर्ण राज्य के लिए एक ही बैंक है यहाँ जिलानुसार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थापित नहीं किये गये हैं। प्रायोजक बैंक की अतिरिक्त शाखाएं नाबार्ड के माध्यम से रिजर्व बैंक द्वारा अनुमति प्रदान करने पर खोली जाती है। इन बैंकों को नाबार्ड द्वारा पुनर्वित्तीय सुविधा भी प्रदान की जाती है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की पुनर्संरचना (Re-Structuring of Regional Rural Banks)-

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कमजोरियों को दूर करने तथा उन्हें और भी अधिक प्रभावशाली बनाने हेतु नाबार्ड के महाप्रबन्धक की अध्यक्षता में गठित समति ने उन 50 बैंकों का चयन कर उन्हें सुदृढ़ करने का सुझाव दिया। इसके अन्तर्गत राजस्थान राज्य के तीन क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, बिहार के पांच क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, आंध्रप्रदेश के चार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों सहित अन्य राज्यों के क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को चयनित किया गया। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को व्यापारिक बैंकों की तरह बैंकिंग व्यवहार करने की स्वतन्त्रता प्रदान की गई तथा हानि में चलनेवाली शाखा को लाभकारी क्षेत्र में स्थानान्तरित करने की अनुमति दी गई। इस प्रकार नाबार्ड द्वारा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की नवीन संरचना तैयार की गई तथा प्रत्येक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक को अनिवार्यतः लाभ प्राप्ति हेतु प्रेरित किया गया। साथ ही न बैंकों का कार्य प्रणाली में सुधार करने तथा नवीन तजकनीक का उपयोग करने हेतु प्रोत्साहित किया गया।

इस प्रकार इन सुझावों के क्रियान्वयन के फलस्वरूप क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कार्यक्षमता एवं लाभदायकता में सुधार हुआ है तथा वर्तमान में 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में से 147 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक लाभदायक स्थिति में है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में सरचनात्मक सुधार (Structural Reforms in Regional Rural Banks)-

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थिति में सुधार लाने हेतु संरचनात्मक एवं संगठनात्मक सुधार किये गये जिसके फलस्वरूप इन बैंकों को पुनर्जीवन प्राप्त हुआ तथा ये बैंक भी उदाराकृत बैंकिंग संरचना में अपना स्थान बनाए रखने में समर्थ हो सके हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में अभी हाल में जो संगठनात्मक एवं संरचनात्मक परिवर्तन किये गये हैं, वे इस प्रकार है–

1. व्यापारिक बैंक के अनुरूप समस्त बैंकिंग कार्य करने की अनुमति।

2. प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को सहायता पहुंचाने का लक्ष्य प्रदान किया गया।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

3. शाखा स्थानान्तरण तथा नवीन शाखा स्थापना में उदारतापूर्वक अनुमति प्रदान की गयी।

4. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कार्य व्यवस्था को सुदृढ़ करने हेतु प्रायोजक बैंकों की भूमिका को ओर अधिक प्रभावी बनाया गया।

5. प्रायोजक बैंकों को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के सम्बन्ध में सलाह, परामर्श, पर्यवेक्षण लाभदायकता में वृद्धि इत्यादि समस्त उत्तरदायित्व प्रदान किये गये।

6. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको को पूंजी बाजार में विचरण की अनुमति।

7. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को हानि स्थिति से उबारने हेतु प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों एवं सेवा क्षेत्रों के कार्यों से अस्थायी रूप से छूट दी गयी।

8. हानि में चल रही क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की शाखा को अन्य लाभप्रद शाखा में एकीकृत करने अथवा अन्य स्थान पर स्थानान्तरित करने की छूट दी गयी।

इस प्राकर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की उपयोगिता तथा देश में ग्रामीण साख की आवश्यकता को देखते हुए यह जरूरी हो जाता है कि कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थिति में सुधार लाया जाए। ये बैंक अपनी सुदृढ़ संरचनात्मक स्थिति के आधार पर ग्रामीण साख व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करें।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्य (Function of Regional Rural Banks)

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का मुख्य कार्य अपने नियत क्षेत्र में बचत को प्रोत्साहन देना है। साथ ही अपने क्षेत्र की साख आवश्यकताओं की पूर्ति करना भी है। यह बैंक ग्रामीण आंचलिक क्षेत्रों में शाखा विस्तार कर बैंकिंग सेवाएं प्रदान करते हैं। इनके मुख्य कार्य निम्नांकित बिन्दुओं में व्यक्त किये जा सकते हैं–

1. ग्रामीण लोंगोां को उत्पादक कार्यों हेतु ऋण प्रदाना करना।

2. सहकारी साख समितियों, सहकारी बैंकों आदि को वित्त आपूर्ति करना।

3. सुदूर आंचलिक क्षेत्र में जहां कोई बैंक शाखा नहीं हे वहां बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार करना।

4. ग्रामीण क्षेत्रों से लघु बचतों को एकत्र कर उसे उत्पादक कार्यों में लगाना

5. ग्रामीण एवं कमजोर वर्ग के लोगों को कम समय में तुरन्त ऋण सुविधा उपलब्ध कराना।

इस प्रकार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्य सामान्य बैंकिंग सम्बन्धी कार्य हैं। इनकी कार्य प्रणाली अत्यधिक सरल है। इनकी कार्यकारी भाषा स्थानीय बोली होती है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रयोग एक नवीन प्रयोग है जो ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योग व्यवसाय को गति प्रदान करता है। इन बैंकों की सफलता इसी बात पर निर्भर करती है कि ग्रामीण दृष्टिकोण वाली ग्रामीण साख उपलब्ध कराई जाए।

३. सहकारी बैंक (Co-operative Banks) -

भारत में विभिन्न राज्यों में सहकारी बैंकों का त्रि–स्तरीय ढांचा है जिसमें शीर्ष पर राज्य सहकारी बैंक होता है। जिला स्तर पर केन्द्रीय जिला सहकारी बैंक होता है तथा स्थानीय स्तर पर प्राथमिक ऋण सहाकरी समितियां होती हैं। भारत में ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में इस प्रकार के कई बैंक कार्यरत हैं 1956 से इन बैंकों

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पर भी भारतीय बैंकिंग अधिनियम लागू हैं ये बैंक प्रायः अल्पकालीन एवं मध्यमकालीन ऋण प्रदान करते हैं। इनके ऋणों की पुनर्वित्त व्यवस्था राज्य सहकारी बैंकों के माध्यम से नाबार्ड द्वारा की जाती हैं।

४. भूमि विकास बैंक (Land Development Banks)-

ये सहकारी, अर्द्ध सहकारी या गैर–सहकारी संस्थाएं हैं, जो भूमि को बंधक रखकर भूमि पर स्थायी सुधार करने के लिए दीर्धकालीन ऋण प्रदान करती है। भारत में भूमि विकास बैंकों की द्वितीय स्तरीय संरचना पाई जाती है। राज्य स्तर पर राज्य भूमि विकास बैंक तथा ग्रामीण स्तर पर प्राथमिक भूमि विकास बैंक की अधिकांश पूंजी अंशों तथा ऋण–पत्रों से प्राप्त होती है। भूमि विकास बैंक किसानों की विकास सम्बन्धी आवश्यकताओं को जैसे पम्प सेट, ट्रेक्टर आदि उपकरणों और मशीनरी की व्यवस्था करने के लिए तथा भूमि समतल करना, बाढ़ लगाना, नए कुएं खोदना, पुराने कुओं की मरम्मत करना आदि भूमि सुधार गतिविधियों के लिए किसान की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। इसके लिए किसानों की अचल सम्पत्ति को बन्धक रखकर ऋण दिये जाते हैं।

७. औद्योगिक विकास बैंक (Industrial Development Banks)-

भारत में औद्योगिक विकास की वित्त व्यवस्था हेतु शीर्ष संस्थाओं के रूप में भारतीय औद्योगिक विकास बैंक तथा भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक हैं किन्तु इनके अलावा राष्ट्रीय स्तर पर दो और वित्तीय संस्थाएं हैं–

१. भारतीय औद्योगिक वित्त निगम (Industrial Finance Corporation) – जो सार्वजनिक पूंजी कम्पनियों को दीर्घकालीन औद्योगिक वित्त व्यवस्था करता है।

२. भारतीय औद्योगिक साख एवं विनियोग निगम (Industrial Credit and Investment Corporation of India) अर्थात् ICICI- यह निगम निजी क्षेत्र में औद्योगिक सम्पनियों एवं उपक्रमों को वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

राज्य स्तर पर भी अलग–अलग राज्यों में औद्योगिक वित्त प्रदान करने के लिए औद्योगिक वित्त निगम स्थापित किये गये हैं उदाहरण के लिए राजस्थान में राजस्थान वित्त निगम (R.F.C.) तथा राजस्थान औद्योगिक विनियोग निगम (RIICO) के नाम उल्लेखनीय हैं।

इस प्रकार भारत में बैंकिंग व्यवस्था का बड़ा व्यापक आधार तैयार किया जा चुका है। इनके अलावा भी कई वित्तीय संस्थाएं कार्यरत हैं।

विकास बैंक (Development Banks)

विकास बैंकों से तात्पर्य ऐसी वित्तीय संस्थाओं से है जो औद्योगिक एवं वित्तीय संस्थाओं को वित्त प्रदान करती है। उनकी सभी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करती है तथा तकनीकी एवं व्यावहारिक सलाह एवं परामर्श का कार्य किया जाता है। इस प्राकर विकास बैंकों के अन्तर्गत उन संस्थाओं को लिया जाता है जो वृहत् स्तर पर औद्योगिक विकास हेतु वित्त प्रदान करने के साथ अन्य औद्योगिक सेवाएं भी प्रदान करती है। भारतीय बैंकिंग संरचना में व्यापारिक बैंकिंग के अतिरिक्त विकास बैंकों का विशेष महत्व है। ये बैंक ऐसे बैंक हैं जो देश की अर्थव्यवस्था के उन क्षेत्रों में वित्त प्रदान करते हैं जहां व्यापारिक बैंक वित्त प्रदान नहीं करते हैं। सामान्य बैंकिंग कार्य करने वाले व्यापारिक बैंकों के लिए व्यापार एवं उद्योग को

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

दीर्घकालीन वित्त प्रदान करना सम्भव नहीं होता है। अतः व्यापार एवं उद्योगों की दीर्घकालीन वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विशिष्ट संस्थाओं की स्थापना की गई जो विकास बैंक कहलाती है।

विकास बेंक शब्द का प्रयोग विशिष्ट निगमों के लिए जाता है जो दीर्घकालीन पूंजी व्यवस्था का कार्य करते हैं। अतः स्पष्ट है कि उद्योग एवं व्यापार को मध्यमकालीन तथा दीर्घकालीन वित्त प्रदान करने वाली संस्थाएं विकास बैंक कहलाती है।

विकास बैंकों के कार्य (Functions of Development Banks)

विकास बैंक व्यापारिक बैंकों से हटकर कुछ अलग विशेषताएं रखते हैं। जैसे–ये बैंक व्यापारिक बैंकों की तरह जनता से जमाएं स्वीकार नहीं करते हैं। ये बैंक जनता को अल्पकालीन ऋण प्रदान नहीं करते है। अर्थात् यदि यह कहा जाए तो ठी ही होगा कि विकास बैंक सामान्य बैंकिंग कार्य नहीं करते हैं। विकास बैंकों की स्थापना का उद्देश्य सामाजिक लाभ प्राप्त करना होता है जबकि व्यापारिक बैंक निजी लाभ के उद्देश्य से स्थापित होते हैं। इस प्रकार विकास बैंक विशिष्ट वित्तीय संस्थाएं हैं तथा इनके कार्य भी सामान्य बैंकिंग कार्यों से पृथक् होते हैं। विकास बैंकों के प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं–

1. उद्योगों को मध्य एवं दीर्घकालीन ऋण प्रदान करना।
2. अंश–पत्रों का अभिगोपन करना।
3. अंश–पत्रों, बन्ध–पत्रों तथा ऋण पत्रों का निर्गमन करना।
4. उद्योग व्यापार हेतु ऋणों को गारण्टी देना।
5. पूंजी बाजार के विकास हेतु प्रयास करना।
6. नवीन उद्योंगों की स्थापना में सहायता प्रदान करना।
7. औद्योगिक इकाई के आधुनिकीकरण के लिए सहायता प्रदान करना।
8. तकनीकी विकास हेतु वित्त प्रदान करना।
9. उद्यमिता विकास के लिए प्रशिक्षण एवं परामर्श प्रदान करना।
10. औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्रों के लिए प्रयास करना।

विकास बैंकों का महत्व (Importance of Development Banks)

भारतीय अर्थव्यवस्था में विकास बैंकों का उल्लेखनीय योगदानहै। विकास बैंकों के माध्यम से ही देश के औद्योगिक विकास को गति प्रदान की जा सकी है। भारतीय अर्थव्यवस्था में विकास बैंक के महत्व को निम्नांकित बिन्दुओं में व्यक्त किया जा सकता है–

१. विकास हेतु वित्त प्रबन्धन (Management of Finance for Development)

देश की अर्थव्यवस्था में औद्योगिक विकास हेतु वित्त आपूर्ति कर विकास बैंक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। इन बैंकों के माध्यम से विकास के लिए वित्त उपलब्ध कराया जाता है। ये बैंक उद्योगों की स्थापना तथा उनके विकास में अग्रणी भूमिका निभाते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

२. उद्यमिता विकास में सहायक (Helpful in Enterepreneurship Development)

विकास बैंक भावी उद्यहिमयों, युवाओं में उद्यमिता विकास हेतु सहायता पहुंचातें हैं। प्रशिक्षण, सलाह, परामर्श इत्यादि के माध्यम से देश में उद्यमिता का विकास कर नये उद्योगपतियों का निर्माण करते हैं।

३. प्रबन्धकीय एवं तकनीकी विकास में सहायक (Helpful in Managerial and Technological Development)

विकास बैंकों के माध्यम से प्रबन्धकीय कौशल, विकास के कार्यक्रम संचालित किये जाते हे। इन बैंकों के द्वारा नवीन तकनीक का विकास, प्रशिक्षण,सलाह एवं परामर्श प्रदान किया जाता है, ताकि तीव्र गति से औद्योगिक विकास हो सके।

४. शोध एवं सर्वेक्षण (Research and Survey)

विकास बैंक उद्योगों के विकास के लिए औद्योगिक बाजार में शोध एवं सर्वेक्षण का कार्य सम्पन्न कर उपयोगी एवं सारगर्भित निष्कर्ष प्रदान करते हैं। फलस्वरूप बाजार आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। इन बैंकों द्वारा आर्थिक सर्वेक्षण करवाया जाता है जो उद्यमियों एवं नीति निर्माताओं के लिए उपयोगी होता है।

५. विदेशी पूंजी प्राप्ति में सहायक (Helpful in Receiving Foreign Capital) –

विकास बैंक उद्योग एवं व्यापार के विकास के लिए विदेशी एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से पूंजी उपलब्ध कराने में भी सहायता प्रदान करते हैं। विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय विकास एजेन्सी, एशियाई विकास बैंक आदि संस्थाओं से वित्त प्राप्त कर औद्योगिक परियोजनाओं का वित्त पोषण किया जाता है।

भारत में विकास बैंक (Development Banks in India)

(अ) राष्ट्रीय स्तर के विकास बैंक (National Level Development Banks)

1. भारतीय औद्योगिक वित्त निगम (Industrial Finance Corporation of India-IFCI)
2. भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (Industrial Development Bank of India-IDBI)
3. भारतीय औद्योगिक साख एवं विनियोग निगम (Industrial Credit and Investment Corportaion of India – ICICI)
4. भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (Small Industrial Development Bank of India-SIDBI)
5. भारतीय यूनिट ट्रस्ट (Unit Trust of India-UTI)
6. भारतीय जीवन बीमा निगम (Life Insurance Corporation of India)
7. भारत का आयात–निर्यात बैंक (Import-Export Bankof India)
8. भारतीय औद्योगिक विनियोग बैंक (Industrial Investment Bank of India-IIBI)
9. आधारभूत संरचना विकास वित्त कम्पनी (Infrastructure Development Finance Company)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(ब) राज्य स्तरीय के विकास बैंक (State Level Development Banks)

1. राज्य वित्त निगमें (State Finance Corporation)

2. राज्य औद्योगिक विकास निगम (State Industrial Development Corporation)

इस प्रकार भारत में विकास बैंकिंग क्रियाएं तीव्र गति से विकसित हुयी हैं। देश में सुदृढ़ विकास बैंक विगत वर्षों स्थापित हुए हैं। 1990 के पश्चात् वित्तीय क्षेत्रों में हुए सुधारों के फलस्वरूप व्यापारिक बैंकों तथा विकास बैंकों के मध्य अन्तर को कम किया है। अब व्यापारिक बैंक भी पूंजी बाजार के अभिन्न अंगों के रूप में अंश पत्रों व ऋण पत्रों का क्रय करने में लगे हैं तथा उद्योग व्यापार को अवधि ऋण प्रदान करने लगे हैं। अर्थात् व्यापारिक बैंकों द्वारा भी विकास बैंकों के कार्य सम्पन्न किये जाने लगे हैं। विकास बैंकों की आरम्भिक अवस्था में इन बैंकों की कार्य प्रणाली सामाजिक उद्देश्यों को ध्यान में रखकर निर्धारित होती थी। अर्थात् यह बैंक काफी निम्न एवं उचित ब्याज दर पर ऋण प्रदान करते थे। तथा इनका प्रतिफल काफी कम होता था किन्तु अब व्यापारिक बैंकों से प्रतियोगिता के कारण स्थित पूरी तरह विपरीत हो चुकी है तथा व्यापारिक बैंकों की तरह ही कार्य प्रणाली निर्धारित होने लगी है। देश के सभी लगभग बड़े विकास बैंक यथा– ICICI, IDBI, UTI आदि नवोन्मेषी व्यापारिक बैंकिंग करने लगे हैं अतः देश में बैंकिंग संरचना में व्यापारिक बैंक तथा विकास बैंकों रूपी दोनों शाखाओं में अब स्पष्ट अन्तर किया जाना संभव नहीं हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

खण्ड–ब

ईकाई – 1

भारतीय रिजर्व बैंक : स्थापना, उद्देश्य, संगठन एवं प्रबन्ध

1.0 इकाई की रूपरेखा
1.1 उद्देश्य
1.2 प्रस्तावना
1.3 भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना
1.4 भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना के उद्देश्य
1.5 भारतीय रिजर्व बैंक की पूंजी तथा स्वामित्व
1.6 भारतीय रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण
1.7 भारतीय रिजर्व बैंक का संगठन एवं प्रबन्ध
1.7.1 केन्द्रीय संचालक मण्डल
1.7.2 स्थानीय मण्डल
1.7.3 रिजर्व बैंक के कार्यालय
1.8 भारतीय रिजर्व बैंक के प्रशासनिक विभाग
1.9 सारांश
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न
1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.12 संदर्भ ग्रंथ
1.13 शब्द कोष

1.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(i) भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना कब हुई ?

(ii) भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना के उद्देश्य क्या थे ?

(iii) भारतीय रिजर्व बैंक का संगठन एवं प्रबन्ध कैसा हैं ?

(iv) भारतीय रिजर्व बैंक की प्रशासनिक व्यवस्था कैसी हैं ?

1.2 प्रस्तावना :–

किसी भी देश की मौद्रिक संस्थाओं के नियन्त्रण तथा आर्थिक विकास हेतु केन्द्रीय बैंक आवश्यक होता हैं। भारत में केन्द्रीय बैंक की आवश्यकता 18वीं शताब्दी से अनुभव की जा रही थी तथा समय–समय पर विभिन्न समितियों ने केन्द्रीय बैंक की स्थापना की आवश्यकता पर बल दिया तथा 'रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया एक्ट, 1934' के अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक की स्थापना की गई, जिसने 1 अप्रैल 1935 से कार्य करना प्रारम्भ किया।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

प्रस्तुत इकाई में भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना के उद्देश्यों की विस्तृत विवेचना की गई हैं तथा भारतीय रिजर्व बैंक के संगठन एवं प्रबन्ध की जानकारी दी गई हैं। भारतीय रिजर्व बैंक के संगठन को तीन भागों में बांटा गया हैं – (प) केन्द्रीय संचालक मण्डल (पप) स्थानीय मण्डल (पपप) रिजर्व बैंक के कार्यालय। इस बैंक के 13 प्रशासनिक विभाग हैं, प्रस्तुत इकाई में इस बैंक की संगठनात्मक एवं प्रबन्धकीय व्यवस्था की विस्तृत विवेचना की गई हैं।

1.3 भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना :–

किसी भी देश की मौद्रिक संस्थाओं के नियन्त्रण तथा आर्थिक विकास हेतु केन्द्रीय बैंक आवश्यक होता हैं। भारत में केन्द्रीय बैंक की आवश्यकता 18वीं शताब्दी से अनुभव की जा रही थी। सर्वप्रथम सन् 1773 में वारेन हेस्टिंग्स ने 'जनरल बैंक ऑफ बंगाल बंगाल एण्ड बिहार' को भारत का केन्द्रीय बैंक बनाने का सुझाव दिया था। सन् 1913 में चैम्बरलेन आयोग के सदस्य लार्ड कीन्स ने केन्द्रीय बैंक की स्थापना का प्रश्न उठाया। अतः तीन प्रेसीडेन्सी बैंकों – प्रेसीडेन्सी बैंक ऑफ बंगाल, प्रेसीडेन्सी बैंक ऑफ मद्रास तथा प्रेसीडेन्सी बैंक ऑफ बम्बई को मिलाकर सन् 1921 में इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना की गई। यद्यपि इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया को केन्द्रीय बैंक के कई कार्य सौंपे गये थे लेकिन इसे नोट निर्गमन का अधिकार नहीं दिया गया। इस प्रकार मुद्रा का निर्गमन भारत सरकार द्वारा तथा साख का नियन्त्रण इम्पीरियल बैंक द्वारा किया जाता था। हिल्टन यंग कमीशन ने मुद्रा व साख को नियन्त्रित करने की दोहरी नियन्त्रण पद्धति को समाप्त करने तथा बैंकिंग व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने की दृष्टि से केन्द्रीय बैंक की स्थापना की सिफारिश की। सन् 1931 में केन्द्रीय बैंक जांच समिति ने भी केन्द्रीय बैंक की स्थापना पर बल दिया।

सन् 1933 में गोल मेज सम्मेलन में भारत में राजनीतिक प्रभाव से मुक्त एक केन्द्रीय बैंक की स्थापना का सुझाव दिया। उपर्युक्त सभी सुझावों के फलस्वरूप भारतीय विधायिका सभा में 8 सितम्बर 1933 को रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया बिल प्रस्तुत किया गया, जिस पर 06 मार्च, 1934 को वायसराय ने अपने हस्ताक्षर किये। इस प्रकार भारत में 'रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया एक्ट, 1934' के अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक की स्थापना की गई। भारतीय रिजर्व बैंक ने 1 अप्रैल, 1935 से केन्द्रीय बैंक के रूप में कार्य करना शुरू कर दिया।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना किस एक्ट के अन्तर्गत की गई थी तथा इसने कब कार्य करना प्रारम्भ किया ?

.....

....

.....

प्र. 2 इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना कब की गई ?

.....

....

.....

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1.4 भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना के उद्देश्य :–

भारत में केन्द्रीय बैंक के रूप में भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना के निम्नलिखित उद्देश्य थेः–

1. देश में मुद्रा तथा साख का समुचित प्रबन्ध करना,
2. रूपये के आन्तरिक तथा बाह्य मूल्य में स्थिरता लाना,
3. देश में सुव्यवस्थित एवं सन्तुलित रूप से बैंकिंग का विकास करना,
4. सुसंगठित मुद्रा बाजार का विकास करना,
5. कृषि साख की समुचित व्यवस्था करना,
6. सार्वजनिक ऋणों की व्यवस्था करना,
7. अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रीक सहयोग स्थापित करना, तथा
8. व्यापारिक बैंकों के नकद कोषों का केन्द्रीयकरण करना।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना के कोई दो उद्देश्य बताइए।

.....

.....

.....

1.5 भारतीय रिजर्व बैंक की पूंजी तथा स्वामित्व :–

भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना अंशधारियों के बैंक के रूप में की गयी थी। इसकी अधिकृत तथा निर्गमित पूंजी 5 करोड़ रूपये थी, जो 100–100 रू. के 5 लाख अंशों में विभाजित थी। इन 5 लाख अंशों में से 2,20,000 रूपये मूल्य के 2,200 अंश भारत सरकार को आबंटित किये गये थे। यह भारत सरकार द्वारा नियुक्त संचालकों की न्यूनतम अंश धारण योग्यता को पूरा करने के लिये आवश्यक था। बैंक की शेष पूंजी पर निजी अंशधारियों का अधिकार था।

रिजर्व बैंक का संचालन केन्द्रीय संचालक मण्डल द्वारा किया जाता हैं। एक गर्वनर तथा दो डिप्टी गर्वनरों के अतिरिक्त अन्य संचालकों की नियुक्ति निजी अंशधारियों द्वारा की जाती थी। लेकिल देश की मौद्रिक एवं राजकोषीय नीति में बैंक के महत्व को ध्यान में रखते हुए बैंक के विधान में यह व्यवस्था की गई थी कि यदि सरकार केन्द्रीय संचालक मण्डल की नीति से असहमत हो तो सरकार का निर्णय अन्तिम माना जायेगा।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 भारतीय रिजर्व बैंक की अधिकृत और निर्गमित पूंजी कितनी थी ?

.....

.....

.....

प्र. 2 रिजर्व बैंक का संचालन किसके द्वारा किया जाता हैं ?

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

.....

.....

.....

1.6 भारतीय रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण :–

रिजर्व बैंक की स्थापना के समय से ही इसके राष्ट्रीयकरण की मांग की जाने लगी। लेकिन भारत के स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इसके पक्ष में जनमत और भी प्रबल हो गया। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न राजनैतिक व आर्थिक परिवर्तनों के फलस्वरूप रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण आवश्यक समझा गया। अतः फरवरी, 1947 में रिजर्व बैंक को सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत लाने का निर्णय लिया गया। तदनुसार सितम्बर, 1948 में भारतीय संसद में भारतीय रिजर्व बैंक (सार्वजनिक स्वामित्व में हस्तान्तरण) अधिनियम, 1948 पारित किया गया। उपर्युक्त अधिनियम के अनुसार 1 जनवरी, 1949 से भारतीय रिजर्व बैंक की राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। सरकार ने बैंक के अंशधारियों को प्रत्येक 100 रूपये के अंश के 118 रूपये 10 आने (62 पैसे) का मुआवजा देने का निर्णय किया। मुआवजे की रकम में से 18 रूपये 62 पैसे प्रति अंश की दर से नकद भुगतान किया गया तथा शेष 100 रूपये के बदले 3 प्रतिशत ब्याज वाले सरकारी बॉण्ड दिये गये।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 भारतीय रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण कब किया गया ?

.....

.....

.....

1.7 भारतीय रिजर्व बैंक का संगठन एवं प्रबन्ध :–

भारतीय रिजर्व बैंक के संगठन को तीन भागों में बांटा गया हैं :–

1.7.1 केन्द्रीय संचालक मण्डल (Central Board of Directors) :–

रिजर्व बैंक के संगठन तथा प्रबन्ध व्यवस्था में केन्द्रीय संचालक मण्डल का सर्वोच्च स्थान हैं। यह संगठन बैंक के प्रबन्ध हेतु उत्तरदायी होता हैं। केन्द्रीय संचालक मण्डल के सदस्यों की संख्या 20 होती हैं। केन्द्रीय संचालक मण्डल का गठन अधोलिखित प्रकार से होता हैं :–

(अ) एक गर्वनर (One Governer) :–

गर्वनर रिजर्व बैंक का सर्वोच्च अधिकारी होता हैं। इसकी नियुक्ति 5 वर्ष के लिये भारत सरकार द्वारा की जाती हैं। इसकी पुनर्नियुक्ति हो सकती हैं। वर्तमान में श्री विमल जालान के स्थान पर श्री वाई. वी. रेड्डी को रिजर्व बैंक का नया गर्वनर बनाया गया हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(ब) चार डिप्टी गर्वनर (Four Dy. Governer) :–

रिजर्व बैंक के अधिनियम के अनुसार सरकार द्वारा 4 डिप्टी गर्वनर नियुक्त किये जाते हैं। इनकी नियुक्ति 5 वर्ष के लिये होती हैं। इनकी भी पुनर्नियुक्ति हो सकती हैं।

(स) पन्द्रह संचालक (Fifteen Directors) :–

संचालक मण्डल के अन्य पन्द्रह सदस्यों की नियुक्ति भारत सरकार द्वारा ही की जाती हैं। इसमें चार निदेशक चारो स्थानीय मण्डलों (प्रत्येक से एक) से मनोनीत किये जाते हैं तथा 10 निदेशक व एक सरकारी अधिकारी भारत सरकार से अलग मनोनीत करती हैं।

दस निदेशकों में प्रायः वाणिज्य, उद्योग, वित्त, अर्थशास्त्र तथा सहकारिता के विशेषज्ञ होते हैं और सरकारी अधिकारी भारत सरकार का वित्त सचिव होता हैं। स्थानीय मण्डलों से मनोनीत सदस्य स्थानीय मण्डल की सदस्यता काल में ही केन्द्रीय संचालक मण्डल के सदस्य रह सकते हैं। शेष 10 निदेशकों का कार्यकाल 4 वर्ष का होता हैं। सरकारी कर्मचारी सरकार द्वारा निर्धारित समय के लिये संचालक बना रह सकता हैं।

गर्वनर संचालक मण्डल का अध्यक्ष तथा बैंक का मुख्य कार्यकारी अधिकारी होता हैं। केन्द्रीय संचालक मण्डल के निर्देशन के अधीन रिजर्व बैंक की सम्पूर्ण शक्ति गर्वनर में निहित होती हैं। चारों डिप्टी गर्वनर बैंक के कार्य को सुचारू रूप से चलाने में गर्वनर की सहायता करते हैं। इनकी देखरेख में बैंक के विभिन्न विभागों का कार्य होता हैं। रिजर्व बैंक का गर्वनर तथा डिप्टी गर्वनर पूर्णकालिक अधिकारी (थ्नसस ज्पउम वचिबमते) होते हैं जो अपना पूरा समय बैंक के प्रशासन में लगाते हैं। शेष संचालक केवल अंशकालिक (च्ंतज ज्पउमत) होते हैं तथा उन्हें बैठकों में भाग लेने के लिये यात्रा व्यय तथा भत्ता ही दिया जाता हैं।

मताधिकार (Voting Right) :– केन्द्रीय संचालक मण्डल के बैठकों की अध्यक्षता रिजर्व बैंक का गर्वनर करता हैं। चारों डिप्टी गर्वनर तथा मनोनीत सरकारी अधिकारी केन्द्रीय संचालक मण्डल की बैठकों में भाग लेते हैं तथा सभी महत्वपूर्ण मुद्दों पर अपने विचार प्रकट कर सकते हैं। लेकिन मत विभाजन के समय इन्हें मत देने का अधिकार नहीं होता हैं। अतः केन्द्रीय संचालक मण्डल के 20 में से केवल 15 निदेशकों को ही मतदान का अधिकार होता हैं। गर्वनर की अनुपस्थिति में गर्वनर द्वारा मनोनीत डिप्टी गर्वनर द्वारा संचालक मण्डल की सभा की अध्यक्षता की जाती हैं तथा उसे मतदान का अधिकार भी होता हैं।

1.7.2 स्थानीय मण्डल (Local Boards) :–

रिजर्व बैंक के संगठन में स्थानीय मण्डलों का महत्वपूर्ण स्थान हैं। बैंक द्वारा कलकता, मुम्बई, चैन्नई तथा नई दिल्ली में चार स्थानीय मण्डलों की स्थापना की गई हैं। इनमें प्रत्येक में 5 सदस्य होते हैं जो भारत सरकार द्वारा मनोनीत किये जाते हैं। ये सदस्य विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों जैसे – व्यापार, उद्योग, कृषि, सहकारिता आदि विषयों के विशेषज्ञ होते हैं। सदस्यों का कार्यकाल 4 वर्ष का होता हैं और वे पुनर्नियुक्त किये जा सकते हैं। स्थानीय मण्डल के सदस्य अपने में से एक अध्यक्ष चुन लेते हैं। स्थानीय मण्डल केन्द्रीय मण्डल द्वारा सौपे हुए कार्यो को चलाने और उनकी देखरेख करने का उत्तरदायी होता हैं। स्थानीय मण्डल के सदस्य समय–समय पर क्षेत्रीय व अन्य आर्थिक समस्यों के संबंध में केन्द्रीय मण्डल को सलाह देने का कार्य भी करते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1.7.2 रिजर्व बैंक के कार्यालय (Office of RBI) :–

भारतीय रिजर्व बैंक का प्रधान कार्यालय मुम्बई में हैं इसके अतिरिक्त कोलकता, मुम्बई, चैन्नई तथा नई दिल्ली में स्थानीय मण्डलों के कार्यालय हैं। इसके अतिरिक्त बैंक ने अहमदाबाद, बैगलौर, हैदराबाद, भयखल्ला (मुम्बई), गुवाहटी, कानपुर, जयपुर, नागपुर, पटना तथा त्रिवेन्द्रम में अपनी शाखाएं खोल रखी हैं ताकि देश में बैंकिंग व्यवस्था का सुचारू रूप से प्रबन्घ किया जा सकें। बैंक ने लखनऊ, भोपाल, चंडीगढ़, जम्मू व श्रीनगर, कोचीन व इन्दौर में भी अपनी शाखाएं खोल रखी हैं। रिजर्व बैंक भारत सरकार की अनुमति से किसी भी स्थान पर अपनी शाखा खोल सकता हैं। देश में जहां आर.बी.आई. की शाखाएं नहीं हैं वहां भारतीय स्टेट बैंक इसके अभिकर्ता के रूप में कार्य करता हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 भारतीय रिजर्व बैंक के संगठन को कितने भागों में बांटा गया हैं ? नाम बताइए।

.....

....

.....

प्र. 2 रिजर्व बैंक के गर्वनर की नियुक्ति किसके द्वारा तथा कितनी अवधि के लिये की जाती हैं ?

.....

....

.....

प्र. 3 भारतीय रिजर्व बैंक का प्रधान कार्यालय कहां हैं एवं स्थानीय मण्डलों के कार्यालय कहां हैं?

.....

....

.....

1.8 भारतीय रिजर्व बैंक के प्रशासनिक विभाग (Admnistrative Departments of RBI) :– भारतीय रिजर्व बैंक के संगठनात्मक व प्रबन्धकीय ढ़ांचे का अध्ययन करने के लिए इसके प्रशासनिक विभागों के बारे में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक हैं। बैंक के विभिन्न प्रशासनिक विभाग इसके संगठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भारतीय रिजर्व बैंक के निम्नलिखित प्रशासकीय विभाग हैं :

(1) **मुद्रा प्रबन्ध विभाग (Department of Currency Management) :–** इसे नोट निर्गमन विभाग भी कहते है। इस विभाग का मुख्य कार्य नोटों का निर्गमन करना, नोटों की जॉच करना, नोटो का हिसाब–किताब रखना, आन्तरिक अंवेक्षण करना इत्यादि।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

भारतीय रिजर्व बैंक की संगठनात्मक एवं प्रबन्धकीय व्यवस्था

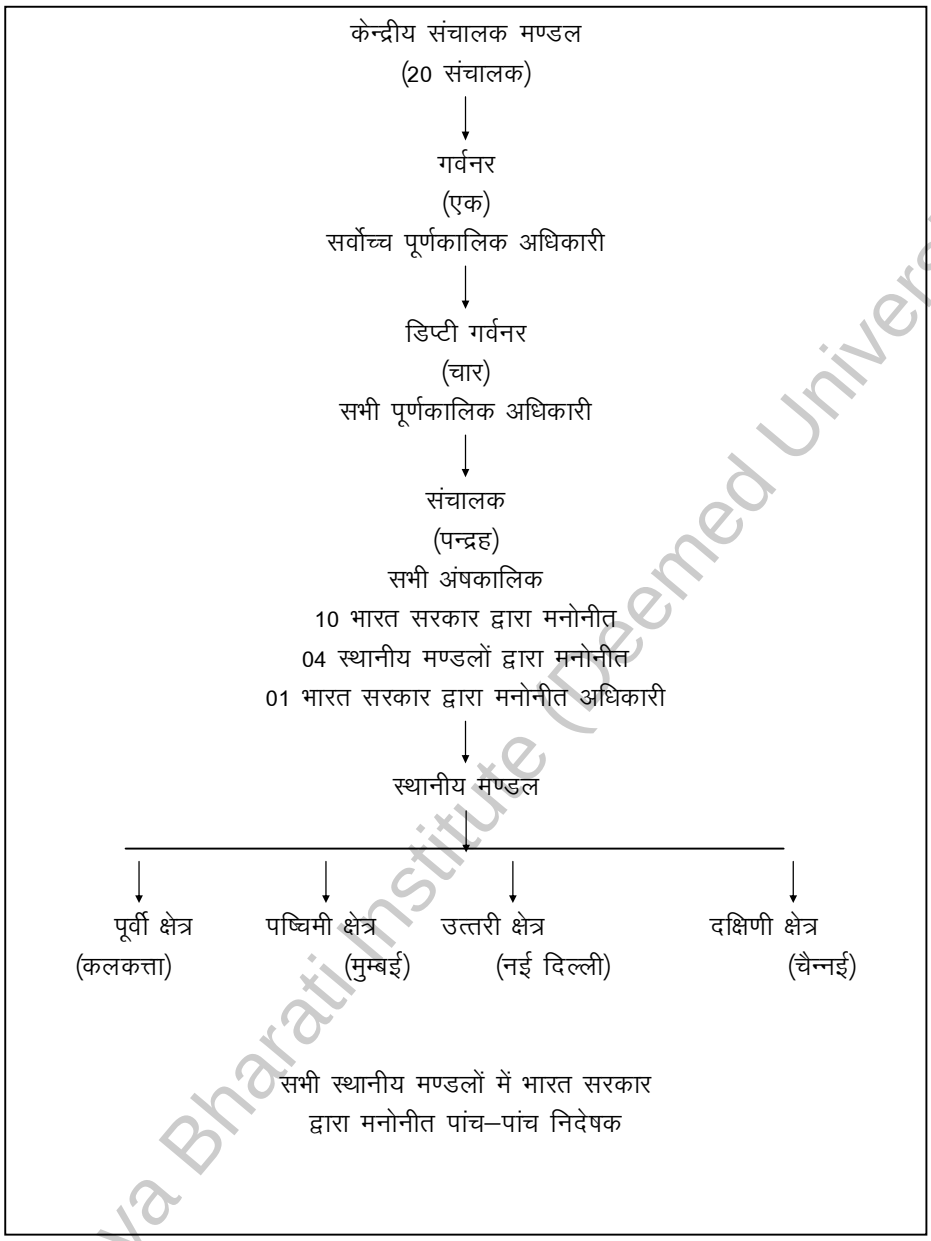

(2) **बैंकिंग विभाग (Banking Department) :–**

यह विभाग वे समस्त कार्य करता है, जो आर.बी.आई. को बैंको के बैंक व सरकार के बैंकर के रूप में करने होते है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(3) **साख नियोजन विभाग (Credit Planning Department) :–**

यह विभाग देश के वाणिज्य बैंकों की साख सम्बन्धी आवश्यकताओं का अनुमान लगाता है तथा देश की साख आवश्यकताओं से सम्बन्धित बजट का निर्माण करता है।

(4) **बैंकिंग परिचालन और विकास विभाग (Department of Banking Operations and Development):–**

यह विभाग देश में बैंकों के सुव्यवस्थित परिचालन और विकास से सम्बन्धित है। इसके लिए यह विभाग बैंकों को लाइसेंस देने, बैंको का निरिक्षण करने, उनके स्थिति–विवरणों की जॉच करने तथा बैंकों के एकीकरण आदि कार्य सम्पन्न करता हैं।

(5) **विनिमय नियन्त्रण विभाग (Exchange Control Department) :–**

यह विभाग विनिमय दर निर्धारण, विदेशी मुद्रा के लेन–देन तथा भुगतान सन्तुलन से सम्बन्धित समस्त कार्यों की देख–रेख करता है।

(6) **विधि विभाग (स्महंस क्मचंतजउमदज) :–**

यह विभाग आर.बी.आई. को कानूनी परामर्श देने, समय–समय पर जारी किये जाने वाले निर्देशों व विज्ञप्तियों को तैयार करने का कार्य करता है।

(7) **कृषि साख विभाग (Department of Agriculture Credit) :–**

यह विभाग कृषि साख से सम्बन्धित कार्य करता है।

(8) **औद्योगिक साख विभाग (Department of Industrial Credit) :–**

यह विभाग राज्य वित्त निगमों को परामर्श देने तथा लघु व मध्यम उद्योगों को साख उपलब्ध कराने का कार्य सम्पन्न करता है।

(9) **व्यय तथा बजट नियन्त्रण विभाग (Department of Expenditure and Budgetary Control) :–** यह विभाग बैंक के व्यय तथा बजट नियन्त्रण का कार्य करता है।

(10) **गैर–बैंकिंग कम्पनी विभाग (Non-Banking Companies Department) :–** इस विभाग का कार्य गैर–बैंकिंग कम्पनियों तथा वित्तीय सस्थाओं की देखरेख व जॉच करना है।

(11) **सांख्यिकीय विश्लेषण और कम्प्यूटर सेवा विभाग (Department of Statistical analyze and Computer Service) :–**

यह विभाग मौद्रिक व आर्थिक विषयों पर शोध करने तथा उसके निष्कर्षों को प्रकाशित करने का कार्य करता है।

(12) **आर्थिक विश्लेषण तथा नीति विभाग (Department of Economic Analyzes and Policy) :–** इस विभाग का कार्य आर्थिक समस्याओं का विश्लेषण करके नीति निर्धारण करना है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(13) **अन्य विभाग** (**Other Department**) :– आर.बी.आई. के उपर्युक्त विभागो के अतिरिक्त कई अन्य विभाग है, जैसे– परिसर विभाग, प्रेस सम्पर्क विभाग, सेविवर्गीय नीति विभाग इत्यादि।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 भारतीय रिजर्व बैंक के मुद्रा प्रबन्ध विभाग का कार्य बताइए ।

.....

.....

.....

प्र. 2 भारतीय रिजर्व बैंक का विनिमय नियन्त्रण विभाग किससे सम्बन्धित हैं ?

.....

.....

.....

1.9 सारांश :–

भारतीय रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया एक्ट, 1934 के अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक की स्थापना की गई तथा इसने 1 अप्रैल 1935 से कार्य करना प्रारम्भ किया। देश में मुद्रा एवं साख को समुचित प्रबन्ध तथा सुसंगठित मुद्रा बाजार के विकास हेतु देश में केन्द्रीय बैंक की स्थापना की गई। इसका संचालन केन्द्रीय संचालक मण्डल द्वारा किया जाता हैं, केन्द्रीय संचालक मण्डल में एक गर्वनर, चार डिप्टी गर्वनर, तथा पन्द्रह संचालक सदस्य होते हैं। संचालक मण्डल का अध्यक्ष गर्वनर होता हैं। प्रस्तुत इकाई में भारतीय रिजर्व बैंक की संगठनात्मक एवं प्रबन्धकीय व्यवस्था की विस्तृत विवेचना की गई हैं।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न :–

निम्न प्रश्नों के उत्तर 500 शब्दों में दीजिए।

प्रश्न 1. भारतीय रिर्जव बैंक की स्थापना के उद्देश्यों एवं संगठन का वर्णन कीजिए।

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

1.3 के उत्तर

1. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया एक्ट, 1934 तथा 1 अप्रैल, 1935 से
2. सन् 1921 में

1.4 के उत्तर

1. देखिये 1.4

1.5 के उत्तर

1. 5 करोड़ रूपये जो 100–100 रूपये के 5 लाख अंशों में विभाजित थी।
2. केन्द्रीय संचालक मण्डल द्वारा।

1.6 के उत्तर

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. 01 जनवरी, 1949 से।

1.7 के उत्तर

1. तीन भागों में (1) केन्द्रीय संचालक मण्डल (2) स्थानीय मण्डल (3) रिजर्व बैंक के कार्यालय
2. भारत सरकार द्वारा : 05 वर्ष के लिये
3. प्रधान कार्यालय मुम्बई में तथा स्थानीय मण्डलों के कार्यालय क्रमशः कोलकता, मुम्बई, चैन्नई तथा नई दिल्ली

1.8 के उत्तर

1. नोट निर्गमन करना, नोटों की जांच करना तथा आन्तरिक अंकेक्षण करना।
2. विनिमय दर निर्धारण, विदेशी मुद्रा लेन देन तथा भुगतान सन्तुलन से संबंधित।

1.12 संदर्भ ग्रंथ :–

1. मिश्रा एवं पुरी, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
2. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम्, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
3. सारस्वत, शर्मा, गुप्ता, गोधा, 'बैंकिंग एवं वित्तीय व्यवस्था'
4. लक्ष्मीनारायण नाथूरामका, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा सार्वजनिक वित्त'
5. बी. एल. ओझा, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा राजस्व'

1.13 शब्द कोष :–

रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया एक्ट	केन्द्रीय संचालक मण्डल
स्थानीय मण्डल	रिजर्व बैंक के कार्यालय
प्रेसीडेन्सी बैंकों	इम्पीरियल बैंक
नोट निर्गमन	हिल्टन यंग कमीशन
गोल मेज सम्मेलन	मुद्रा तथा साख
सार्वजनिक ऋणों	नकद कोषों
निर्गमित पूंजी	अधिकृत पूंजी
राष्ट्रीयकरण	बैंकिंग विभाग
साख नियोजन विभाग	बैंकिंग परिचालन और विकास विभाग
विनिमय नियन्त्रण विभाग	विधि विभाग
कृषि साख विभाग	औद्योगिक साख विभाग
व्यय तथा बजट नियन्त्रण विभाग	गैर–बैंकिंग कम्पनी विभाग
सांख्यिकीय विश्लेषण और कम्प्यूटर सेवा विभाग	आर्थिक विश्लेषण तथा नीति विभाग

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

इकाई – 2

भारतीय रिजर्व बैंक के कार्य

2.0 इकाई की रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 केन्द्रीय बैंक के कार्य

2.3.1 नोट निर्गमन का एकाधिकार

2.3.2 सरकारी बैंकर, एजेन्ट व सलाहकार

2.3.3 व्यापारिक बैंकों के नकद कोषों का संरक्षक

2.3.4 देश के अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोषों का संरक्षक

2.3.5 पुर्नकटौती का बैंक व अन्तिम ऋणदाता

2.3.6 केन्द्रीय समाशोधन

2.3.7 साख नियन्त्रण

2.3.8 अन्य कार्य

2.4 रिजर्व बैंक के विभिन्न कार्यों का सापेक्षित महत्व

2.5 भारत में नोट निर्गमन की विधि

2.6 सारांश

2.7 निबन्धात्मक प्रश्न

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.9 संदर्भ ग्रंथ

2.10 शब्द कोष

2.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(i) भारतीय रिजर्व बैंक के प्रमुख कार्य क्या–क्या हैं ?

(ii) भारतीय रिजर्व बैंक किस प्रकार अन्तिम ऋणदाता के रूप में कार्य करता हैं ?

(iii) भारत में नोट निर्गमन की क्या विधि हैं ?

2.2 प्रस्तावना :–

प्रत्येक देश में केन्द्रीय बैंक का मुख्य कार्य अर्थव्यवस्था में साख व मुद्रा की मात्रा को नियन्त्रित व नियमित करना होता हैं। सभी देशों के केन्द्रीय बैंक प्राय प्रमुख तीन कार्य करते हैं, नोट निर्गमन करना, सरकार के बैंक के रूप में कार्य करना एवं बैंकों के बैंक के रूप में कार्य करना। इन कार्यों का क्षेत्र विभिन्न देशों एवं विभिन्न समयों में भिन्न–भिन्न रहा हैं। ये देश की आर्थिक विकास की अवस्था पर भी निर्भर करता हैं। साधारणतया एक केन्द्रीय बैंक का उद्देश्य विकास की ऊंची दर, पूर्ण रोजगार, मूल्य–स्थिरता एवं सुदृढ़

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

भुगतान–सन्तुलन की स्थिति प्राप्त करना माना गया हैं। विकासशील देशों में केन्द्रीय बैंक सरकार को ऐसी आर्थिक नीतियां अपनाने में मदद देता हैं जिनसे विकास की गति तेज हो सके और देश में सभी काम के योग्य व्यक्तियों को काम मिल सकें। साथ में केन्द्रीय बैंक देश की मुद्रा का आन्तरिक मूल्य व बाह्य मूल्य स्थिर करने का प्रयास करता हैं। केन्द्रीय बैंक आर्थिक विकास के लिए भी उचित नीतियां सुझाता हैं ताकि देश उत्तरोत्तर ऊंची विकास–दर प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर हो सकें। भारत के लिए आगामी वर्षों में 7–8 प्रतिवर्ष सालाना विकास की वास्तविक दर प्राप्त करना आवश्यक माना गया हैं। प्रस्तुत इकाई में भारतीय रिजर्व बैंक के विभिन्न कार्यों की विस्तृत विवेचना की गई हैं।

2.3 केन्द्रीय बैंक के कार्य :–

2.3.1 नोट निर्गमन का एकाधिकार

2.3.2 सरकारी बैंकर, एजेन्ट व सलाहकार

2.3.3 व्यापारिक बैंकों के नकद कोषों का संरक्षक

2.3.4 देश के अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोषों का संरक्षक

2.3.5 पुर्नकटौती का बैंक व अन्तिम ऋणदाता

2.3.6 केन्द्रीय समाशोधन

2.3.7 साख नियन्त्रण

2.3.8 अन्य कार्य

2.3.1 नोट निर्गमन का एकाधिकार :–

प्रत्येक बैंक में केन्द्रीय बैंक को कागजी मुद्रा निर्गमित करने का एकाधिकार प्राप्त होता हैं। इससे नोट निर्गमन का कार्य अधिक सुचारू रूप से हो सकता हैं और सरकार इस कार्य को ठीक तरह से नियन्त्रित कर सकती हैं। नोट निर्गमन की विभिन्न प्रणालियां होती हैं : जिन्हें एक देश अपनी आवश्यकता के अनुसार अपनाता हैं। नोट निर्गमन के आनुपातिक कोष प्रणाली में निर्गमित मुद्रा के पीछे सोने या सोने के सिक्के अथवा विदेशी प्रतिभूतियां किसी निश्चित अनुपात (जैसे 40 प्रतिशत में) रखी जाती हैं। कागजी मुद्रा बढ़ाने के लिए इस पद्धति में आवश्यक कोषों की व्यवस्था करनी होती हैं। लेकिन न्यूनतम कोष प्रणाली में न्यूनतम कोष रखकर आवश्यकतानुसार पत्र–मुद्रा निकाली जा सकती हैं। यह पद्धति अधिक लोचदार होती हैं। भारत में आजकल यही पद्धति प्रचलित हैं।

किसी भी देश की करेन्सी में सिक्के व पत्र–मुद्रा शामिल होते हैं। केन्द्रीय बैंक का पत्र–मुद्रा पर प्रत्यक्ष रूप से नियन्त्रण होता हैं। सिक्के वैसे तो सरकार चलाती हैं, लेकिन प्रचलन में केन्द्रीय बैंक ही लाता हैं। इस प्रकार केन्द्रीय बैंक का देश की करेन्सी पर प्रत्यक्ष रूप से नियन्त्रण पाया जाता हैं।

2.3.2 सरकारी बैंकर एजेन्ट व सलाहकार :–

केन्द्रीय बैंक सरकार के विभिन्न प्रकार के लेन–देन के कार्य करता हैं। यह सरकार की ओर से कर, सार्वजनिक ऋण आदि की राशि जमा करता हैं और समस्त सरकारी भुगतान करने की व्यवस्था करता हैं। यह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

आवश्यकता पड़ने पर सरकार को कर्ज भी देता हैं। सरकार को कर्ज सरकारी प्रतिभूतियों पर दिया जाता हैं। डी. कॉक के अनुसार ''केन्द्रीय बैंक सर्वत्र राज्य के बैंक के रूप में कार्य करते हैं। यह इसलिए नहीं कि राज्य के लिए ऐसा करना सुविधाजनक एवं सस्ता होता हैं बल्कि इसलिए कि सार्वजनिक वित्त एवं मौद्रिक मामलों में परस्पर गहरा सम्बन्ध होता हैं''। केन्द्रीय बैंक सरकार को विभिन्न आर्थिक नीतियों के निर्धारण में मदद देता हैं जैसे मौद्रिक नीति, राजकोषिय नीति (सार्वजनिक राजस्व, सार्वजनिक व्यय तथा सार्वजनिक ऋण की नीतियों सहित), विदेशी व्यापार नीति, विनिमय दर नीति, आदि। वैसे सरकार की नई मौद्रिक नीति तो इसी के माध्यम से लागू की जाती हैं। इसकी प्रति 6 माह में एक बार घोषणा की जाती हैं। सुस्त मौसम की साख–नीति वर्ष के अप्रैल से सितम्बर तक के 6 महिनों तक के लिए होती हैं और व्यस्त मौसम की साख–नीति जो हैं अक्टूबर से अगले वर्ष के मार्च माह तक के 6 महिनों के लिए होती हैं। इस प्रकार मौद्रिक व साख नीति का क्रम चलता रहता हैं।

2.3.3 व्यापारिक बैंकों के नकद कोषों का संरक्षक :–

व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंक के पास कुछ राशि नकद रूप में रखते हैं जिससे विभिन्न बैंकों के लेन देन का परस्पर समाशोधन व निपटारा करने में सहूलियत होती हैं और साख नियन्त्रण की दृष्टि से भी उसका काफी महत्व होता हैं। देश का केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंक को आवश्यकता पड़ने पर ऋण भी देता हैं, इस प्रकार वह इनके नकद कोषों का संरक्षक माना गया हैं। आवश्यकता पड़ने पर केन्द्रीय बैंक नकद कोषों की मात्रा बढ़ा या घटा सकता हैं। नकद कोष अनुपात बढ़ाने से साख–संकुचन होता हैं, और इसको घटाने से साख का विस्तार होता हैं। नकद कोष अनुपात व्यापारिक बैंकों की मांग व अवधि जमा राशियों का वह अनुपात होता हैं जो उन्हें रिजर्व बैंक के पास रखना होता हैं।

2.3.4 देश के अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोषों का संरक्षक :–

केन्द्रीय बैंक अपने देश के विदेशी विनिमय कोषों का भी संरक्षक होता हैं। वह प्राप्त विदेशी मुद्रा को जमा करता हैं और उसके उपयोग के लिए दिशा–निर्देश जारी करता हैं। देश में मुद्रा की विदेशी विनिमय दर स्थिर रखने के लिए ऐसा करना आवश्यक माना गया हैं। एक देश के पास जो विदेशी विनिमय कोष होते हैं उनकी उचित देख भाल करना व उनका सदुपयोग करना आवश्यक होता हैं। यह कार्य केन्द्रीय बैंक को सौंपा जाता हैं। इस प्रकार केन्द्रीय बैंक विदेशी विनिमय की दर को स्थिर रखता हैं। आवश्यकता पड़ने पर यह सरकार को विनिमय की दर परिवर्तित करने की सलाह देता हैं, जैसा कि जुलाई 1991 में भारत में रूपये का लगभग 20 प्रतिशत अवमूल्यन करते समय किया गया था। लेकिन अवमूल्यन या अतिमूल्यन का निर्णय मुख्यतया सरकार के द्वारा ही लिया जाता हैं। अवमूल्यन में एक देश की मुद्रा की विनिमय दर नीची की जाती हैं, और अतिमूल्यन में यह ऊंची की जाती हैं। मुद्रा के अवमूल्यन से निर्यात बढ़ाने में मदद मिलती हैं, लेकिन इससे आयात महंगे हो जाते हैं और विदेशी कर्ज की बकाया राशि भी बढ़ जाती हैं। भारत की विदेशी कर्ज की राशि अवमूल्यन के बाद रूपयों में काफी बढ़ी हैं। आजकल रूपये की विनिमय दर बाजार की ाक्तियों के आधार पर निर्धारित की जाने लगी हैं, लेकिन आवश्यकता पड़ने पर रिजर्व बैंक इसमें हस्तक्षेप कर सकता हैं और अवांछित उतार–चढ़ावों को नियमित कर सकता हैं।

भारत में 20 अगस्त 1994 से रूपये को चालू खाते में पूर्ण परिवर्तनीय बना दिया गया था। इसकी घोषणा 1994–95 का बजट प्रस्तुत करते समय की गयी थी। इससे पूर्व 1993–94 के बजट में व्यापार खाते में

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

रूपये को परिवर्तनीय कर दिया गया था, जिससे प्राप्त विदेशी मुद्रा का रूपयों में विनिमय खुले बाजार में होने लगा था। बाद में रूपये को पूंजी खाते में परिवर्तनीय बनाने के लिए तारापोर समिति की सिफारिशों पर विचार किया गया था। 1994 में देश में एकीकृत विनिमय दर की व्यवस्था लागू की गई थी। इसमें यात्रा, अध्ययन, इलाज, भेंट व सेवाओं के लिए विदेशी मुद्रा अधिक मुक्त रूप में दी गयी थी। विदेशी विनियोगों पर अर्जित आमदनी को बाहर ले जाने की (चरणबद्ध तरीके से) अनुमति दी गयी थी। इससे भारत को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुच्छेद आठ में प्रवेश करने का अवसर मिल गया था।

वर्तमान नीति के अनुसार रूपये की विनिमय दर बाजार में मांग व पूर्ति के आधार पर निर्धारित होने दी जाती हैं, लेकिन विनिमय दर के अत्यधिक उतार–चढ़ावों को रोकने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक हस्तक्षेप करता हैं। जुलाई 2004 में रूपये की विनिमय दर लगभग 46.30 रूपये प्रति डालर रही। इस प्रकार भारत में विनिमय दर का बाजार की शक्तियों पर प्रभाव पड़ने लगा हैं। इस पर राजनीतिक हलचलों का भी प्रभाव देखा जा सकता हैं। यह काफी संवेदनशील दर होती हैं।

2.3.5 पुर्नकटौती का बैंक व अन्तिम ऋणदाता :–

केन्द्रीय बैंक बैंकों के प्रथम श्रेणी के व्यापारिक बिलों की पुनर्कटौती करके उन्हें वित्त प्रदान करता हैं। मान लीजिए ए ने बी को उधार माल बेचा और बी ने एक बिल स्वीकार करके ए को दे दिया, जिसका भुगतान 3 महिने बाद किया जाना हैं। ए चाहे तो किसी बैंक से उस बिल को भुनाकर तुरन्त नकद राशि प्राप्त कर सकता हैं। वह बैंक केन्द्रीय बैंक से इस बिल की पुनर्कटौती कराकर रूपया प्राप्त कर सकता हैं। निश्चित अवधि के बाद बी को इस बिल की राशि का भुगतान करना होगा। वैसे व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंक से प्रत्यक्ष रूप में कर्ज भी लेते हैं। इस प्रकार केन्द्रीय बैंक का मुद्रा बाजार पर काफी प्रभाव पड़ता हैं। यह अंतिम ऋणदाता माना गया हैं, क्योंकि देश की कुल मुद्रा की पूर्ति इसके नियंत्रण में होती हैं। जिस सीमा तक व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंक से प्राप्त कर्ज का उपयोग करते हैं, उस सीमा तक केन्द्रीय बैंक का उन पर प्रभाव बढ़ जाता हैं और वह अपनी मौद्रिक व साख नीति को अधिक आसानी से तथा अधिक प्रभावपूर्ण ढ़ंग से लागू किया जा सकता हैं।

2.3.6 केन्द्रीय समाशोधन :–

केन्द्रीय बैंक के पास विभिन्न बैंकों के खाते रहते हैं, इसलिए उनके पारस्परिक लेन देन का समाशोधन करने में केन्द्रीय बैंक मदद करता है। यह चैको के आधार पर एक बैंक के खाते से राशि निकालकर दूसरे बैंक के खाते में जमा कर देता है। यह एक स्थान से दूसरे स्थान में मूद्रा को भेजने की सहूलियत भी देता है।

2.3.7 साख नियन्त्रण :–

यह केन्द्रीय बैंक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य माना गया है। यह मूद्रा स्फीति के समय साख की मात्रा कम करता है और मंदी के समय साख का विस्तार करता है। साख नियन्त्रण के कई उपाय होते है, जैसे– बैंक दर में परिवर्तन, खुलें बाजार की क्रियायें,नकद रिजर्व अनुपात में परिवर्तन, गुणात्मक साख नियन्त्रण के उपाय, आदि, जिनका भारतीय परिस्थिति में आगे चलकर विस्तार से वर्णन किया गया है।

2.3.8 अन्य कार्यः–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

केन्द्रीय बैंक विकासशील देशों में विकास को प्रोत्साहन देने वाले कार्य करता है। जैसे भारत में यह कृषिगत–साख के क्षेत्र में विशेष रूप से रुचि लेता है। यह सहकारी संगठनों को रियायती शर्तों पा कर्ज देता है। केन्द्रीय बैंक आर्थिक व मौद्रिक विषयों पर आवश्यक अनुसंधान करवाता है और विभिन्न प्रकार के ऑकड़े व रिपोर्टे प्रकाशित करता हैं। यह व्यापारीक बैकों से मिलकर साख–नियोजन की प्रक्रिया को लागू करता है ताकी सीमित साख का उपयोग प्राथमिकता के आधार पर आवश्यक क्षेत्रों में उत्पादन, निवेश व आमदनी को बढ़ाने में किया जा सके। व्यापारीक बैंकों के मार्फत समाज के कमजोर वर्गो को साख प्रदान करके केन्द्रीय बैंक उनको भी विकास करने के पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराता है ताकि वे अन्य वर्गों से पीछे न रहे।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 भारत में नोट निर्गमन की कौनसी प्रणाली प्रचलित हैं ? समझाइये।

.....

.....

.....

प्र. 2 केन्द्रीय बैंक किस प्रकार सरकारी बैंकर व सलाहकार के रूप में कार्य करता हैं ?

.....

.....

.....

प्र. 3 केन्द्रीय बैंक को अन्तिम ऋणदाता क्यों माना गया हैं ?

.....

.....

.....

प्र. 4 केन्द्रीय बैंक विभिन्न बैंकों के लेनदेन का समाशोधन किस प्रकार करते हैं ?

.....

.....

.....

2.4 रिजर्व बैंक के विभिन्न कार्यों का सापेक्षित महत्व :– प्रायः अर्थशास्त्रियों में यह विवाद का विषय रहा हैं कि केन्द्रीय बैंक का सबसे महत्वपूर्ण कार्य कौनसा होता हैं। हाट्रे के अनुसार ''केन्द्रीय बैंक का मुख्य कार्य अन्तिम ऋणदाता का होता हैं। यह व्यापारिक बैंकों को कठिनाई के समय ऋण की सुविधा प्रदान करता हैं।'' किश व ऐलिकिन्स के अनुसार इसका मुख्य कार्य मौद्रिक मान की स्थिरता को कायम रखना होता हैं और ए.सी. एल. डे के अनुसार ''इसका प्रमुख कार्य देश की मौद्रिक व बैंकिंग प्रणाली को नियन्त्रित करना और इसे स्थिर

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

रखना माना गया हैं।'' वैसे ज्यादातर विद्धानों द्वारा इसका प्रमुख कार्य देश की मुद्रा व साख को नियन्त्रित व नियमित करना माना गया हैं। यह मौद्रिक प्रणाली का प्रमुख संचालक व नियामक होता हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 रिजर्व बैंक के विभिन्न कार्यों का सापेक्षित महत्व बताइए।

.....

.....

.....

2.5 भारत में नोट निर्गमन की विधि :– हमारे देश में एक रूपये के नोट व सभी श्रेणीयों के सिक्के केन्द्र सरकार के द्वारा जारी किये गये हैं और शेष सभी बैंक – नोट भारतीय रिजर्व बैंक की तरफ से जारी किये गये हैं। आजकल देश में रिजर्व बैंक के द्वारा चलाए गये दो, पांच, दस, बीस, पचास, एक सौ रूपये, पांच सौ रूपये व एक हजार रूपये के नोट प्रचलन में हैं। 16 जनवरी, 1978 को एक हजार, पांच हजार, दस हजार के नोट चलन से हटा दिये गये ताकि गैर कानूनी सौदों पर नियन्त्रिण स्थापित किया जा सकें। लेकिन अक्टूबर 2000 में एक हजार के नोट पुनः चालू कर दिये गये थे।

रिजर्व बैंक में दो विभाग होते हैं :– पहला निर्गमन विभाग होता हैं जो नोटो के निर्गमन के लिए जिम्मेदार होता हैं। निर्गमित मुद्रा रिजर्व बैंक की मौद्रिक देनदारी होती हैं जिसके पीछे समान मूल्य की परिसम्पत्तियों जैसे – सोने के सिक्के, धातु, विदेशी प्रतिभूतियां, रूपयों के सिक्के तथा भारत सरकार की रूपयों की प्रतिभूतियां होती हैं। जब कभी निर्गम–विभाग में ये परिसम्पत्तियां आती हैं तो उसे उसके आधार पर मुद्रा निकालनी पड़ती हैं। यही कारण हैं कि 1993–94 व बाद में भारत में विदेशी विनिमय कोष बढ़ने से रिजर्व बैंक को मुद्रा का निर्गमन बढ़ाना पड़ा हैं।

दूसरा बैंकिंग विभाग होता हैं जो मुद्रा के विस्तार व संकुचन की देखभाल करता हैं। यह मुद्रा को चलन में डालता हैं व चलन से हटाता हैं। उदाहरण के लिये केन्द्रीय सरकार के बजट घाटे के लिए रिजर्व बैंक ट्रेजरी बिल बेचकर इसकी पूर्ति करता हैं। ये ट्रेजरी बिल बैंकिंग विभाग को बेचे जाते हैं, और बैंकिंग विभाग इनका भुगतान करेंसी के स्टॉक में से राशि निकालकर करता हैं, अथवा निर्गम–विभाग से करेंसी प्राप्त करके करता हैं। इसके लिए निर्गम–विभाग को समान मूल्य की परिसम्पत्तियां हस्तान्तरित की जाती हैं। इस प्रकार दोनों विभाग अपना कार्य संचालित करते हैं। सरकार नई मुद्रा को खर्च करके उसे प्रचलन में डालती हैं।

भारत में 6 अक्टूबर, 1956 से पूर्व नोट निर्गमन की आनुपातिक कोष प्रणाली प्रचलित थी, जिसके अन्तर्गत नोटो के पीछे 40 प्रतिशत राशि सोने के सिक्कों, धातु व स्टर्लिंग प्रतिभूतियों के रूप में रखी जाती थी। लेकिन 1956 में रिजर्व बैंक अधिनियम में संशोधन करके नोट निर्गमन की कोष प्रणाली लागू की गई जिसमें 400 करोड़ रूपये की विदेशी प्रतिभूतियां व 115 करोड़ रूपये का सोना व सोने के सिक्के रखकर (कुल 515 करोड़ रूपये का रिजर्व रखकर) चाहे जितनी कागजी मुद्रा निकाली जा सकती हैं। 31 अक्टूबर, 1957 को न्यूनतम सीमा घटाकर कुल 200 करोड़ रूपये कर दी गई, जिसमें संशोधन के अनुसार रिजर्व बैंक केन्द्रीय सरकार की सलाह से विदेशी प्रतिभूतियों का भी पूर्णतया परित्याग कर सकता हैं। लेकिन 115 करोड़ का सोना तो सदैव रखना होता हैं। वर्तमान में भारत में प्रबन्धित कागजी मुद्रा मान प्रचलन में हैं। सम्पूर्ण मुद्रा के पीछे

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

115 करोड़ रूपये का सोना हैं, जो बहुत कम हैं। शेष राशि के पीछे रूपये की प्रतिभूतियां होती हैं। भारत सरकार रिजर्व बैंक से जो शुद्ध उधार लेती हैं उसकी मौद्रिक व्यवस्था के लिये रूपयों की प्रतिभूतियां रखी जाती हैं। नियोजित आर्थिक विकास में आवश्यकतानुसार नोट छाप सकने के लिए इस प्रणाली का सहारा लेना पड़ा हैं। इस प्रणाली के अन्तर्गत नोट छापने की कोई अधिकतम सीमा नहीं होती हैं।

केन्द्रीय सरकार के निर्णयानुसार घाटे के बजटों की वित्तीय व्यवस्था करने के लिए मुद्रा की सप्लाई बढ़ाई गई हैं। अतः इस प्रणाली में कागजी मुद्रा की मात्रा पर कोई नियंत्रण नहीं रहता। देश में कागजी मुद्रा जनता के द्वारा सरकार में विश्वास के आधार पर चलती रहती हैं। इसके पीछे सोने व अन्य धातु वगैराह का कोष नहीं रखा जाता। अत्यधिक मुद्रास्फीति की स्थिति में मुद्रा का मूल्य बहुत नीचा हो जाने से जनता का मुद्रा पर से विश्वास उठ सकता हैं। अतः नोट निर्गमन की वर्तमान प्रणाली लचीली तो हैं, लेकिन साथ में काफी जोखिम से भी भरी हुई हैं। इस प्रणाली के कारण भारत में मुद्रास्फीति को बढ़ावा मिला हैं जो पूर्व वर्षों में दो अंकों में भी पहुंच गई थी। सितम्बर 1994 में भारत सरकार के वित्त मंत्रालय व भारतीय रिजर्व बैंक के बीच एक समझौता हुआ था जिसके अनुसार तदर्थ ट्रेजरी बिलों के जारी करने की मात्रा पर सीमा लगा दी गई थी। इस समझौते के अनुसार 1994–95 में ट्रेजरी बिलों के निर्गम पर 6000 करोड़ रू. की सीमा निर्धारित की गई थी तथा ऐसी ही सीमाएं 1995–96 व 1996–97 के वर्षों के लिए बाद में घोषित की गई थी और 1997–98 से भारत सरकार द्वारा रिजर्व बैंक से उधार लेकर घाटे की वित्त व्यवस्था की यह विधि पूर्णतया समाप्त कर दी गयी और तब से सरकार को अपने घाटे की पूर्ति के लिए सीधे बाजार से उधार लेना पड़ता हैं। यह एक महत्वपूर्ण समझौता हैं। इससे भारतीय रिजर्व बैंक की स्वायत्तता बढ़ी हैं और नई मौद्रिक नीति की दिशा में यह एक कारगर कदम माना गया हैं। भारतीय रिजर्व बैंक के पूर्व गर्वनर डॉ. सी. रंगराजन ने सितम्बर 1993 में कलकत्ता में अपने एम.जी. कुट्टी स्मृति व्याख्यान में इस सुझाव का प्रबल रूप से समर्थन किया था, जिसे एक वर्ष बाद सितम्बर 1994 में लागू किया गया था। अब तदर्थ ट्रेजरी बिलों की बिक्री पर 1997–98 से पूर्ण रोक लगा दी गयी हैं। इससे मौद्रिक नीति को एक नई दिशा मिली हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 रिजर्व बैंक के दो विभागोंके नाम बताइए।

.....

.....

.....

प्र. 2 हमारे देश में एक रूपये के नोट तथा सभी श्रेणियों के सिक्के किसके द्वारा जारी किये जाते हैं तथा शेष नोट किसके द्वारा जारी किये जाते हैं ?

.....

.....

.....

प्र. 3 हमारे देश में एक हजार रूपये के नोट पुनः कब चालू किये गये ?

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

.....

.....

.....

2.6 सारांश

भारतीय रिजर्व बैंक देश का केन्द्रीय बैंक हैं। अतः यह बैंक वे समस्त कार्य करता हैं जो किसी केन्द्रीय बैंक द्वारा किये जाने आवश्यक हैं। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 की प्रस्तावना के अनुसार ''इस बैंक का मुख्य कार्य नोटों के निर्गमन का नियमन करना तथा भारत में मौद्रिक स्थायित्व रखने हेतु कोषों को रखना व चलन तथा साख व्यवस्था का सामान्य राष्ट्रीय हित में संचालन करना हैं।'' प्रस्तुत इकाई में रिर्जव बैंक के सभी कार्यों की विस्तृत विवेचना की गई हैं।

2.7 निबन्धात्मक प्रश्न :–

निम्न प्रश्नों के उत्तर 500 शब्दों में दीजिए।

प्रश्न 1. भारतीय रिर्जव बैंक के कार्यों की विस्तृत विवेचना कीजिए।

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

2.3 के उत्तर

1. न्यूनतम कोष प्रणाली

2 केन्द्रीय बैंक सरकार के विभिन्न प्रकार के लेन–देन के कार्य करता हैं। यह सरकार की ओर से कर, सार्वजनिक ऋण आदि की राशि जमा करता हैं और सरकार को विभिन्न आर्थिक नीतियों के निर्धारण में मदद देता हैं जैसे मौद्रिक नीति, राजकोषिय नीति (सार्वजनिक राजस्व, सार्वजनिक व्यय तथा सार्वजनिक ऋण की नीतियों सहित), विदेशी व्यापार नीति, विनिमय दर नीति, आदि।

3 क्योंकि देश की कुल मुद्रा की पूर्ति इसके नियंत्रण में होती हैं। जिस सीमा तक व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंक से प्राप्त कर्ज का उपयोग करते हैं, उस सीमा तक केन्द्रीय बैंक का उन पर प्रभाव बढ़ जाता हैं

2.4 के उत्तर

1. देखिये 2.4

2.5 के उत्तर

1. (1) निर्गम विभाग (2) बैंकिंग विभाग
2. एक रूपये के नोट तथा सभी श्रेणियों के सिक्के केन्द्रीय सरकार के द्वारा जारी किये जाते हैं तथा शेष सभी नोट भारतीय रिजर्व बैंक के द्वारा जारी किये जाते हैं।
3. अक्टूबर 2000 से।

2.9 संदर्भ ग्रंथ :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. मिश्रा एवं पुरी, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
2. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम्, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
3. सारस्वत, शर्मा, गुप्ता, गोधा, 'बैंकिंग एवं वित्तीय व्यवस्था'
4. लक्ष्मीनारायण नाथूरामका, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा सार्वजनिक वित्त'
5. बी. एल. ओझा, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा राजस्व'

2.10 शब्द कोष

नोट निर्गमन
अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष
अन्तिम ऋणदाता
केन्द्रीय समाशोधन
सार्वजनिक राजस्व
सार्वजनिक ऋण
साख–संकुचन
विदेशी विनिमय कोष
अतिमूल्यन
विदेशी मुद्रा
केन्द्रीय समाशोधन
नकद कोष
पुर्नकटौती
राजकोषिय नीति
सार्वजनिक व्यय
नकद कोष अनुपात
विनिमय दर
अवमूल्यन
विदेशी कर्ज

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

इकाई – 3

भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा साख नियन्त्रण

3.0 इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियन्त्रण के उपाय

3.4 मात्रात्मक या सामान्य उपाय

- 3.4.1 बैंक दर
- 3.4.2 परिवर्तनशील नकद अनुपात
- 3.4.3 वैधानिक तरलता अनुपात
- 3.4.4 खुले बाजार की क्रियाएं

3.5 गुणात्मक या विशिष्ट उपाय

- 3.5.1 न्यूनतम मार्जिन की आवश्यकता
- 3.5.2 न्यूनतम उधार की दरें
- 3.5.3 उधार की अधिकतम सीमाएं
- 3.5.4 साख की राशनिंग

3.6 अन्य उपाय

- 3.6.1 नैतिक दबाव
- 3.6.2 प्रचार
- 3.6.3 प्रत्यक्ष कार्यवाही

3.7 सारांश

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.9 शब्द कोष

3.10 संदर्भ ग्रंथ

3.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(i) केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियन्त्रण का क्या अर्थ हैं ?

(ii) केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियन्त्रण हेतु कौन–कौन से मात्रात्मक उपाय अपनाए जाते हैं ?

(iii) केन्द्रीय बैंक द्वारा साख साख नियन्त्रण हेतु कौन–कौन से गुणात्मक उपाय अपनाए जाते हैं ?

(iv) केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियन्त्रण हेतु अन्य उपाय कौन–कौन से हैं ?

3.2 प्रस्तावना :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

केन्द्रीय बैंक एक देश के मौद्रिक प्रबंध के लिए जिम्मेदार होता हैं। मौद्रिक प्रबंध में मुद्रा व साख की पूर्ति देश की आवश्यकताओं के अनुसार की जाती हैं। इस सम्बन्ध में साख नियन्त्रण की प्रमुख भूमिका मानी जाती हैं। डी काक का कहना हैं कि ''काफी वर्षों से यह सभी के द्वारा स्वीकार किया गया हैं कि साख का सृजन एवं वितरण, अधिकांश देशों के अपने जटिल आर्थिक संगठन के अन्तर्गत, किसी न किसी प्रकार के नियन्त्रण में अवश्य होना चाहिए। इसका मुख्य कारण यह हैं कि इससे सभी प्रकार के मौद्रिक व व्यावसायिक सौदों के निपटारे में भारी योगदान मिलता हैं, जिससे अच्छे या बुरे परिणामों का एक शक्तिशाली स्त्रोत सामने आता हैं।''

साख नियन्त्रण के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार होते हैं : (1) मुद्रास्फीति व अवस्फीति पर नियन्त्रण करने के लिए साख नियन्त्रण से मदद मिलती हैं। इससे सामान्य कीमत–स्तर में स्थिरता लायी जा सकती हैं। मुद्रास्फीति की समस्या को हल करने के लिये साख–संकुचन किया जाता हैं और अवस्फीति की दशा में साख का विस्तार किया जाता हैं।

(2) मुद्रा बाजार की गतिविधियों में स्थिरता लाने के लिए साख पर नियन्त्रण किया जाता हैं ताकि मुद्रा की मांग व पूर्ति में तालमेल बैठाया जा सके।

(3) आर्थिक विकास को गति प्रदान करने के लिये साख का विस्तार किया जाता हैं ताकि रोजगार, उत्पत्ति, आमदनी, बचत व निवेश आदि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती रहे। प्रस्तुत इकाई में केन्द्रीय बैंक द्वारा अपनाए जा रहे साख नियन्त्रण के विभिन्न उपायों की विस्तृत विवेचना की गई हैं।

3.3 केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियन्त्रण के उपाय :– साख नियन्त्रण के अस्त्रों को दो भागों में बांटा जा सकता हैं, (1) मात्रात्मक या सामान्य (quantitative or general) तथा

(2) गुणात्मक या चयनित (qualitative or selective)। साख नियन्त्रण के मात्रात्मक उपायों की कुल मात्रा को प्रभावित करने का प्रयास किया जाता हैं। इसका उद्देश्य साख के उपयोग को प्रभावित करना नहीं होता हैं। साख नियन्त्रण के गुणात्मक या चयनित उपायों का उद्देश्य साख के उपयोग को प्रभावित करना होता हैं। इन उपायों के जरिये साख को उन दिशाओं में प्रभावित किया जाता हैं जो देश के लिये अमुक समय में अधिक आवश्यक होती हैं, और उन दिशाओं में जाने से रोका जाता हैं या साख की मात्रा कम की जाती हैं, जो देश के लिए कम आवश्यक होती हैं।

रिजर्व बैंक द्वारा साख नियन्त्रण के उपाय

(अ) मात्रात्मक या सामान्य उपाय	(आ) गुणात्मक या विशिष्ट उपाय	(इ) अन्य उपाय
(1) बैंक दर	(1) न्यूनतम मार्जिन की आवश्यकताएं	(1) नैतिक दबाव
(2) परिवर्तनशील नकद रिजर्व अनुपात	(2) न्यूनतम उधार की दरें	(2) प्रचार
(3) वैधानिक तरलता अनुपात	(3) उधार की अधिकतम सीमाएं	(3) प्रत्यक्ष कार्यवाही
(4) खुले बाजार की क्रियाएं		

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 साख नियन्त्रण के उपाय कितने प्रकार के होते हैं ? नाम बताइए।

.....

.....

.....

प्र. 2 साख नियन्त्रण के मात्रात्मक उपाय बताइए।

.....

.....

.....

3.4 साख नियन्त्रण के मात्रात्मक या सामान्य उपाय :– साख नियन्त्रण के मात्रात्मक उपायों के द्वारा देश में उपलब्ध कुल साख की मात्रा को नियन्त्रित करने का प्रयास किया जाता हैं, इनका उद्देश्य साख के उपयोग को प्रभावित करना नहीं होता। साख नियन्त्रण के मात्रात्मक या सामान्य उपाय निम्नानुसार हैं :–

3.4.1 बैंक दर (Bank Rate) :–

बैंक दर केन्द्रीय बैंक द्वारा साख–नियन्त्रण का परम्परागत अस्त्र माना गया हैं। इसे बट्टा दर (डिस्काउण्ट रेट) भी कहा जाता हैं। यह वह दर होती हैं जिस पर केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों के विनिमय बिलों की पुनर्कटौती करता हैं, अथवा उन्हें स्वीकृत प्रतिभूतियों के आधार पर अग्रिम राशि प्रदान करता हैं। इस प्रकार बैंक दर साख की लागत और उपलब्धि दोनों को प्रभावित करती हैं। बैंक दर के बढ़ने से बैंकों को केन्द्रीय बैंक से मिलने वाली उधार में कमी आती हैं जिससे वे भी अपने ग्राहकों को कम मात्रा में उधार दे पाते हैं। इससे साख के विस्तार में रूकावट आती हैं। बैंक दर के कम होने से साख विस्तार को प्रोत्साहन मिलता हैं क्योंकि व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंक से ज्यादा उधार ले सकते हैं जिससे वे अपने ग्राहकों को भी ज्यादा उधार देने की स्थिति में आ जाते हैं। प्रायः व्यापारिक बैंक बैंक दर के परिवर्तनों के अनुसार अपनी ब्याज की दरों में परिवर्तन किया करते हैं। वस्तुतः बैंक दर नीति की सफलता के लिए ऐसा करना आवश्यक माना जाता हैं।

बैंक दर के प्रभाव के संबंध में हॉट्रे व कीन्स के दृष्टिकोणों में अंतर पाया गया हैं। हॉट्रे के विचार में बैंक दर के परिवर्तन ब्याज की अल्पकालीन दरों तथा कार्यशील पूंजी की मांग को प्रभावित करते हैं जब कि कीन्स के अनुसार बैंक दर के परिवर्तन ब्याज की दीर्घकालीन दरों तथा अचल या स्थिर पूंजी की मांग को प्रभावित करते हैं। इन दोनों दृष्टिकोणों को परस्पर विरोधी न मानकर एक दूसरे का पूरक भी माना जा सकता हैं। लेकिन कीन्स ने मौद्रिक नीति के बजाये राजकोषीय नीति पर अधिक बल दिया था। इसलिए उसने आर्थिक क्रिया व कीमतों को प्रभावित करने के लिए प्रमुख बल निवेश–निजी व सार्वजनिक–पर दिया जिससे उसके विचार में बैंक दर का महत्व उतना नहीं रहा जितना राजकोषीय नीति का रहा।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता हैं कि बैंक दर साख–नियन्त्रण का एक प्रमुख अस्त्र माना गया हैं। इसको बढ़ाने से मुद्रास्फीति को नियन्त्रित करने में मदद मिलती हैं, और इसको घटाने से आर्थिक मंदी को दूर

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

करने में मदद मिलती हैं। यह साख की मात्रा को प्रभावित करती हैं, जिसका आगे चलकर उत्पादन व कीमतों पर प्रभाव होता हैं। लेकिन बैंक दर नीति की अपनी कुछ सीमाएं या मर्यादाएं होती हैं जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इनका आगे उल्लेख किया जा रहा हैं।

बैंक दर नीति की सीमाएं (Limitationss of Bank Rate Policy) :–

(1) संगठित व विकसित मुद्रा–बाजार का होना आवश्यक :–

जैसा कि पहले भी संकेत दिया गया हैं, बैंक दर की सफलता के लिए आवश्यक हैं कि देश में मुद्रा–बाजार संगठित, विकसित व आधुनिक किस्म का हो ताकि बैंक दर के बदलते ही बाजार में अन्य ब्याज की दरें भी बदलने लगें। लेकिन जिन देशों में मुद्रा–बाजार अविकसित अवस्था में पाये जाते हैं उनमें बैंक दर की सफलता संदिग्ध हो जाती हैं। जब तक ब्याज की बाजार–दरें बैंक दर का सिगनल न मानें तब तक यह अपना असर कैसे दिखा पायेंगी। इसलिए बैंक दर को संदर्भ–दर का दर्जा अवश्य मिलना चाहिए।

(2) देश में बिल बाजार विकसित हो :–

देश में बिल बाजार विकसित होना चाहिए ताकि केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों की बिलों को पुनर्कटौती के आधार पर लेकर उन्हें साख प्रदान कर सकें। जब देश में बिलों की, पर्याप्त मात्रा में, पुनर्कटौती के लिए उपलब्धि नहीं होगी तो व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंक से साख की सुविधा के लिए कम सीमा तक पहुंच पायेंगे। इसलिए बैंक दर की सफलता के लिए देश में बिल बाजार का विकसित होना जरूरी माना गया हैं।

(3) बैंकों को केन्द्रीय बैंक के पास उधार लेने के लिए जाने की आवश्यकता होनी चाहिए :–

यदि बैंकों के पास स्वयं के तरल या नकद साधन होते हैं तो वे केन्द्रीय बैंक के पास उधार के लिए क्यों जायेंगे। इसलिए बैंक दर की सफलता के लिए यह आवश्यक हैं कि व्यापारिक बैंकों को केन्द्रीय बैंक के पास साख के लिए जाने की जरूरत होनी चाहिए अर्थात् उनके पास स्वयं के तरल साधनों का अभाव होना चाहिए।

(4) व्यावसायिक दशाओं के प्रभाव से बैंक दर का असर कम हो सकता हैं :–

जब देश में आर्थिक तेजी का वातावरण होता हैं तो व्यवसायी ऊँचे ब्याज पर भी अधिक उधार लेते जाते हैं, और बैंक दर का प्रभाव कम हो जाता हैं। इसी प्रकार मंदी में बज दर कम होने पर भी व्यवसायी उधार लेने में रूचि नहीं लेते जिससे मंदी दूर नहीं हो पाती। ऐसी दशा में बैंक दर प्रभावित नहीं हो पाती। भारत में वर्तमान में बैंक दर के 6 प्रतिशत होने पर भी औद्योगिक मंदी की समस्या पूरी तरह हल नहीं हो पायी हैं। इसलिए निवेश को प्रोत्साहित करने के लिये लाभ की प्रत्याशाओं का भी बढ़ना जरूरी माना गया हैं।

(5) **बैंकों की जमाएं ब्याज–दर के अलावा आमदनी के स्तर पर भी निर्भर करती हैं।** इसलिए केवल ब्याज की दर ही बचत व बैंक जमाओं को प्रभावित नहीं करती, बल्कि आमदनी बढ़ने पर भी लोग अधिक बचत कर पाते हैं। इसलिए ब्याज की दर का सभी दशाओं में महत्व नहीं होता। इससे बैंक दर का अथवा ब्याज–दर का महत्व कम हो जाता हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(6) विकासशील देशों में स्वदेशी बैंकर ऊँचे ब्याज की दरों पर कारोबार करते हैं और बैंक दर के परिवर्तन उन्हें छू नहीं पाते हैं। नियोजित अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक निवेश के निर्णय कई प्रकार के आधारों पर लिये जाते हैं और उन पर बैंक दर का प्रबल प्रभाव नहीं पड़ता हैं।

इस प्रकार बैंक दर की अपनी सीमाएं होती हैं। फिर भी भारत जैसे देशों में मुद्रा–बाजार की कमियों व कमजोरियों के बावजूद बैंक दर का महत्व बना हुआ हैं, और रिजर्व बैंक ने बैंक दर में कमी करके ब्याज की दरों में नरमी लाने की प्रवृत्ति का संकेत दिया हैं, और देश में हाल के वर्षों में सस्ती मुद्रा नीति को अपनाने के दौरान बैंक दर को नीचा रखने पर बल दिया हैं। अतः बैंक दर का साख–नियन्त्रण के अस्त्र के रूप में आज भी महत्व स्वीकार किया जाता हैं।

3.4.2 खुले बाजार की क्रियाएं :–

व्यापक अर्थ में खुले बाजार की क्रियाओं का अर्थ होता हैं कि केन्द्रीय बैंक प्राथमिक परिसम्पत्तियों जैसे : सोना, विदेशी विनिमय तथा स्थिर ब्याज वाली प्रतिभूतियों का खुले बाजार में क्रय–विक्रय करें। लेकिन व्यवहार में ये क्रियाएं केन्द्रीय बैंक द्वारा स्वीकृत प्रतिभूतियों, विशेषतया, सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद फरोख्त से ही सम्बन्ध रखती हैं। सरकारी प्रतिभूतियां अल्पकालीन, मध्यमकालीन व दीर्घकालीन अवधियों की हो सकती हैं।

जब केन्द्रीय बैंक सरकारी प्रतिभूतियां बेचता हैं तो जो व्यापारिक बैंक या उनके ग्राहक इनको खरीदते हैं, उनके नकद–रिजर्व बैंकों के पास उस सीमा तक कम हो जाते हैं। इससे व्यापारिक बैंकों की साख–सृजन की क्षमता घट जाती हैं और साख–संकुचन होता हैं जिसका प्रभाव मुद्रास्फीति पर नियन्त्रण के रूप में प्रगट होता हैं। इसी प्रकार जब केन्द्रीय बैंक सरकारी प्रतिभूतियों को खरीदता हैं तो व्यापारिक बैंकों तथा इनके ग्राहकों के नकद–रिजर्व बढ़ जाते हैं जिससे बैंकों की साख–सृजन की क्षमता बढ़ जाती हैं। इसका उपयोग व्यापारिक बैंक साख बढ़ाने में कर सकते हैं जिससे उत्पादन, रोजगार, आमदनी व व्यापार व्यवसाय को प्रोत्साहन मिलता हैं। इस प्रकार केन्द्रीय बैंक की खुले बाजार की क्रियाओं से दो प्रभाव पड़ते हैं : (1) उधार की राशि प्रभावित होती हैं तथा

(2) ब्याज की दरें भी प्रभावित होती हैं।

कुल मिलाकर खुले बाजार की क्रियाओं का उत्पादन के स्तर, सामान्य कीमत स्तर तथा व्यापार के स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता हैं। इसलिए आर्थिक तेजी के समय केन्द्रीय बैंक प्रायः सरकारी प्रतिभूतियों को बेचने की व्यवस्था करता हैं और आर्थिक मंदी के समय इनको खरीदने की व्यवस्था करता हैं। अतः साख–नियन्त्रण के उपाय का प्रत्यक्ष प्रभाव व्यापारिक बैंकों के नकद कोषों पर पड़ता हैं जिससे उनकी साख सृजन की क्षमता प्रभावित होती हैं। स्मरण रहे कि जब केन्द्रीय बैंक सरकारी प्रतिभूतियां खरीदता हैं तो वह उदार साख नीति का पालन करता हैं, और जब वह इनको बेचता हैं तो वह अपेक्षाकृत कठोर या प्रतिबंधात्मक साख नीति का पालन करता हैं।

खुले बाजार की क्रियाओं की सीमाएं :–

(1) प्रायः यह कहा जाता हैं कि केन्द्रीय बैंक अपनी पसन्द के अनुसार अधिक मात्रा में प्रतिभूतियां खरीद सकता हैं (अपने विपक्ष में कर्ज का सृजन करके) जिससे व्यापारिक बैंकों के नकद रिजर्व बढ़ जाते हैं और

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

साख का विस्तार हो जाता हैं। लेकिन सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री केवल केन्द्रीय बैंक के पास उपलब्ध सरकारी प्रतिभूतियों की मात्रा पर निर्भर करती हैं। इसलिए सरकारी प्रतिभूतियों के बिक्री पक्ष पर सीमा लगी रहती हैं। इसलिए कहा जाता हैं कि खुले बाजार की क्रियाओं के माध्यम से साख संकुचन के बजाय साख विस्तार करना ज्यादा आसान होता हैं। अतः खुले बाजार की क्रियाएं केन्द्रीय बैंक के पास सरकारी प्रतिभूतियों की मात्रा पर निर्भर करती हैं।

(2) व्यवहार में प्रायः देखा गया हैं कि केन्द्रीय बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद से व्यापारिक बैंकों के नकद कोष उसी अनुपात में नहीं बढ़ते, क्योंकि हो सकता हैं कि पूंजी का निकास बाहर की ओर हो जाय, अथवा लोग अपनी जमाओं को अपसंचय के लिये निकालने लगें अथवा विपरित भुगतान–संतुलन के कारण पूंजी बाहर जाने लगे। इसी प्रकार यह भी संभव हैं कि केन्द्रीय बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों को बेचने से बैंकों के नकद कोष उसी अनुपात में न घटे, क्योंकि हो सकता हैं बाहर से पूंजी का अन्तर्गमन हो जाय, अथवा पहले की संचित राशि को बाहर निकालने से केन्द्रीय बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूति को बेचने का बैंकों के नकद कोषों में आनुपातिक कमी उत्पन्न करने का प्रभाव सामने आने पाए।

(3) खुले बाजार की क्रियाओं का प्रभाव इसलिए भी अवरूद्ध हो जाता हैं कि व्यापारिक बैंक सदैव अपने नकद कोषों के बढ़ने पर उधार नहीं बढ़ा पाते और अपने नकद कोषों के घटने के अनुसार उधार को घटा नहीं पाते। यदि साख के विस्तार के लिए अनुकूल परिस्थितियां नहीं होती तो बैंकों के नकद–कोषों के बढ़ने पर भी साख की मात्रा को बढ़ाना कठिन होता हैं क्योंकि साख की मांग अपर्याप्त रहती हैं। इसलिए समस्त बैंकिंग प्रणाली की तरफ से साख–विस्तार का कार्यक्रम अपनाने पर ही साख का विस्तार सुगम हो पाता हैं।

(4) यह मानना भी सही नहीं होता हैं कि ब्याज के कम होने पर साख की मांग बढ़ेगी। मंदी के समय ब्याज की नीची दरों पर भी उधार बढ़ाना आसान नहीं होता। अतः बैंक साख का सृजन तो कर सकते हैं, लेकिन निवेशकर्त्ता लाभ की प्रत्याशाओं को देखकर ही उधार लिया करते हैं।

(5) यदि बैंकों के पास अतिरिक्त नकद रिजर्व होते हैं तो वे उन्हीं का उपयोग करके साख का विस्तार करने में सक्षम होंगे। ऐसी दशा में खुले बाजार की क्रियाओं का महत्व कम हो जायेगा।

(6) यदि बैंकों के पास पर्याप्त मात्रा में बिल मौजूद हैं, जिनकी पुनर्कटौती कराकर के केन्द्रीय बैंक से आवश्यक वित्त प्राप्त कर सकते हैं, तो खुले बाजार की क्रियाओं का प्रभाव सीमित हो जायेगा।

(7) खुले बाजार की क्रियाएं प्रायः अल्पकालीन प्रतिभूतियों के लेन देन तक ही सीमित रहती हैं, क्योंकि इनमें घाटे की सम्भावना कम रहती हैं।

(8) केन्द्रीय बैंक को प्रतिभूति बाजार को स्थिर रखने के लिए समय–समय पर कदम उठाने पड़ते हैं। इससे भी खुले बाजार की क्रियाओं का प्रभाव सीमित हो जाता हैं।

स्तरण रहे कि बैंक दर और खुले बाजार की क्रियाओं का प्रयोग एक साथ करने से साख–नियन्त्रण में ज्यादा सफलता मिलती हैं। जैसे जब बैंक दर बढ़ायी जाती हैं, और साथ में खुले बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों को बेचने की व्यवस्था की जाती हैं तो साख–संकुचन में अधिक सफलता मिल सकती हैं। इसी प्रकार जब बैंक दर घटायी जाती हैं, और साथ में केन्द्रीय बैंक द्वारा खुले बाजार में सरकारी प्रतिभूतियों को खरीदने की व्यवस्था की जाती हैं तो साख–विस्तार में अधिक सफलता व सुनिश्चित रूप से सफलता मिल सकती हैं। भारत

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

में रिजर्व बैंक द्वारा खुले बाजार की क्रियाओं के माध्यम से केन्द्रीय सरकार से अपनी उधार की व्यवस्था करती हैं, और सरकारी प्रतिभूति बाजार में स्थिरता की दशाओं को बनाये रखने का प्रयास करती हैं।

3.4.3 परिवर्तनशील नकद रिजर्व अनुपात (Variable Cash Reserve Ratio) :–

साख नियन्त्रण के इस साधन के अन्तर्गत व्यापारिक बैंकों के लिए अपनी शुद्ध मांग व अवधि जमाओं का एक निश्चित अनुपात (जो या तो प्रथा से तय होता हैं, अथवा ज्यादातर कानून द्वारा निर्धारित किया जाता हैं) केन्द्रीय बैंक के पास जमा कराना होता हैं। इसके आधार पर केन्द्रीय बैंक साख–नियन्त्रण की प्रक्रिया का संचालन करता हैं। भारत में इसके लिए 3 प्रतिशत से 15 प्रतिशत की सीमा निर्धारित की गई हैं। हमारे देश में 14 जून 2003 से नकद–रिजर्व–अनुपात 4.5 प्रतिशत किया गया हैं। इससे पूर्व यह 5 प्रतिशत था। इसका अर्थ यह हुआ कि केन्द्रीय बैंक ने व्यापारिक बैंको को यह अवसर दिया कि वे अपनी मांग व अवधि जमाओं का 1/2 प्रतिशत और, उद्योग, व्यापार व कृषि आदि क्षेत्रों को उधार दे सकेंगे। इस 1/2 प्रतिशत की कमी से व्यापारिक बैंकों के लिए अतिरिक्त उधार देने के लिए 3300 करोड़ रू. खुलने का अनुमान प्रस्तुत किया गया था।

कहने का तात्पर्य यह हैं कि नकद–रिजर्व–अनुपात के घटने से साख के विस्तार की दशा उत्पन्न होती हैं, जिससे निवेश बढ़ता हैं, उत्पत्ति व आमदनी के बढ़ने की दशा उत्पन्न होती हैं और आर्थिक मंदी दूर हो सकती हैं। इसी प्रकार नकद–रिजर्व–अनुपात को बढ़ाने से व्यापारिक बैंकों की जमाओं का पहले से ज्यादा अंश केन्द्रीय बैंक के पास जमा करना होता हैं जिससे बैंकों की साख सृजन की क्षमता अपेक्षाकृत घट जाती हैं एवं साख–संकुचन होता हैं और परिणामस्वरूप मुद्रास्फीति को नियन्त्रित करने में मदद मिलती हैं। विभिन्न देशों में साख की मात्रा को नियन्त्रित करने के लिए परिवर्तनशील नकद–रिजर्व–अनुपात के अस्त्र का उपयोग किया जाता हैं।

स्मरण रहे कि परिवर्तनशील नकद–रिजर्व–अनुपात की विधि साख–नियन्त्रण की प्रत्यक्ष विधि होती हैं और यह खुले बाजार की क्रियाओं की विधि की तुलना में ज्यादा शीघ्र परिणाम देती हैं। खुले बाजार की क्रियाओं पर सरकारी प्रतिभूतियों की पूर्ति का प्रभाव पड़ता हैं, लेकिन नकद–रिजर्व–अनुपात की विधि उसकी तुलना में ज्यादा लोचदार व प्रभावशाली होती हैं। इसमें सरकारी प्रतिभूतियों के मूल्यों के परिवर्तन की समस्या उत्पन्न नहीं होती। लेकिन नकद–रिजर्व–अनुपात की विधि पर जमाओं की मात्रा का प्रभाव पड़ता हैं।

नकद–रिजर्व–अनुपात की सीमाएं :–

(1) यह छोटे बैंकों व बड़े बैंकों के बीच भेद नहीं करती, इसलिए छोटे बैंकों को भी अपनी जमाओं का वही अनुपात केन्द्रीय बैंक के पास जमा कराना होता हैं जो बड़े बैंकों को कराना होता हैं।

(2) इस विधि से साख की पूर्ति में थोड़ी मात्रा में परिवर्तन करना कठिन होता हैं, क्योंकि रिजर्व अनुपात के परिवर्तन प्रतिशत के रूप में किये जाते हैं जिनकी निरपेक्ष मात्रा अधिक होती है।

(3) मंदी के समय नकद–रिजर्व–अनुपात को घटाने पर भी साख विस्तार कई अन्य बाधाओं के कारण अधिक नहीं हो पाता क्योंकि उद्यमकर्ताओं को लाभ की सम्भावनाएं नहीं लगती।

(4) गैर–बैंकिंग कम्पनियां इसके दायरे से दूर रह जाती हैं जिससे इसका समस्त मुद्रा बाजार पर असर नहीं पड़ता।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(5) नकद–रिजर्व–अनुपात विधि में इस प्रकार का धक्का सा प्रतीत होता हैं, और बैंकों को इसके अनुसार अपनी उधार की मात्राओं को व्यवस्थित करने में समय लगता हैं। विकासशील देशों में नकद–रिजर्व–अनुपात की विधि का उपयोग बैंक दर व खुले बाजार की क्रियाओं के साथ किया जाता हैं ताकि वांछित परिणाम प्राप्त किये जा सकें। मौटे तौर पर यह कहा जा सकता हैं कि खुले बाजार की क्रियाओं का उपयोग अल्पकालीन उतार–चढ़ावों की स्थिति में ज्यादा लाभकारी होता हैं जबकि परिवर्तनशील नकद–रिजर्व–अनुपात की विधि का उपयोग प्रमुखतया दीर्घकालीन दशाओं में परिवर्तन के लिए किया जाता हैं। खुले बाजार की क्रियाओं की सफलता सरकारी प्रतिभूतियों की मात्रा के लेन देन पर निर्भर करती हैं जबकि नकद–रिजर्व–अनुपात की विधि सरकारी प्रतिभूतियों की मात्रा पर निर्भर नहीं करती। इस प्रकार प्रत्येक विधि की अपनी विशेषताएं व सीमाएं होती हैं। इसलिए इनका मिला–जुला उपयोग ही लाभकारी माना जाता हैं।

वैधानिक तरलता अनुपात (Statutory Liquidity Ratio) :–

नकद–रिजर्व–अनुपात के अलावा केन्द्रीय बैंक व्यपारिक बैंकों के अन्य रिजर्व अनुपात, जैसे – भारत में वैधानिक तरलता अनुपात को भी बदलकर साख–नियन्त्रण का प्रयास कर सकता हैं। कुछ देशों में केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों पर न्यूनतम नकद–रिजर्व–कोषों के अलावा जमाओं का एक निर्धारित प्रतिशत द्वितीयक या पूरक रिजर्व के रूप में रखने की शर्त भी लगा देता हैं, जिसके तहत उन्हें वैधानिक तरलता अनुपात के रूप में (तरल परिसम्पत्तियों के रूप में) जैसे सोना, नकद राशि व सरकारी तथा अन्य स्वीकृत प्रतिभूतियों में अपने पास रिजर्व रखना पड़ता हैं। भारत में 25 अक्टूबर, 1997 से यह अनुपात 25 प्रतिशत रखा गया हैं। इसका ज्यादा अंश सरकारी प्रतिभूतियों के रूप में रखा जाता हैं। भारत में व्यवहार में व्यापारिक बैंकों की शुद्ध समग्र जमाओं का 40 प्रतिशत से भी कुछ अधिक अंश सरकारी प्रतिभूतियों में लगाया गया हैं जो वैधानिक तरलता अनुपात 25 प्रतिशत से बहुत अधिक हैं। स्मरण रहे कि वैधानिक तरलता अनुपात का प्रमुख उद्देश्य सरकार की उधार की आवश्यकताओं को पूरा करना रहा हैं, इसलिए इसे केवल साख नियन्त्रण के साधन के रूप में नहीं देखा जा सकता हैं। 1992 में तो भारत में वैधानिक तरलता अनुपात 38.5 प्रतिशत था जिसे बाद में घटा कर 25 प्रतिशत पर लाया गया हैं। इससे परोक्ष रूप में व्यापारिक बैंकों की साख सजृन की प्रक्रिया पर अवश्य प्रभाव पड़ता हैं, क्योंकि वैधानिक तरलता अनुपात को बढ़ाने पर या बढ़ने पर व्यापारिक बैंकों की निजी क्षेत्र को उधार देने की क्षमता कम हो जाती हैं। इस प्रकार वैधानिक तरलता अनुपात का साख–नियन्त्रण के साधनों के अन्तर्गत उल्लेख किया जाता हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता हैं कि साख–नियन्त्रण के मात्रात्मक उपायों का देश में साख की कुल मात्रा पर गहरा प्रभाव पड़ता हैं। इनसे साख की लागत भी प्रभावित होती हैं। इन विभिन्न उपायों को एक साथ काम में लेने से साख–नियन्त्रण में अधिक सफलता मिलती हैं, जैसे यदि साख का विस्तार करना हो तो बैंक दर को कम करने से, सरकारी प्रतिभूतियों की केन्द्रीय बैंक द्वारा खरीद करने से तथा परिवर्तनशील नकद–रिजर्व–अनुपात को घटाने से इसमें मदद मिलेगी।

लेकिन साख–नियन्त्रण में केवल मात्रात्मक उपायों से काम नहीं चलता। साख का अमुक दिशाओं में उपयोग सुनिश्चित करना भी जरूरी होता हैं। इसलिए साख–नियन्त्रण के गुणात्मक या चयनित उपायों की भी आवश्यकता होती हैं इसका नीचे परिचय दिया जाता हैं।

बोध प्रश्न :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

प्र. 1 बैंक दर का अर्थ बताइए।

.....

.....

.....

प्र. 2 वैधानिक तरलता अनुपात का अर्थ बताइए।

.....

.....

.....

प्र. 3 नकद कोषानुपात से आप क्या समझते हैं ?

.....

.....

.....

प्र. 4 खुले बाजर की क्रियाओं से आपका क्या तात्पर्य हैं ?

.....

.....

.....

3.5 गुणात्मक या विशिष्ट उपाय :– साख नियन्त्रण के गुणात्मक उपायों का उद्देश्य साख के उपयोग को प्रभावित करना होता हैं। इन उपायों के द्वारा साख को उन दिशाओं में प्रभावित किया जाता हैं, जिनकी अमुक समय में देश के विकास के लिए अधिक आवश्यकता होती हैं और उन दिशाओं में जाने से रोका जाता हैं जिनकी देश के लिए कम आवश्यकता होती हैं। साख नियन्त्रण के गुणात्मक उपाय निम्नानुसार हैं :–

3.5.1 न्यूनतम मार्जिन की आवश्यकता :–

मार्जिन की आवश्यकता का अर्थ है कि यह प्रतिभूतियों की किमत का वह अनूपात है जिसे बैंक उधार नहीं देते। जैसे मान लिजिए, केन्द्रीय बैंक मार्जिन 50 प्रतिशत निर्धारित करता है। ऐसी स्थिति में 1000 रु. की प्रतिभूति पर इसके खरीदार को 500 रु. नकद देना होगा, और उसे बैंक से बाकी का 500 रु. का कर्ज मिल जाएगा। यदि मार्जिन बढ़ाकर 60 प्रतिशत कर दिया जाता है तो खरीदार को 600 रु. नकद देना होगा और उसे 400 रु. का कर्ज मिल जाएगा। इस प्रकार मार्जिन को बढ़ाकर अमुक दिशा में खरीदार के लिए कर्ज की मात्रा घटायी जाती है और मार्जिन को घटाकर कर्ज की मात्रा बढ़ायी जाती है। इस प्रकार मार्जिन की आवश्यकता के निर्धारण से कर्ज की मात्रा का निर्धारण होता है। भारत में खाद्यान्नों, तिलहनों, कपास, वनस्पति

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

तेलों आदि वस्तुओ मे सट्टेबाजी व संग्रहण की प्रवृति को रोकने के लिए इस साधन का समय समय पर उपयोग किया गया है। इनके सम्बन्ध में मार्जिन का अनुपात बढ़ाने से उधार में कमी की स्थिति उत्पन्न जाती है और मार्जिन का अनुपात घटाने से उधार में वृद्धि होती है। विभिन्न वस्तुओं की दशाओं को देखकर उनमें सट्टेबाजी को रोकने के लिए मार्जिन के अनुपात बढ़ाये जाते हैं और सामान्य दशाओं में ये अनुपात घटायें जाते है।

3.5.2 न्यूनतम उधार की दरें :–

आजकल टिकाऊ वस्तुओं की बिक्री को बढ़ाने के लिए ग्राहकों को साख की सुविधा प्रदान की जाती है। इसके अन्तर्गत शुरू में एक न्यूनतम राशि का भुगतान करना होता है, और बाद में किस्तों में शेष राशि देनी होती है। मुद्रास्फीति के समय उपभोक्ता साख को थोडा कडा कर दिया जाता है, और मंदी के समय इसे थोडा नरम कर दिया जाता है। इससे उपभोक्ता–वस्तुओं की बिक्री को बढ़ाने में मदद मिलती हैं। अतः माल की किस्तों में बिक्री व खरीद की प्रणाली अधिक लोकप्रिय होती जा रही है।

3.5.3 उधार की अधिकतम सीमाएं :–

केन्द्रीय बैंक को यह अधिकार हैकि वह व्यापारिक बैंकों को उद्धेश्यों के लिए कर्ज की अधिकतम सीमाऍं तय कर सके और बैंक–कर्जों की कुल मात्रा पर प्रतिबन्ध लगा सके। इसके लिए वह उन्हें सामान्य निर्देश दे सकता है, अथवा एक विशेष बैंक को विशेष प्रकार का सौदा न करने का निर्देश दे सकता है। व्यापारिक बैंकों को इन निर्देशों का पालन करना होता है। इसके लिए केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों के लिए परिपत्र जारी करता है। आम तौर पर व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंक के निर्देशों का पालन करने का प्रयास करते है। लेकिन केन्द्रीय बैंक को व्यापारिक बैंक कि आवश्यकताओं का भी पूरा ध्यान रखना होता है।

3.5.4 साख की राशनिंग :–

इसके अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक एक विशेष बैंक या बैंकिंग प्रणाली के लिए साख की मात्राओं को सीमित कर देता हैं। यह कुल साख की मात्रा के रूप में होने पर 'मात्रात्मक नियन्त्रण' का रूप ले लेती हैं और विशेष किस्म की साख से जुड़ी होने पर यह गुणात्मक या चयनित नियन्त्रण का रूप ले लेती हैं। विश्व के विभिन्न देशों में केन्द्रीय बैंकों द्वारा साख की राशनिंग की विधि का प्रयोग किया गया हैं। अधिनायकशाही राज्यों ने इस पद्धति का विशेष रूप से उपयोग किया हैं। साख नियन्त्रण की इस विधि में बैंकों की स्वतंत्रता पर अंकुश लग जाता हैं। इसलिए लोकतांत्रिक देशों में इसे पसन्द नहीं किया जाता हैं। इसे नियोजन की आवश्यकता के लिये अपनाया जा सकता हैं। लेकिन इसका अधिक व्यापक रूप में उपयोग नहीं होना चाहिए।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 साख नियन्त्रण के गुणात्मक या विशिष्ट उपाय बताइए।

.....

.....

.....

प्र. 2 साख की राशनिंग से आप क्या समझते हैं ?

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

.....

.....

.....

प्र. 3 न्यूनतम उधार की दर से आप क्या समझते हैं ?

.....

.....

.....

3.6 अन्य उपाय :– केन्द्रीय बैंक के साख नियन्त्रण के मात्रात्मक एवं गुणात्मक उपायों के अतिरिक्त अन्य उपाय भी हैं जिनका उपयोग भी बैंक द्वारा समय–समय पर किया जाता हैं। अन्य उपाय निम्नलिखित हैं :–

3.6.1 नैतिक दबाव :–

इसके अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों पर नैतिक दबाव डालता हैं ताकि वे मुद्रास्फीति के समय स्वेच्छा से साख पर रोक लगाएं और मंदी के समय साख का विस्तार करें। केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंको को सलाह देता हैं कि वे अमुक प्रकार की बैंकिंग नीति का पालन करें तथा अमुक प्रकार की कर्ज नीति का पालन करें। लेकिन उसकी बात के नहीं माने जाने पर वह कोई सजा नहीं देता। व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंक का सम्मान करते हैं, और वे मात्रात्मक व गुणात्मक साख के नियन्त्रणों को लागू करने में केन्द्रीय बैंक को सहयोग देते हैं, क्योंकि वे केन्द्रीय बैंक से सदैव सहयोग लेना चाहते हैं। इस प्रकार केन्द्रीय बैंक व व्यापारिक बैंकों के बीच परस्पर उच्चस्तरीय व्यवहार बना रहता हैं। व्यवहार में नैतिक दबाव की सफलता केन्द्रीय बैंक के व्यवहार पर निर्भर करती हैं। यदि केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों को भरपूर वित्तीय सहायता देता हैं तो वे निश्चित रूप से उसका नैतिक दबाव स्वीकार करेंगे।

3.6.2 प्रचार :–

केन्द्रीय बैंक साख व व्यापार की दशाओं पर नियमित रूप से आर्थिक विवरण प्रकाशित करते रहते हैं। इससे लोगों को उसकी साख नीति की जानकारी होती रहती हैं। समय–समय पर मौद्रिक व बैंकिंग नीति पर केन्द्रीय बैंक द्वारा किये गये प्रचार का व्यापारिक बैंकों पर गहरा असर होता हैं और उससे साख नियन्त्रण के काम में सहूलियत बढ़ जाती हैं। बैंक दर व खुले बाजर की क्रियाओं के संचालन में प्रचार की भूमिका अहम होती हैं।

3.6.3 प्रत्यक्ष कार्यवाही :–

इसके तहत् केन्द्रीय बैंक एक गुनहगार या दोषी बैंक पर कड़ी कार्यवाही कर सकता हैं जबकि नैतिक दबाव में नैतिक प्रभाव व समझाने–बुझाने पर ही बल दिया जाता हैं। कड़ी कार्यवाही के तहत् केन्द्रीय बैंक दोषी बैंक को पुनर्कटौती की सुविधा से वंचित कर देता हैं, उनकों पूंजी व रिजर्व की राशि से अधिक राशि उधार देने से मना कर देता हैं, और एक सीमा से परे कर्जों पर ऊँची ब्याज–दर लेने लग जाता हैं। लेकिन यह विधि

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

कठोर मानी गयी हैं और आजकल व्यवहार में इसका प्रयोग बहुत सीमित हो गया हैं। लोकतांत्रिक व्यवस्था में प्रत्यक्ष कार्यवाही का महत्व कम हो गया हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियन्त्रण के अन्तर्गत की जाने वाली नैतिक दबाव व प्रत्यक्ष कार्यवाही में अन्तर बताइए।

.....

.....

.....

3.7 सारांश :–

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता हैं कि साख–नियन्त्रण के गुणात्मक उपायों की भी साख नियन्त्रण में बहुत सार्थक व काफी उपयोगी भूमिका होती हैं। लेकिन ये गैर बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं पर लागू नहीं होते जो केन्द्रीय बैंक के नियन्त्रण से काफी परे रहते हैं। साख नियन्त्रण के चयनित उपायों को व्यवहार में अपनाना सुगम नहीं होता। फिर भी विभिन्न देशों की विभिन्न परिस्थितियों में साख नियन्त्रण के मात्रात्मक व गुणात्मक उपायों को एक दूसरे के पूरक के रूप में अपनाने से वहीं की अर्थव्यवस्था को काफी लाभ मिल सकता हैं। देश की आवश्यकताओं के अनुसार, साख–नियन्त्रण की विधि का चुनाव किया जाना चाहिए। इसके बारे में केन्द्रीय बैंक का निर्णय ही सर्वमान्य समझा जाता हैं क्योंकि वह आर्थिक स्थिति से पूरी तरह अवगत होता हैं। केन्द्रीय बैंक अपने अनुभव के आधार पर साख–नियन्त्रण की विधि, उसको लागू करने के समय, विभिन्न विधियों की पूरकता और तीव्रता, आदि का निर्णय करता हैं और इस सम्बन्ध में देश के वित्त विभाग से भी सलाह मशविरा करता हैं। विकासशील देशों में साख नियन्त्रण का महत्व विकसित देशों से कम नहीं होता हैं और यह भी मौद्रिक व साख नीति का प्रमुख अंग माना जाता हैं।

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न :–

निम्न प्रश्नों के उत्तर 500 शब्दों में दीजिए।

प्रश्न 1. भारतीय रिजर्व बैंक साख नियन्त्रण किस प्रकार करता हैं ? इस संबंध में चयनात्मक साख नियन्त्रण की कार्यविधि तथा उसका महत्व बताइए।

प्रश्न 2. भारतीय रिजर्व बैंक की साख नियन्त्रण की नीति की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।

3.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.3 के उत्तर

1. दो प्रकार के – (1) मात्रात्मक उपाय (2) गुणात्मक उपाय
2. बैंक दर, खुले बाजार की क्रियांए, नकद कोषानुपात में परिवर्तन, वैधानिक तरलता अनुपात में परिवर्तन

3.4 के उत्तर

1. बैंक दर वह दर होती हैं जिस पर केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंकों के विनिमय बिलों की पुनर्कटौती करता हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

2. केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैंको पर न्यूनतम नकद रिजर्व कोष के अलावा जमाओं का एक निर्धारित प्रतिशत द्वितीयक रिजर्व के रूप में रखने की शर्त लगाता हैं, जिसे वैधानिक तरलता अनुपात कहते हैं।
3. व्यापारिक बैंकों को अपनी शुद्ध मांग व अवधि जमाओं का एक निश्चित अनुपात केन्द्रीय बैंक के पास जमा करवाना होता हैं, जिसे नकद कोष अनुपात कहा जाता हैं।
4. खुले बाजार की क्रियाओं का अर्थ होता हैं कि केन्द्रीय बैंक प्राथमिक परिसम्पत्तियों जैसे – सोना अथवा विदेशी विनिमय का खुले बाजार में क्रय विक्रय करें।

3.5 के उत्तर

1. (1) न्यूनतम मार्जिन की आवश्यकता (2) न्यूनतम उधार की दरें (3) उधार की अधिकतम सीमाएं (4) साख की राशनिंग
2. इसके अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक एक विशेष बैंक या बैंकिंग प्रणाली के लिए साख की मात्राओं को सीमित कर देता हैं। यह कुल साख की मात्रा के रूप में होने पर 'मात्रात्मक नियन्त्रण' का रूप ले लेती हैं और विशेष किस्म की साख से जुड़ी होने पर यह गुणात्मक या चयनित नियन्त्रण का रूप ले लेती हैं।
3. टिकाऊ वस्तुओं की बिक्री को बढ़ाने के लिए ग्राहकों को साख की सुविधा प्रदान की जाती है।

3.6 के उत्तर

1. प्रत्यक्ष कार्यवाही के अन्तर्गत केन्द्रीय बैंक एक दोषी बैंक पर कड़ी कार्यवाही कर सकता हैं जबकि नैतिक दबाव में नैतिक प्रभाव व समझाने बुझाने पर ही बल दिया जाता हैं।

3.9 संदर्भ ग्रंथ

1. मिश्रा एवं पुरी, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
2. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम्, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
3. सारस्वत, शर्मा, गुप्ता, गोधा, 'बैंकिंग एवं वित्तीय व्यवस्था'
4. लक्ष्मीनारायण नाथूरामका, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा सार्वजनिक वित्त'
5. बी. एल. ओझा, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा राजस्व'

3.10 शब्द कोष

न्यूनतम मार्जिन	न्यूनतम उधार
साख की राशनिंग	बैंक दर
परिवर्तनशील नकद अनुपात	वैधानिक तरलता अनुपात
खुले बाजार की क्रियाएं	नैतिक दबाव
प्रचार	प्रत्यक्ष कार्यवाही
मुद्रास्फीति	अवस्फीति
मौद्रिक प्रबंध	साख–संकुचन
मात्रात्मक	गुणात्मक
विनिमय बिलों	बट्टा दर

बिल बाजार

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

इकाई – 4

मौद्रिक नीति

4.0 इकाई की रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 मौद्रिक नीति का अर्थ

4.4 मौद्रिक नीति के उद्देश्य

4.4.1 तटस्थ मुद्रा उद्देश्य

4.4.2 विनिमय दरों में स्थिरता

4.4.3 मूल्यों में स्थिरता

4.4.4 पूर्ण रोजगार

4.4.5 आर्थिक विकास

4.5 भारत की मौद्रिक नीति के उद्देश्य

4.6 भारत की मौद्रिक नीति के मुख्य तत्व

4.7 सारांश

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.10 शब्द कोष

4.11 संदर्भ ग्रंथ

4.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(i) मौद्रिक नीति का क्या अर्थ हैं ?

(ii) मौद्रिक नीति के उद्देश्य क्या हैं ?

(iii) भारत की मौद्रिक नीति के क्या उद्देश्य हैं ?

(iv) भारत की मौद्रिक नीति के मुख्य तत्व क्या हैं ?

4.2 प्रस्तावना :–

प्रस्तुत इकाई में मौद्रिक नीति का अर्थ तथा इसके उद्देश्यों के बारे में विस्तृत विवेचना की गई हैं। मौद्रिक नीति देश की वित्तीय व्यवस्था का आधार होती हैं। देश का आर्थिक विकास मौद्रिक नीति के सफल संचालन पर निर्भर करता हैं। केन्द्रीय बैंक का यह महत्वपूर्ण कार्य होता हैं कि वह मुद्रा निर्गमन तथा साख पर नियन्त्रण रखें। मुद्रा पर नियन्त्रण का अभिप्राय साख की मात्रा पर नियन्त्रण से ही हैं, क्योंकि मुद्रा की कुल पूर्ति की गणना में साख मुद्रा भी सम्मिलित होती हैं। भारतीय रिर्जव बैंक केन्द्रीय बैंक होने के नाते देश की मौद्रिक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

व्यवस्था का संचालन, नियमन एवं नियन्त्रण करता हैं। इस दृष्टि से रिर्जव बैंक द्वारा जारी की गई मौद्रिक नीति विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती हैं।

4.3 मौद्रिक नीति का अर्थ :–

सामान्यतया केन्द्रीय बैंक द्वारा मुद्रा प्रसार एवं मुद्रा संकुचन के प्रबन्ध को ही मौद्रिक नीति की संज्ञा दी जाती हैं। सामान्य शब्दों में मौद्रिक नीति से अभिप्राय केन्द्रीय बैंक की साख नीति से ही होता हैं। विभिन्न विद्वानों की मौद्रिक नीति को परिभाषित किया हैं। कुछ प्रमुख परिभाषाएं इस प्रकार हैं :–

प्रो. आर.पी. केन्ट :– ''मौद्रिक नीति का आशय एक निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मुद्रा के विस्तार एवं संकुचन की व्यवस्था करने से हैं।''

प्रो. पॉल इंजिग :– ''मौद्रिक नीति में समस्त मौद्रिक निर्णय एवं उपाय चाहे उनके उद्देश्य मौद्रिक हो अथवा गैर–मौद्रिक, निर्णय तथा उपाय सम्मिलित होते हैं अथवा जो मौद्रिक–व्यवस्था को प्रभावित करते हैं।''

प्रो. हैरी.जी. जॉनसन :– ''मौद्रिक नीति से आशय केन्द्रीय बैंक की उस नीति से हैं जिसके माध्यम से केन्द्रीय बैंक सामान्य आर्थिक नीति के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मुद्रा की पूर्ति पर नियन्त्रण करता हैं।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता हैं कि मौद्रिक नीति का प्रत्यक्ष सम्बन्ध मुद्रा की पूर्ति के नियमन से हैं। मुद्रा की पूर्ति का नियमन उसकी कुल मात्रा में परिवर्तन द्वारा, मुद्रा एवं साख की गति में परिवर्तन द्वारा तथा मुद्रा एवं साख की उपलब्धि में परिवर्तन द्वारा किया जा सकता हैं। यद्यपि मुद्रा की गति में परिवर्तन रिर्जव बैंक के नियन्त्रण में नहीं होता हैंफिर भी अपनी साख नियन्त्रण नीति के माध्यम से उसकी गति पर नियन्त्रण स्थापित करने का प्रयास केन्द्रीय बैंक करता हैं। मौद्रिक नीति के संकुचन अर्थ के साथ–साथ इसके व्यापक आधार पर भी इसको परिभाषित किया जाता हैं। व्यापक अर्थ में पॉल इंजिग द्वारा दी गई परिभाषा उपयुक्त प्रतीत होती हैं। इसके अनुसार मुद्रा मूल्य एवं उसकी पूर्ति पर प्रभाव डालने वाले मौद्रिक एवं गैर–मौद्रिक उपाय मौद्रिक नीति के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाते हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 मौद्रिक नीति का अर्थ बताइये।

.....

.....

.....

प्र. 2 मौद्रिक नीति की प्रो. पॉल इंजिग की परिभाषा दीजिये।

.....

.....

.....

4.4 मौद्रिक नीति के उद्देश्य :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

मौद्रिक नीति के उद्देश्य, आर्थिक नीतियों से सम्बन्धित रहते हैं। अतः मौद्रिक एवं आर्थिक नीतियों के उद्देश्य भिन्न–भिन्न नहीं हो सकते हैं। वास्तविक स्थिति तो यह हैं कि आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए ही मौद्रिक नीति के उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं। अतः जब आर्थिक नीतियों में परिवर्तन किया जाता हैं तो उसके साथ ही मौद्रिक नीति के लक्ष्यों में भी परिवर्तन कर दिया जाता हैं। सामान्यतः मौद्रिक नीति के निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं :–

4.4.1 तटस्थ मुद्रा उद्देश्य (Netural Money Objective) :–

अर्थशास्त्रियों का यह मत रहा हैं कि मुद्रा को तटस्थ बनाये रखना, मौद्रिक नीति का उद्देश्य होना चाहिए। मुद्रा को तभी तटस्थ माना जा सकता हैं जबकि उसकी मात्रा में होने वाले परिवर्तनों का प्रभाव देश की अर्थव्यवस्था पर न पड़े। इन लेखकों की यह मान्यता रही हैं कि आर्थिक जगत में जो उतार–चढ़ाव होते हैं, उनका प्रमुख कारण मौद्रिक परिवर्तन ही हैं। इस मान्यता का आधार यह हैं कि जब मुद्रा की मात्रा में वृद्धि होती हैं तो उसके परिणामस्वरूप वस्तुओं एवं सेवाओं की मांग में भी तत्काल वृद्धि हो जाती हैं क्योंकि जनसाधारण की मौद्रिक आय बढ़ जाती हैं। परन्तु इसके विपरित उत्पादन में तत्काल प्रभाव में वृद्धि नहीं होती हैं। ऐसी स्थिति में मूल्यों में वृद्धि होना स्वाभाविक ही हो जाता हैं।

यदि मुद्रा की मात्रा में कमी हो जाती हैं तो जनसाधारण की मौद्रिक आय में भी कमी हो जाती हैं, अतः वस्तुओं एवं सेवाओं की मांग कम हो जाती हैं। परन्तु उनके उत्पादन में तत्काल प्रभाव से कोई कमी नहीं होती हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता हैं कि मुद्रा की मात्रा में पूर्ति अथवा कमी के फलस्वरूप अर्थव्यवस्था में अस्थिरता उत्पन्न हो जाती हैं। मुद्रा के विस्तार अथवा संकुचन दोनों ही स्थितियों में मांग एवं पूर्ति का संतुलन बिगड़ जाता हैं। मौद्रिक नीति के सम्बन्ध में मुद्रा की तटस्था का लक्ष्य यह हैं कि मुद्रा की मात्रा में परिवर्तन के कारण मून्य स्तरों, उत्पादन, रोजगार एवं आय की मात्रा में होने वाले परिवर्तनों के प्रभावों से अर्थव्यवस्था को मुक्त रखा जाए। अतः यह कहा जा सकता हैं कि तटस्थ मुद्रा नीति यह प्रतिपादित करती हैं कि मुद्रा की कुल मात्रा इस प्रकार नियन्त्रित की जाए कि उसमें होने वाले परिवर्तनों का प्रभाव देश की अर्थव्यवस्था पर न पड़ें तथा देश में कुल उत्पादन, समस्त सौदे, वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्यों का स्तर, एक कुशल वस्तु विनिमय प्रणाली अथवा मुद्रा विहिन प्रणाली के समान ही रहे।

यह स्पष्ट होता हैं कि मुद्रा का प्रयोग केवल विनिमय के माध्यम तथा मूल्य मापक के रूप में ही सीमित रखा जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त मुद्रा का प्रयोग अन्य किसी उद्देश्य के लिए नहीं किया जाना चाहिए। इस नीति के समर्थकों का यह मत रहा हैं कि मौद्रिक परिवर्तन के प्रभाव अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में बहुत गहरे एवं भंयकर होते हैं, जिन्हें 'व्यापार चक्रों' (ज्तंकम बलबसमे) की संज्ञा दी जाती हैं। मौद्रिक व्यवस्था के सफल संचालन में उत्पन्न सभी व्यवधानों के लिए मुद्रा की मात्रा में परिवर्तन ही उत्तरदायी होते हैं। ये परिवर्तन अर्थव्यवस्था को विपरित रूप से प्रमाणित करते हैं।

तटस्थ मुद्रा उद्देश्य की आलोचना (Criticism of Neutral Money Objective) :– तटस्थ मुद्रा नीति के इस उद्देश्य की आलोचना निम्नांकित आधारों पर की जाती हैं :–

(1) गलत धारणाओं पर आधारित (Based on wrong assumptions) :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

तटस्थ मुद्रा–नीति, मुद्रा के पारिमाणिक सिद्धान्त (फनंदजपजल जीमवतल वि उवदमल) पर आधारित हैं। यह सिद्धान्त इस तथ्य की ओर इंगित करता हैं कि मुद्रा की मात्रा तथा मूल्य–स्तर में प्रत्यक्ष आनुपातिक सम्बन्ध होता हैं। परन्तु मुद्रा के पारिमाणिक सिद्धान्त में अनेक दोष पाये जाते हैं। वर्तमान अर्थशास्त्री इस सिद्धान्त को अधिक उपयुक्त नहीं मानते हैं। अतः इस सिद्धान्त पर आधारित अन्य कोई विचारधारा अधिक तर्कसंगत नहीं हो सकती हैं।

(2) नीति के क्रियान्वयन में कठिनाई (Problem in implementations) :–

तटस्थ मुद्रा नीति के समर्थक इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि अर्थव्यवस्था में स्थिरता बनाये रखने के लिए मुद्रा पूर्ति में भी स्थिरता आवश्यक हैं। अर्थव्यवस्था में यदि कोई मूलभूत परिवर्तन होते हैं तो ऐसी दशा में मुद्रा की पूर्ति को इन परिवर्तनों के साथ समायोजित करना पड़ता हैं। इस प्रकार मुद्रा–पूर्ति को एक निश्चित स्तर पर स्थिर रखना असम्भव होता हैं।

(3) मूल्यों में स्थिरता बनाये रखना सम्भव नहीं (Not possible to maintain price stabilities) :– 'तटस्थ मुद्रा नीति' का एक प्रमुख उद्देश्य यह हैं कि इस नीति के माध्यम से मूल्य स्तरों में स्थिरता स्थापित की जायें। किन्तु यह उद्देश्य अधिक तर्कसंगत नहीं है। मूल्यों में स्थिरता बनाये रखने के लिए मुद्रा की पूर्ति को एक निश्चित स्तर पर बनाए रखना आवश्यक होता है तथा ऐसा सम्भव भी हो सकता है। परन्तु इसी अवधि में तकनीकी सुधार के कारण उत्पादन–लागतों में कमी आ जाती है, तो ऐसी दशा में मूल्य स्तर में गिरावट आ जाना स्वाभाविक ही होता हैं। इस प्रकार तटस्थ मुद्रा नीति में भी अर्थव्यवस्था में आने वाले उच्चावचनों की सम्भावनाओं को पूर्णतया समाप्त नही किया जा सकता हैं।

(4) स्वतः ही विरोधाभासी (Self Contradictory) :–

तटस्थ मुद्रा नीति विरोधाभासी है। इस नीति के समर्थक इस तथ्य को प्रतिपादित करते हैं कि अर्थव्यवस्था में सरकारी हस्तक्षेप नही होना चाहिए। इस प्रकार तटस्थ मुद्रा नीति 'स्वतन्त्र व्यापार दर्शन' पर आधारित है। इसके साथ–साथ यह भी तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि मुद्रा कि पूर्ति निश्चित स्तर पर बनाये रखी जाए तथा अर्थव्यवस्था में उत्पन्न परिवर्तनों के अनुसार मुद्रा पूर्ति में वृद्धि अथवा कमी की जाये। यह स्पष्ट है कि उपर्युक्त तर्क पहले प्रस्तुत तर्क के ठीक विपरीत है।

(5) अव्यावहारिक (Unpracticable) :–

तटस्थ मुद्रा–नीति को व्यवहारिक नहीं कहा जा सकता है, क्योकि अनेक परिस्थितियों मे इसे क्रियान्वित करना सम्भव नहीं होता है। हमारे समाज की रचना प्रावैगिकशील है, जहॉ सभी आर्थिक तत्त्व परिवर्तनशील है। अतः ऐसी स्थिति में मुद्रा की मात्रा को एक निश्चित स्तर पर स्थिर रखना सम्भव नही हो सकता। समाज में अनेक परिवर्तनों के फलस्वरूप मुद्रा की पूर्ति में वृद्धि अथवा कमी करना आवश्यक हो जाता है। उदाहरर्णाथ, अर्थव्यवस्था में मंदी की स्थिति की दशा में सुधार हेतु मुद्रा प्रसार एक अनिवार्य आवश्यकता होती है। इसी प्रकार अविकसित, अल्पविकसित तथा विकासशील अर्थव्यवस्था के संदर्भ में भी मुद्रा प्रसार एक आवश्यक तत्त्व होता है।

(6) मंदी की स्थिति को बताने में असमर्थ (Unable to show the situation of depression) :– तटस्थ मुद्रा नीति की विचारधारा इस तथ्य को स्पष्ट करने की दिशा में असमर्थ रहती है कि अर्थव्यवस्था में मन्दी की

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

परिस्थितियॉ क्यों उत्पन्न होती है? मन्दी काल में यद्यपि मुद्रा की पूर्ति में कोई कमी नही आती है, फिर भी किमतों में गिरावट उत्पन्न हो जाती है। ऐसी स्थिति में मुद्रा की पूर्ति में विस्तार के बावजूद भी अर्थव्यवस्था में सुधार के लक्षण दृष्टिगत नही होते है।

(7) तटस्थ मुद्रा नीति का आधार सही नहीं हैं (Basis of Neutral Money Policy is not correct) :–

इस नीति के अन्तर्गत मुद्रा के योगदान को निष्क्रिय माना गया है। इस तथ्य में अधिक सत्यता नही है, क्योंकि वर्तमान युग में आर्थिक क्रियाओं के संचालन में मुद्रा एक सक्रिय भूमिका का निर्वाह करती है। अतः मुद्रा एक सक्रिय भूमिका का निर्वाह करती है। अतः मूद्रा किसी भी स्थिति में तटस्थ नही रह सकती है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इस नीति का आधार सही नहीं हैं तथा यह विचारधारा पूर्णरूप से अव्यावहारिक एवं अनुपयुक्त है। गतिशील अर्थव्यवस्था में तटस्थ मुद्रा नीति आर्थिक उच्चावचनों की समस्या का प्रभावी समाधान प्रस्तुत नहीं कर सकती है। वस्तु–स्थिति यह है कि इस नीति के अर्न्तगत मुद्रा की मात्रा को अधिक समय तक स्थिर नही रखा जा सकता है।

4.4.2 विनिमय दरों में स्थिरता (Exchange rate stability) :–

परम्परागत विचारधारा के अनुसार साख–नियन्त्रण का उद्धेश्य विनिमय दरों में स्थिरता बनायें रखना होता हैं। अतः मौद्रिक अधिकारीयों को विनिमय दरों में अस्थिरता उत्पन्न करने वाली शक्तियों पर उचित नियन्त्रण स्थापित करने की दिशा में सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिए। विनिमय दरों में अत्यधिक उच्चावचन अर्थव्यवस्था के लिए हितकर सिद्ध नहीं होते हैं। जहां तक विनिमय दरों में सीमित परिवर्तनों का संबंध हैं, मौद्रिक अधिकारियों को उनका समायोजन के लिये आन्तरिक मूल्य स्तरों में परिवर्तन करते रहना चाहिए।

विनिमय दरों में अत्यधिक उतार–चढ़ाव के कारण बाजार में परिकाल्पनिक क्रियाओं को प्रोत्साहन मिलता हैं। इसके अतिरिक्त विनिमय दरों में अनावश्यक परिवर्तनों के कारण ऐसे देशों की मुद्रा के प्रति विदेशी विनियोगकत्ताओं का विश्वास कम हो जाता हैं तथा वे अपनी पूंजी का बहिर्गमन प्रारम्भ कर देते हैं। विनिमय दरों में अत्यधिक उतार–चढ़ाव के कारण आन्तरिक मूल्य स्तर भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित होते हैं।

स्वर्णमान प्रणाली के अन्तर्गत मौद्रिक नीति का लक्ष्य विनिमय दरों में स्थिरता बनाये रखना था, परन्तु अनेक कारणों से जब विभिन्न राष्ट्रों द्वारा स्वर्णमान का परित्याग कर दिया गया तो उस दशा में विनिमय दरों में स्थिरता बनाये रखना संभव नहीं रहा। यह कहा जा सकता हैं कि विनिमय दरों में स्थिरता बनाये रखने की नीति अन्य देशों के साथ आर्थिक, राजनैतिक एवं मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के सन्दर्भ में अधिक तर्कसंगत हैं। यह नीति विभिन्न देशों के बीच परस्पर सद्भाव और मौद्रिक सहयोग बढ़ाने में अधिक उपयोगी सिद्ध होती हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव तथा आर्थिक एवं सामाजिक विकास के सम्बन्ध में आज भी अनेक अर्थशास्त्री मौद्रिक नीति के उद्देश्य के रूप में विनिमय स्थिरता की विचारधारा का समर्थन करते हैं। उनकी यह मान्यता हैं कि इस नीति के अनुसरण के फलस्वरूप अधिकतम सामाजिक एवं आर्थिक कल्याण के लक्ष्य प्राप्त किये जा सकते हैं।

विनिमय दर स्थिरता उद्देश्य की आलोचनाएं :– विनिमय दर स्थिरता की निम्नांकित आलोचनाएं की जाती हैं :–

(1) विनिमय दरों में स्थिरता का लक्ष्य, आन्तरिक मूल्य स्तरों की बलिवेदी पर ही प्राप्त किया जा सकता हैं, अतः विनिमय दरों में स्थिरता की नीति का यह एक गम्भीर दोष हैं। इस नीति के अन्तर्गत आन्तरिक मूल्य अस्थिरता की विकट समस्या उत्पन्न हो जाती हैं। आन्तरिक मूल्य अस्थिरता के फलस्वरूप अर्थव्यवस्था का

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

संतुलन समाप्त हो जाता हैं तथा देश की आर्थिक प्रगति में गम्भीर बाधांए उत्पन्न हो जाती हैं। स्वर्णमान प्रणाली के अन्तर्गत विनिमय दरों की स्थिरता का लक्ष्य तो प्राप्त किया जा सकता था किन्तु आन्तरिक मूल्य स्तरों में स्थिरता बनाए रखना एक गम्भीर समस्या थी।

(2) विनिमय दरों में स्थिरता के लक्ष्य का एक दोष यह भी हैं कि इसके अन्तर्गत विश्व के विभिन्न राष्ट्र एक–दूसरे पर आश्रित हो जाते हैं। इस कारण यह हैं कि किसी एक देश में उत्पन्न मौद्रिक परिवर्तनों (मुद्रा प्रसार व मुद्रा संकुचन) का प्रभाव अन्य देशों की अर्थव्यवस्था को भी विपरित रूप से प्रभावित करता हैं। विनिमय दरों में स्थिरता बनाये रखने के उद्देश्य से इन मौद्रिक परिवर्तनों से ग्रसित देश ऐसे उपायो को क्रियान्वित करने में असमर्थ रहते हैं जो इनकुप्रभावों को रोक सकें। विनिमय स्थिरता की नीति के फलस्वरूप देश की आन्तरिक अर्थव्यवस्था पर गहरे प्रभाव पड़ते हैं जो बहुत अधिक हानिकारक होते हैं।

(3) विनिमय स्थिरता के फलस्वरूप न केवल आन्तरिक अर्थव्यवस्था में असन्तुलन हो जाता हैं, अपितु इसके कारण अनेक राजनैतिक व सामाजिक समस्याएं भी उत्पन्न हो जाती हैं।

4.4.3 मूल्यों में स्थिरता (Price stability) :–

मौद्रिक नीति का एक उद्देश्य आन्तरिक मूल्यों में स्थायित्व बनाये रखना भी हैं। गस्टब केसिल तथा लार्ड कीन्स ने बहुत पहले ही मौद्रिक नीति के इस उद्धेश्य की वांछनीयता के समर्थन में उपना मत व्यक्त किया था। परन्तु स्वर्णमान के युग में विनिमय दरों में स्थायित्व बनायें रखना, मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्धेश्य था। सन् 1931 में स्वर्णमान के पतन के पश्चात् साख–नियन्त्रण का प्रमुख लक्ष्य, विनिमय दरों में स्थिरता की अपेक्षा आन्तरिक मूल्य स्तरों तथा व्यापारिक–चक्रों को नियंत्रित करना अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाने लगा था। सन् 1929–1933 की विश्व–व्यापी आर्थिक मंदी के पश्चात् मौद्रिक नीति की मूल्य स्थिरता के अद्धेश्य को और भी अधिक मान्यता प्रदान की जाने लगी। मूल्य–स्तरों में उच्चावचनों के फलस्वरूप व्यापारिक क्रियाओं में भी उतार–चढ़ाव आते है। बढ़ते हुए मूल्यों की स्थिति में व्यापारिक क्रियाओं में तेजी उत्पन्न होती है तथा उत्पादन एवं रोजगार के उवसरों में वृद्धि हो जाती है। इसके विपरीत मूल्यों में गिरावट की दशा में व्यापारिक क्रियाओं में शिथिलता आती है तथा उत्पादन तथा रोजगार के अवसरों में कमी हो जाती है। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप देश में आर्थिक एवं सामाजिक अशांति पैदा हो जाती है। आन्तरिक मूल्य स्तरों में गिरावट और भी कष्टदायक सिद्ध होती है क्योंकि एक बार इस प्रणाली की स्थिति उत्पन्न हो जाने पर इस पर नियन्त्रण स्थापित करना कठिन हो जाता है। अतः इस परिश्रम में आन्तरिक मूल्य स्तरों में स्थिरता बनाये रखना मौद्रिक नीति का मुख्य उद्धेश्य माना गया है।

मूल्य स्तर में स्थिरता का अर्थ यह नहीं है कि विभिन्न वस्तुओं अथवा सामूहिक मूल्य स्तर बने रहे। इसका वास्तविक अर्थ यह है कि थोक मूल्य निर्देशांक द्वारा सूचित औसत मूल्य स्तर को निश्चित सीमाओं से अधिक घटने बढ़ने न दिया जाए।

व्यावयहारिक आधार पर यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि मूल्य स्थिरता के लक्ष्य को प्राप्त करना एक कठिन समस्या है। एक केन्द्रीय बैंक द्वारा इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सम्पूर्ण एवं प्रभावी आधार पर साख की मात्रा को नियन्त्रित नहीं किया जा सकता हैं, क्योंकि गैर–बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं की क्रियाओं पर उसका नियन्त्रण नहीं होता हैं। इसी प्रकार गिरते हुए मूल्यों को मुद्रा प्रसार के द्वारा रोका जाना सम्भव नहीं होता हैं, क्योंकि मुद्रा की मात्रा तथा मूल्य स्तरों में प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता हैं। विश्वव्यापी आर्थिक मन्दी के काल में इस

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

सम्बन्ध में कटु अनुभव हो चुका हैं। यद्यपि विनिमय दरों में स्थिरता की तुलना में मूल्य स्थिरता के लक्ष्य में अनेक अच्छाईयां हैं लेकिन इसे मौद्रिक नीति का एक आदर्श लक्ष्य नहीं माना जा सकता हैं। वास्तव में मौद्रिक नीति का यह लक्ष्य मूल्य स्तरों में स्थिरता एवं व्यापारिक क्रियाओं के चक्रीय परिवर्तनों को रोकना बहुत ही अल्प अवधि तक मान्य रहा हैं। इसके स्थान पर कीन्स द्वारा प्रतिपादित पूर्ण रोजगार तथा आदर्श प्रतिस्थापन कर दिया गया हैं। इस विचारधारा के समर्थकों ने यह मत व्यक्त किया हैं कि पूर्ण रोजगार का आदर्श अपने में स्वतः ही विनिमय स्थिरता एवं मूल्य स्थायित्व दोनों ही लक्ष्यों को सम्मिलित कर लेता हैं।

मूल्य स्थिरता नीति के विकल्प :–

कुछ अर्थशास्त्रियों के मूल्य स्तर में स्थायित्व बनाये रखने की अपेक्षा निरन्तर बढ़ते हुए अथवा गिरते हुए मूल्य स्तरों की नीति का सुझाव प्रस्तुत किया हैं। इन अर्थशास्त्रियों द्वारा प्रतिपादित तर्कों का उल्लेख निम्नांकित रूप में किया जा सकता हैं :–

(1) उत्पादन को प्रोत्साहन :–

निरन्तर बढ़ते हुए मूल्य–स्तर की नीति के पक्ष में सबसे सबल तर्क यह प्रस्तुत किया जाता हैं इसके अन्तर्गत अर्थव्यवस्था सक्रिय एवं गतिशील बनी रहती हैं। उत्पादन को प्रोत्साहन मिलता हैं क्योंकि लाभों में वृद्धि होती हैं। इसके अतिरिक्त निवेश भी अधिकाधिक मात्रा में किये जाते हैं। वास्तव में धीरे–धीरे बढ़ते हुए मूल्य–स्तर उत्पादन तथा व्यापारिक क्रियाओं के लिए उपयोगी सिद्ध होते हैं।

(2) पूंजी निर्माण में सहायक :– बढ़ती हुई कीमतों की नीति के अन्तर्गत राष्ट्रीय आय का वितरण ऐसे समृद्धिशाली वर्ग के लोगों के पक्ष में होता हैं जिनमें बचत करने की क्षमता अपेक्षाकृत अधिक होती हैं। अतः इन परिस्थितियों में बचत एवं पूंजी निर्माण को प्रोत्साहन मिलता हैं। बचत एवं पूंजी निर्माण का प्रयोग अर्थव्यवस्था के संचालन में किया जाना सम्भव होता हैं। अतः अल्पविकसित देशों में जहां विनियोग योग्य पूंजी का अभाव होता हैं यह नीति अधिक लाभप्रद सिद्ध होती हैं।

(3) व्यावसायिक समृद्धि में वृद्धि :–

बढ़ती हुई कीमतों का एक लाभ यह भी हैं कि इससे देश में व्यावसायिक समृद्धि को अधिक प्रोत्साहन मिलता हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चका हैं कि इस नीति के अन्तर्गत विनियोग एवं व्यावसायिक क्रियाओं में वृद्धि होती हैं, फलस्वरूप रोजगार एवं आर्थिक कल्याण के उच्चतम लक्ष्य प्राप्त किये जा सकते हैं।

(4) मुद्रा संकुचन के प्रभावों को सीमित करना :–

बढ़ती हुई कीमतों की नीति के माध्यम से मुद्रा संकुचन की परिस्थितियों तथा उनके प्रभावों को सीमित किया जा सकता हैं।

(5) निश्चित आय वर्ग वाले लोगों पर कोई प्रभाव नहीं :–

मुद्रा प्रसार की दशा में निश्चित आय वर्ग सबसे अधिक प्रभावित होता हैं। किन्तु इसके विपरित धीमी गति से बढ़ते हुए मूल्यों की स्थिति में इस वर्ग पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता हैं।

(6) उपभोग को प्रोत्साहन :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

धीमी गति से बढ़ते हुए मूल्यों की दशा में न केवल उत्पादन गतिविधियों को प्रोत्साहन मिलता हैं, अपितु उपभोग स्तर में वृद्धि होती हैं। क्योंकि अधिक उत्पादन के कारण आय में बढ़ोतरी होती हैं, फलस्वरूप वे अधिकाधिक वस्तुओं की मांग करते हैं।

4.4 पूर्ण रोजगार का उद्देश्य (Objective of Full Employment) :–

लार्ड कीन्स ने अपनी नवीन प्रकाशित पुस्तक (जीम ळमदमतंस जीमवतल व िम्उचसवलउमदजए प्दजमतमेज ंदक डवदमल) रोजगार, ब्याज एवं मुद्रा के सामान्य सिद्धान्त में यह प्रतिपादित किया गया हैं कि मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्देश्य 'पूर्ण रोजगार प्राप्ति' का होना चाहिए। इस सम्बन्ध में लार्ड कीन्स ने यह मत व्यक्त किया हैं कि पूर्ण रोजगार प्राप्ति लक्ष्य में विनिमय स्थायित्व एवं मूल्य स्थिरता के लक्ष्य स्वतः ही सम्मिलित हो जाते हैं। उनके मतानुसार मौद्रिक नीति का उद्देश्य व्यापार चक्रों में आने वाले उच्चावचनों को सीमित कर, बचत और विनियोगों में पूर्ण रोजगार के बिन्दु पर साम्य स्थापित करना होना चाहिए। मंदी काल में व्यापक रूप से फैली हुई बेरोजगारी के कारण पूर्ण रोजगार मौद्रिक नीति का एक प्रमुख लक्ष्य निर्धारित किया गया। जैसा कि पहले उल्लेख किकया जा चुका हैं कि स्वर्णमान प्रणाली के काल में मौद्रिक नीति के उद्देश्य के रूप में 'पूर्ण रोजगार की नीति' को कोई प्राथमिकता प्रदान नहीं की जाती थी। उस काल में विनिमय स्थायित्व को मौद्रिक नीति के रूप में विशेष मान्यता प्रदान की जाती थी। किन्तु स्वर्णमान के पतन के पश्चात प्रतिबन्धित मुद्रा मान के अपनाये जाने पर मौद्रिक नीति के इस उद्देश्य को मान्यता प्रदान की जाने लगी। अतः वर्तमान युग में विश्व के अधिकांश देशों द्वारा अपनी मौद्रिक नीति का उद्देश्य पूर्ण रोजगार की स्थिति को प्राप्त करना स्वीकार कर लिया गया।

मौद्रिक नीति के 'पूर्ण रोजगार उद्देश्य' का विस्तृत अध्ययन करने के पूर्व पूर्ण रोजगार विचारधारा को समझना आवश्यक हैं। बेरोजगारी एक सामाजिक एवं आर्थिक बुराई हैं। यह समस्या देश के आर्थिक प्रगति में विशेष व्यवधान उपस्थित करती हैं। यही कारण हैं कि आज प्रत्येक राष्ट्र बेकारी एवं बेरोजगारी की समस्या के निवारण के सन्दर्भ में अपनी आर्थिक एवं मौद्रिक नीति का उद्देश्य पूर्ण रोजगार की स्थिति बनाये रखना निर्धारित किया हैं। पूर्ण रोजगार की स्थिति का यह अर्थ नहीं हैं कि किसी देश में सभी कार्य योग्य व्यक्ति कार्य पर लगे हुए हो और बेरोजगारी शून्य स्तर पर हो। अनेक कारणों से कार्य योग्य जनसंख्या का दो या तीन प्रतिशत भाग बेरोजगार रह सकता हैं। वास्तव में देखा जाये तो यह स्पष्ट होगा कि पूर्ण रोजगार की स्थिति में कोई भी देश ऐच्छिक, मौसमी, आकस्मिक, तकनीकी, समयपरक आदि विभिन्न प्रकार की बेरोजगारी दशाओं से मुक्त नहीं हो सकता हैं।

इस प्रकार यह कहा जा सकता हैं कि पूर्ण रोजगार की स्थिति में भी उपर्युक्त वर्णित कारणों से न्यूनाधिक रूप से बेरोजगारी की दशायेंब नी रह सकती हैं। पूर्ण रोजगार की स्थिति में अनैच्छिक बेरोजगारी को निम्न स्तर पर रखा जाता हैं। दूसरे शब्दों में बेरोजगारी की समस्या देश की कुल जनसंख्या के बहुत कम प्रतिशत लोगों को प्रभावित करती हैं। वास्तव में पूर्ण रोजगार की दशा में बेरोजगारी बहुत ही सूक्ष्म मात्रा में रहती हैं। फलस्वरूप कोई गम्भीर सामाजिक समस्या उत्पन्न नहीं होती हैं। अतः मौद्रिक नीति का लक्ष्य पूर्ण रोजगार की प्राप्ति के स्थान पर 'अधिकतम रोजगार' के स्तर को बनाये रखना अधिक युक्तिसंगत माना जा सकता हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता हैं कि पूर्ण रोजगार की स्थिति में गम्भीर बेरोजगारी को नियन्त्रित करने के लिए मौद्रिक नीति का संचालन किया जाना चाहिए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

यह कहा जा सकता हैं कि यदि किसी देश में सम्पूर्ण जनसंख्या के उस भाग को जो कार्य करने के योग्य हो एवं कार्य करने की इच्छा रखते हो, मजदूरी की प्रचलित दर पर रोजगार मिल जाता हैं तो उसे पूर्ण रोजगार की स्थिति की संज्ञा दी जा सकती हैं। पूर्ण रोजगार की दशा में देश में उपलब्ध उत्पत्ति के अन्य साधनों का भी उपयोग किया जाना सम्भव होता हैं। वास्तव में पूर्ण रोजगार की दशायें किसी भी पूंजीवादी देश में नहीं पायी जाती हैं। परन्तु प्रत्येक देश इस स्थिति को प्राप्त करने की दिशा में प्रयत्नशील रहता हैं। क्योंकि यह एक आदर्श स्थिति होती हैं। मौद्रिक नीति का उपयोग भी इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किया जा सकता हैं।

पूर्ण रोजगार की स्थिति देश में उपलब्ध उत्पादन के साधनों का अधिकतम विदोहन करके ही प्राप्त की जा सकती हैं। अतः इस दशा में विभिन्न साधनों के आदर्श संयोग के फलस्वरूप राष्ट्रीय आय उच्चतम स्तर पर बनी रहती हैं। लर्नर के अनुसार –''पूर्ण रोजगार से आशय उस अवस्था से हैं जिसमें मजदूरी की प्रचलित दर पर बिना किसी विशेष असुविधा के कार्य के इचछुक व्यक्तियों को कार्य मिल जाता हैं।'' प्रोफेसर कीन्स के अनुसार –''पूर्ण रोजगार एक ऐसी स्थिति हैं जिसके पश्चात यदि प्रभावपूर्ण मांग में वद्धि होती हैं तो उससे उत्पादन और रोजगार में वृद्धि न होकर मूल्य स्तर में बढ़ोतरी होती हैं।'' अतः कीन्स के अनुसार पूर्ण रोजगार की स्थिति से अभिप्रायः प्रभावपूर्ण मांग के उचित स्तर से हैं।

संक्षेप में, यह कहा जा सकता हैं कि आधुनिक समय में मौद्रिक नीति एवं आर्थिक नीति का प्रमुख उद्देश्य पूर्ण रोजगार की स्थिति को प्राप्त करना तथा इसी स्तर पर आर्थिक स्थायित्व को बनाये रखना मना गया हैं।

4.4.5 आर्थिक विकास का उद्देश्य (Objective of Economic Growth) :–

वभिन्न स्तर की अर्थव्यवस्था अर्थात् अविकसित, अल्पविकसित, विकासशील आदि में मौद्रिक नीति के उद्देश्य भी भिन्न–भिन्न होते हैं। परम्परागत विचारधारा के अनुसार विकसित राष्ट्रों में मौद्रिक नीति का प्रमुख लक्ष्य पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त करना तथा उसे उसी स्तर पर देश में आर्थिक स्थायित्व बनाये रखना माना गया था। इन अर्थशास्त्रियों की यह मान्यता हैं कि मौद्रिक नीति एक अल्पकालीन यन्त्र के रूप में होती हैं जिसका प्रयोग अर्थव्यवस्था में स्थिरता बनी रहे तथा देश में बेरोजगारी की समस्या न पैदा हो सके। इस दशा में अर्थव्यवस्था का संचालन सुगमतापूर्वक किया जा सकता हैं। परम्परागत अर्थशास्त्री इस मत के समर्थक नहीं थे कि मौद्रिक नीति का प्रयोग आर्थिक विकास हेतु किया जाय।

विकसित देशों के सन्दर्भ में यह दृष्टिकोण किसी सीमा तक उचित भी था। किन्तु इसके विपरित अविकसित देशों के सम्बन्ध में मौद्रिक नीति का यह उद्देश्य अधिक उपयुक्त एवं न्यायसंगत नहीं माना जा सकता हैं क्योंकि ऐसे देशों में उत्पादन तथा रोजगार की दशाओं में चक्रीय परिवर्तन की समस्या अधिक महत्वपूर्ण नहीं होती हैं। अविकसित देशों में वास्तविक समस्या 'अर्थव्यवस्था में सरंचनात्मक परिवर्तन' की होती हैं। इन देशों में पूंजी एवं तकनीकी ज्ञान के अभाव में उपलब्ध साधनों का पूर्ण रूपेण विदोहन सम्भव नहीं हो पाता हैं। इन दशाओं के फलस्वरूप देश में बेरोजगारी अधिक मात्रा में उत्पन्न हो जाती हैं। राष्ट्रीय एवं प्रति व्यक्ति आय कम हो जाती हैं। जन साधारण का जीवन स्तर अन्य विककसित राष्ट्रों की तुलना में निम्नस्तर का होता हैं। इन समस्याओं का प्रभावी समाधान साधनों के अधिकतम विकास एवं विदोहन के माध्यम से ही सम्भव हो सकता हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

जैसा कि विदित हैं कि किसी एक देश के आर्थिक विकास में मौद्रिक व्यवस्था का विशेष योगदान रहता हैं। अतः वर्तमान समय में 'अर्थव्यवस्था का विकास' ही मौद्रिक नीति का उद्देश्य हैं एवं इसी उद्देश्य को अधिक उपयुक्त एवं सामयिक माना जाने लगा हैं। यह लक्ष्य न केवल अविकसित देशों के लिये उपयुक्त हैं अपितु विकासशील एवं विकसित राष्ट्रों की मौद्रिक नीति के एक आदर्श के रूप में धीरे–धीरे मान्यता प्राप्त कर रहा हैं। इन देशों में यह अनुभव किया गया हैं कि पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त करना ही मौद्रिक नीति का पर्याप्त लक्ष्य नहीं हैं। यदि जनसाधारण को उच्च–जीवन स्तर प्रदान करना हैं तो ऐसी दशा में अर्थव्यवस्था को निरन्तर द्रुतगति से विकसित करना आवश्यक हैं। अतः वर्तमान युग में मौद्रिक नीति के आर्थिक विकास उद्देश्य पर विशेष बल दिया जाने लगा हैं।

वुडवर्थ के अनुसार – ''आर्थिक वृद्धि के उद्देश्य को प्राथमिकता इसलिए आवश्यक हैं कि पाश्चात्य देशों में जीवनस्तर में अभूतपूर्व सुधार होने के बावजूद भी गरीबी विश्व की एक प्रमुख समस्या हैं। अतः इस समस्या के समुचित समाधान के सन्दर्भ में आर्थिक वृद्धि, मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए।'' मुद्रा एवं साख पर अमेरिकन आयोग ने स्पष्ट शब्दों में यह कहा हैं कि आगे आने वाले वर्षों में मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्देश्य आर्थिक वृद्धि होना चाहिए।

मौद्रिक नीति का प्रयोग आर्थिक विकास हेतु किये जाने के सम्बन्ध में निम्नांकित तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं –

(1) पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त करने के लिए आर्थिक विकास किया जाना आवश्यक होता हैं। आर्थिक विकास में वृद्धि किये बिना पूर्ण रोजगार की कल्पना निरर्थक होती हैं।

(2) निरन्तर गति से आर्थिक विकास इसलिए भी आवश्यक होता हैं कि विश्व के सभी देशों के लोगों में सामान्यतया उच्च जीवन–स्तर की आकांशा होती हैं।

(3) विभिन्न राष्ट्रों के मध्य बढ़ती हुई प्रतिस्पर्द्धा के कारण प्रत्येक राष्ट्र को अपने अस्तित्व को बनाये रखने हेतु आर्थिक विकास की ओर समुचित ध्यान देना आवश्यक होता हैं।

इन कारणों से हाल ही के वर्षों में 'अनार्थिक वृद्धि' मौद्रिक नीति का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य हो गया हैं। अमेरिका जैसे विकसित राष्ट्र ने भी इस विचारधारा का समर्थन किया हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका हैं कि अविकसित देशों में आर्थिक विकास एक प्रमुख समस्या होती हैं। अतः ऐसे देशों में मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्देश्य 'आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करना' अधिक उपयुक्त प्रतीत होता हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 मौद्रिक नीति के कोई दो उद्देश्य बताइए।

.....

.....

.....

प्र. 2 मौद्रिक नीति के तटस्थ मुद्रा उद्देश्य की कोई दो आलोचनाएं बताइए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

.....

.....

.....

प्र. 3 मौद्रिक नीति के विनिमय दर स्थिरता उद्देश्य को समझाइए।

.....

.....

.....

प्र. 4 मौद्रिक नीति किस प्रकार आर्थिक विकास को प्रभावित करती हैं ?

.....

.....

.....

प्र. 5 पूर्ण रोजगार उद्देश्य की प्राप्ति में मौद्रिक नीति किस प्रकार सहायक हैं ?

.....

.....

.....

4.5 भारत की मौद्रिक नीति के उद्धेश्य (objectives of monetary policy of india) :–

भारत में मौद्रिक नीति के उद्धेश्यों का निर्धारण भारतीय अर्थव्यवस्था की विशिष्ट परिस्थितियों के आधार पर किया जाता है। भारत एक सम्पन्न राष्ट्र है; किन्तु इसमें गरीब नागरीक निवास करते है। यह कहावत भारतीय आर्थिक परिदृश्य के सम्बन्ध में सामयिक लगती है। देश में जलवायु, खनिज सम्पदा, वन सम्पदा तथा सभी प्राकृतिक संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध ह। किन्तु फिर भी अर्थव्यवस्था में गतिशीलता का अभाव है। अतः देश की मौद्रिक नीति का यह मुख्य उद्धेश्य हो जाता है कि अर्थव्यवस्था में गतिशीलता उत्पन्न करें।भारतीय रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति का अन्तर्निहित उद्धेश्य स्थिरता के साथ आर्थिक विकास करना है। देश की मूलभूत आर्थिक, सामाजिक स्थिरता के साथ आर्थिक विकास करना रहा है। देश की मूलभूत आर्थिक सामाजिक समस्याऐं, यथा– निर्धनता, बेरीजगारी, अशिक्षा, अस्वस्था आदि के निदान हेतु एक सुव्यवस्थित मौद्रिक नीति आवश्यक होती है। इस प्रकार भारतीय रिजर्व बैंक की स्वाधीनता के प्श्चात तैयार की गई मौद्रिक नीति आवश्यक होती है। अस प्रकार भारतीय रिजर्व बैंक की स्वाधीनता के पश्चात तैयार की गई मौद्रिक नीति में इन सभी बातों का समावेश किया गया है। इस प्रकार समय–समय पर भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी की गई मौद्रिक नीति के मूलभूत उद्धेश्यों का विवेचन इस प्रकार है–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(1) स्थिरता के साथ विकास (Development through stsbility):–

वस्तुओं के मूल्यों में अत्यधिक उतार–चढाव आर्थिक विकास के लिए हानि और आर्थिक विषमता को बढ़ानें वाले होते हैं। मुद्रा स्फीति की तेज गति बचत की प्रवृति को हतोत्साहित करती है तथा निवेश सरंचना को दोषपूर्ण बना देती है। इसके कारण भी गरीब तथा गरीब और धनवान और धनवान होते है। सामाजिक न्याय की स्थापना और आर्थिक विकास की गति तथा दिशा औचित्य के लिए मूल्यों में उतार– चढ़ाव की प्रवृति को नियन्त्रित रखना जरुरी होता है। अतः भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा अपनी मौद्रिक नीति का मुख्य उद्धेश्य स्थिरता के साथ आर्थिक विकास रखा गया है।

(2) विनिमय दरों में स्थिरता (Stability in Exchange Rate):–

आर्थिक विकास की प्रक्रिया में विदेशी विनिमय की पर्याप्ता उपलब्धता का बड़ा महत्त्व होता है। विदेशी विनिमय की उपलब्धि, भुगतान सन्तुलन की स्थिति तथा तद्जनित विनिमय दर की स्थिति से सम्बन्धित होती हैं मौद्रिक नीति में निर्यातोन्मुखी उद्योगों के साथ आयात प्रतिस्थापक उधेगों को प्राथमिकता क्षेत्रों में शामिल करके इन्हें सस्ती सुविधा की व्यवस्था दिलवायी गई है। निर्यात के लिए दी गई साख सुविधा को सस्ती बनाने के लिए रिजर्व बैंक उदार पुनर्वित की सुविधा प्रदान करता है।

(3) सुनियोजित आर्थिक विकास (Planned Economic Development):–

प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों तथा पिछड़ें इलाको में औद्योगिक प्रायोजनाओं को रियायती उधार सविधा का उद्धेश्य सन्तुलित विकास को प्राथमिकता देना है। चयनात्मक साख–नियन्त्रण तथा विशिष्ट ऋण योजनाओं के द्वारा भी इसी उद्धेश्य की पूर्ति में साहायता ली गई है। योजनाबद्ध आर्थिक विकास की प्रक्रिया के प्रारम्भ से ही मौद्रिक नीति का उद्धेश्य निवेश कार्यो के लिए संसाधनों को जुटाना और गतिमान करना रहा है। बैंकों में जमाओं पर ब्याज की दरों में वृद्धि बचत को प्रोत्साहित करने के उद्धेश्य से की गई। अनेक वित्तीय संस्थाओं की स्थापना और उनके कार्य–क्षेत्र के विस्तार द्वारा निवेश के साधनों की पूर्ति बढ़ायी गई।

(4) रोजगार सृजन(Employment Creation):–

मौद्रिक नीति में लघु उद्योग, कृषि और कमजोर लोगो को जो रियायती उधार सुविधा की व्यवस्था की गई है, उसका प्रमुख उद्धेश्य रोजगार के अवसरों को बढ़ाना है। देश में बढती बेरोजगारी की स्थिति को देखते हुए भारत की मौद्रिक नीति की दिशा का नये रोजगार के सृजन की ओर प्रवृत्त होना नितान्त आवश्यक हैं तभी आर्थिक विकास का लक्ष्य प्राप्त किया जाना सम्भव हो सकेगा।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 भारत की मौद्रिक नीति के उद्देश्य बताइए।

.....

.....

.....

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

प्र. 2 भारत की मौद्रिक नीति रोजगार सजृन में किस प्रकार सहायक हैं ?

.....

.....

.....

4.6 भारत में मौद्रिक नीति के मुख्य तत्व (Main Features of India's monetary policy):–

भारत की मौद्रिक नीति विकासशील अर्थव्यवस्था के कारण वित्तीय साधनों के अभाव की पूर्ति पर विशेष रूप से केन्द्रित रहती हैं। भारतीय रिजर्व बैंक ने स्वाधीनता के पश्चात् प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल तक सस्ती मौद्रिक नीति को अपनाए रखा। 1970 के दशक में अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करने हेतु नये विनियोगों को प्रोत्साहन दिया गया। ब्याज दरों में कटौती की गई। इसके पश्चात् समय–समय पर 1980 के दशक में मौद्रिक नीति का सामान्य साख प्रसार की प्रवृत्ति पर नियन्त्रण लगाने का क्रम रहा। 1990 के दशक में उदारीकृत अर्थव्यवस्था अपनाए जाने के कारण देश की मौद्रिक नीति में कई परिवर्तन दृष्टिगत होते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के समकक्ष देश की अर्थव्यवस्था को उन्नत करने हेतु मौद्रिक नीति का प्रयोग किया गया। इस प्रकार भारत की मौद्रिक नीति को समझने के लिए उसके मुख्य तत्व को दृष्टिगत करना आवश्यक होगा :

(1) नवीन वित्तीय संस्थाओं की स्थापना (Establishment of New Financial Institutions) :– अविकसित एवं अर्द्ध–विकसित देशों में बैंकिंग सुविधाओं का अभाव होता हैं। अतः उपलब्ध बचतों को संग्रह नहीं हो पाता हैं। इस प्रकार पूंजी निर्माण की विशेष समस्या रहती हैं। इन स्थितियों में देश में बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार कर बचतों को प्रभावी आधार पर एकत्रित कर कुछ सीमा तक पूंजी के अभाव को दूर किया जा सकता हैं। बैंकिंग सुविधाओं के विसतार के फलस्वरूप जन साधारण में बैंकिंग आदत विकसित होती हैं। वे अपनी बचतों को बैंकिंग संस्थाओं के पास जमा करने लगते हैं। इस प्रकार एकत्रित कोषों का विनियोग किया जाना सम्भव हो जाता हैं। इसके अतिरिक्त मौद्रिक अधिकारियों को नवीन संस्थाओं की स्थापना पर भी विशेष बल देना चाहिए क्योंकि आर्थिक विकास के साथ–साथ वित्तीय आवश्यकताओं में वृद्धि होती हैं। अतः ऐसी संस्थाओं का निरन्तर विकास किया जाना चाहिए। मौद्रिक अधिकारियों का यह भी उत्तरदायित्व रहता हैं कि अर्थव्यवस्था के प्राथमिक क्षेत्रों को पर्याप्त मात्रा में वित्तीय कोष उपलब्ध होते रहे। इस सम्बन्ध में उन्हें विशेष रूप से प्रयत्नशील रहना चाहिए।

(2) मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि (Increase in Money Supply) :–

अर्द्ध–विकसित देशों में प्रति व्यक्ति आय की न्यूवता के कारण पर्याप्त मात्रा में पूंजी एकत्रित नहीं हो पाती हैं। अतः देश में साख सुविधाओं के विस्तार हेतु तीव्र गति से बैंकिंग संस्थाओं की स्थापना की गई। आज देश में 5000 जनसंख्या पर एक बैंक शाखा कार्यरत हैं। पूंजी के अभाव को दूर करने के लिए मौद्रिक अधिकारीयों को मुद्रा एवं साख की मात्रा में वृद्धि करनी पड़ती है। इस सन्दर्भ में उन्हें लचनशील मौद्रिक नीति को अपनाना पड़ता है। विनियोग के लिए आवश्यक पूँजी जुटाने के लिए घाटे की वित्तीय व्यवस्था को अपनाना पड़ता है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत सरकार मुख्यतः रिजर्व बैंक अथवा व्यापारिक बैंकों से धन उधार प्राप्त करती है। घाटे की अर्थव्यवस्था को अपनाना इसलिए भी आवश्यक हो जाता है कि सरकार को स्वयं बड़े पैमाने पर

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

विनियोग करने पड़ते हैं। रिजर्व बैंक ने देश की विकासात्मक वित्तीय आवश्यकता पूर्ति हेतु मुद्रा की मात्रा में वृद्धि की है। फलस्वरुप विकास की ओर अग्रसर हुई है।

(3) मुद्रा प्रसार को नियन्त्रित करना (Control Over Inflation):–

जैसा कि विदित है कि देश में विनियोग सम्बन्धी पूँजी का विशेष अभाव है। अतः इस अभाव की पूर्ति के लिए सरकार को घाटे की वित्त व्यवस्था का सहारा लेना पड़ता है। आर्थिक विकास के संदर्भ में सरकार विभिन्न प्रकार की 'विकास परियोजनाओं' के क्रियान्वयन पर पर्याप्त मात्रा में व्यय करती है। योजनागत व्ययों के परिणामस्वरुप जनसाधारण की मौद्रिक आय में वृद्धि होती है तथा उपभोग वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि नही हो पाती है। फलस्वरुप अर्थव्यवस्था में मुद्रा प्रसार की परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती है। मुद्रा प्रसार के कारण आंतरिक मूल्यों में निरन्तर वृद्धि होती रहती है। रिजर्व बैंक का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वे बचतों एवं विनियोगों में सामंजस्य स्थापित करें। किन्तु ऐसा करना सम्भव नहीं हो पाता है। यही कारण है कि सरकार को मुद्रा प्रसार एवं घाटे की वित्त व्यवस्था के माध्यम से विनियोग करने पडते है। इस प्रकार देश में मुद्रा प्रसार उत्पन्न हो जाता है। रिजर्व बैंक ने साख नियन्त्रण के उपायों को अपनाकर देश को मुद्रा प्रसार की गम्भीर स्थिति से बचाया जा सकता है। वर्तमान में नियंत्रित प्रसार का लक्ष्य प्राप्त किया जा सका है।

(4) सुदृढ़ भुगतान संरचना (Sound Payment Stucture):–

आर्थिक विकास के सन्दर्भ में रिजर्व बैंक का यह उत्तरदायित्व रहता है कि वह देश में एक सुदृढ़ भुगातान संरचना का निर्माण व्यवस्था करे। यह इसलिए आवश्यक होता है कि आर्थिक विकास के साथ–साथ अर्थव्यवस्था का क्षेत्र भी विस्तृत हो जाता है। रिजर्व बैंक द्वारा विदेशी विनिमय व्यवस्था का कुशल नियमन कर एक सुदृढ़ भुगतान संरचना का निर्माण किया है। आन्तरिक भुगतान व्यवस्था हेतु समाशोधन गृहों का श्रेष्ठ संचालन किया जाता है।

(5) सुलभ ब्याज दर नीति को अपनाना(Adoption of Liberal Interest Rate Policy) :–

देश में विनियोगों को प्रोत्साहन किया जाना अधिक महत्त्वपूर्ण होता है, अतः इस सम्बन्ध में सस्ती ब्याज दर नीति अपनायी जानी चाहिए। स्स्ती ब्याज दर नीति के फलस्वरुप उधोग एवं व्यापार को प्रोत्साहन मिलता है। आर्थिक विकास के सन्दर्भ में सुलभ मुद्रा नीति सार्वजनिक विनियोगों के लिए भी हितकर सिद्ध होती है। इसके ऋणों पर ब्याज का भार कम पडता है। अतः यह कहा जा सकता है कि सुलभ मुद्रा नीति विनियोगों को प्रोत्साहित करने की दिशा में सक्रिय सहयोग प्रदान करती है। भारतीय रिजर्व बैंक ने अर्थव्यवस्था की आवश्यकता के अनुरूप लोचशील ब्याज दर को अपनाना है।

(6) संगठित मुद्रा बाजार की स्थापना (Establishment or Organised Money Market):–

देश में संगठित मुद्रा बाजार का अभाव है। संगठित मुद्रा बाजार के अभाव में रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति के क्रियान्वयन मे अनेक बाधायें उत्पन्न हो जाती हैं तथा उसकी प्रभावशीलता संदिग्ध रहती है। अतः सुदृढ़ मौद्रिक प्रणाली के निर्माण तथा आर्थिक विकास के सन्दर्भ में एक सुसंगठित एवं विकसित मुद्रा बाजार की स्थापना का विशेष महत्त्व है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि देश की मौद्रिक नीति की प्रवृतियाँ स्थिरता के साथ आर्थिक विकास के लक्ष्य की प्राप्ति की ओर अग्रसर रहीं है। भारतीय रिजर्व बैंक को मौद्रिक नीति के सम्दर्भ में दोहरे

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

उत्तरदायित्व का निर्वहन करना पडा है। एक ओर उसने प्रवर्तनीय भूमिका का निर्वाह किया है तो दूसरी ओर प्रतिबंधित भूमिका के अन्तर्गत साख का नियन्त्रण किया है। प्रवर्तनीय भूमिका में वित्तीय एवं बैंकिंग संस्थाओं की स्थापना, मुद्रा पूर्ति पर विशेष अध्ययन आदि क्रियायें सम्पन्न की जाती है। प्रतिबंधित भूमिका के अन्तर्गत मूल्य स्तर में स्थायित्व लाने के लिए साख नियन्त्रण के उपायों का कुशलतापूर्वक उपयोग किया गया है। किन्तु भारतीय रिजर्व बैंक मौद्रिक नीति को पूरी तरह सफल नही हो पाई है। क्योकि असंगठित क्षेत्र पर इसका प्रभावकारी नियन्त्रण स्थापित नही हो पाया है। अतः रिजर्व बैक की मौद्रिक नीति को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए असंगठित वित्तीय संस्थाओं पर समुचित नियन्त्रण स्थापित किया जाना आवश्यक है। साथ ही उदारीकृत अर्थव्यवस्था के अनुरूप कुशल मौद्रिक नीति अपनाना तभी सम्भव होगा जब आसन्न वित्तीय संकटों को दूर करने में रिजर्व बैंक सफल होगा।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 भारतीय मौद्रिक नीति के कोई दो मुख्य तत्व बताइए।

.....

.....

.....

प्र. 2 स्थिरता के साथ आर्थिक विकास का अर्थ बताइए।

.....

.....

.....

4.7 सारांश :–

किसी भी देश का आर्थिक विकास मौद्रिक नीति के सफल संचाल पर निर्भर करता हैं। देश की मौद्रिक व्यवस्था का संचालन केन्द्रीय बैंक द्वारा किया जाता हैं। मौद्रिक नीति के महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं तटस्थ मुद्रा उद्देश्य, विनिमय दरों में स्थिरता, मूल्यों में स्थिरता, पूर्ण रोजगार तथा आर्थिक विकास आदि। प्रस्तुत इकाई में मौद्रिक नीति के इन्हीं उद्देश्यों की विस्तृत विवेचना की गई हैं। आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भी मौद्रिक नीति के उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं। अतः जब आर्थिक नीतियों में परिवर्तन किया जाता हैं तो मौद्रिक नीति के उद्देश्य भी परिवर्तित हो जाते हैं।

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न :–

प्रश्न 1. भारत में मौद्रिक नीति की विस्तृत विवेचना कीजिए।

प्रश्न 2. मौद्रिक नीति के मुख्य तत्वों की विस्तृत विवेचना कीजिए।

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

4.3 के उत्तर

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. केन्द्रीय बैंक द्वारा मुद्रा प्रसार एवं संकुचन के प्रबंध को भी मौद्रिक नीति की संज्ञा दी गई।

2. प्रो. पॉल इंजिग

4.4 के उत्तर

1 तटस्थ मुद्रा उद्देश्य विनिमय दरों में स्थिरता

2 नीति के क्रियान्वयन में कठिनाई मूल्यों में स्थिरता बनाये रखना सम्भव नहीं

3 मौद्रिक अधिकारीयों को विनिमय दरों में अस्थिरता उत्पन्न करने वाली शक्तियों पर उचित नियन्त्रण स्थापित करने की दिशा में सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिए। विनिमय दरों में अत्यधिक उच्चावचन अर्थव्यवस्था के लिए हितकर सिद्ध नहीं होते हैं। जहां तक विनिमय दरों में सीमित परिवर्तनों का संबंध हैं, मौद्रिक अधिकारियों को उनका समायोजन के लिये आन्तरिक मूल्य स्तरों में परिवर्तन करते रहना चाहिए।

4 पूर्ण रोजगार की स्थिति प्राप्त करना ही मौद्रिक नीति का पर्याप्त लक्ष्य नहीं हैं। यदि जनसाधारण को उच्च–जीवन स्तर प्रदान करना हैं तो ऐसी दशा में अर्थव्यवस्था को निरन्तर द्रुतगति से विकसित करना आवश्यक हैं। अतः वर्तमान युग में मौद्रिक नीति के आर्थिक विकास उद्देश्य पर विशेष बल दिया जाने लगा हैं।

5 पूर्ण रोजगार की स्थिति देश में उपलब्ध उत्पादन के साधनों का अधिकतम विदोहन करके ही प्राप्त की जा सकती हैं। अतः इस दशा में विभिन्न साधनों के आदर्श संयोग के फलस्वरूप राष्ट्रीय आय उच्चतम स्तर पर बनी रहती हैं।

4.5 के उत्तर

1 आर्थिक विकास का उद्देश्य 2 पूर्ण रोजगार का उद्देश्य 3 मूल्यों में स्थिरता

2 मुद्रा स्फीति की तेज गति बचत की प्रवृति को हतोत्साहित करती है तथा निवेश सरंचना को दोषपूर्ण बना देती है। इसके कारण भी गरीब तथा गरीब और धनवान और धनवान होते है। सामाजिक न्याय की स्थापना और आर्थिक विकास की गति तथा दिशा औचित्य के लिए मूल्यों में उतार– चढ़ाव की प्रवृति को नियन्त्रित रखना जरुरी होता है।

4.6 के उत्तर

1 नवीन वित्तीय संस्थाओं की स्थापना

मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि

2 सामाजिक न्याय की स्थापना और आर्थिक विकास की गति तथा दिशा औचित्य के लिए मूल्यों में उतार– चढ़ाव की प्रवृति को नियन्त्रित रखना

4.10 संदर्भ ग्रंथ :–

1. मिश्रा एवं पुरी, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'

2. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम्, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

3. सारस्वत, शर्मा, गुप्ता, गोधा, 'बैंकिंग एवं वित्तीय व्यवस्था'

4. लक्ष्मीनारायण नाथूरामका, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा सार्वजनिक वित्त'

5. बी. एल. ओझा, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा राजस्व'

4.11 शब्द कोष :–

मुद्रा संकुचन	मौद्रिक–व्यवस्था
व्यापार चक्रों	पारिमाणिक सिद्धान्त
स्वतन्त्र व्यापार दर्शन	आर्थिक उच्चावचनों
परिकाल्पनिक क्रियाओं	आन्तरिक अर्थव्यवस्था
स्वतन्त्र व्यापार दर्शन	परम्परागत विचारधारा
अनार्थिक वृद्धि	खनिज सम्पदा
प्राकृतिक संसाधन	निर्यातोन्मुखी

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

इकाई – 5

भारत में बैंकिंग क्षेत्र में आर्थिक सुधार

(Recent Reforms in Banking Sector in India)

5.0 इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 बैंकिंग क्षेत्र में सुधार हेतु नरसिंहम समिति की सिफारिशें

5.4 कमजोर बैंकों के पुनर्सरंचना हेतु वर्मा समिति की सिफारिशें

5.5 बैंकिंग क्षेत्र में सुधार

5.5.1 ब्याज दर के ढ़ांचे में परिवर्तन

5.5.2 नकद रिर्जव अनुपात

5.5.3 वैधानिक तरलता अनुपात

5.5.4 विवेकपूर्ण मानदण्ड

5.5.5 नये नीजि क्षेत्र के बैंकों की स्थापना

5.5.6 जोखिम प्रबन्ध

5.5.7 गैर निष्पादनकारी परिसम्पत्तियों का प्रबन्धन

5.5.8 प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को उधार देने की व्यवस्था में सुधार

5.5.9 ग्रामीण आधारभूत ढ़ांचे के विकास का कोष

5.5.10 स्थानीय क्षेत्रीय बैंक की स्थापना

5.5.11 बैंकिंग में कानूनी सुधार

5.5.12 बैंकिंग में तकनीकीय सुधार

5.5.13 अन्य सुधार

5.6 सारांश

5.7 निबन्धात्मक प्रश्न

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.9 संदर्भ ग्रंथ

5.10 शब्द कोष

5.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(i) भारत में बैंकिंग क्षेत्र में सुधार हेतु नरसिंहम समिति ने क्या सिफारिशें की ?

(ii) भारत में बैंकिंग क्षेत्र में सुधार हेतु वर्मा समिति ने क्या सिफारिशें की ?

(iii) पिछले दशक में बैंकिंग क्षेत्र में क्या–क्या सुधार हुए हैं ?

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(iv) बैंकिंग क्षेत्र में क्या–क्या कानूनी सुधार हुए हैं ?

1.2 प्रस्तावना :–

1991 से भारत में आर्झिक सुधारों के दौर में राजकोषीय क्षेत्र, औद्योगिक क्षेत्र, विदेशी व्यापार व विदेशी निवेश के क्षेत्र तथा वित्तीय क्षेत्र में कई प्रकार के सुधार किये गये हैं जिनको आगामी वर्षों में अधिक व्यापक व अधिक गहन बनाया जाएगा। वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के अन्तर्गत बैंकिंग क्षेत्र के सुधारों पर विशेष रूप से बल दिया गया हैं। हाल के वर्षों में बैंकिंग प्रणाली में तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं। वित्तीय क्षेत्र काफी सुदृढ़, चुस्त व प्रतिस्पर्धी होता जा रहा हैं और यह अर्थव्यवस्था की वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करने में अधिक सक्रिय रूप से भाग लेने लगा हैं। रिर्जव बैंक की बैंकिंग की प्रवृत्ति व प्रगति सम्बन्धी रिपोर्ट 2002–03 के अनुसार भारत में हाल के वष्रें में वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की आवश्यकता के अनुसार देश की मौद्रिक की मौद्रिक नीति को ढ़ाला गया हैं। मौद्रिक नीति की कार्यात्मक कार्यकुशलता को बढ़ाने का लक्ष्य ध्यान में रखा गया हैं। रिर्जव बैंक के नियमनकारी योगदान को फिर से परिभाषित किया गया हैं। विवेकपूर्ण मानदण्डों को सुदृढ़ किया गया हैं, साख प्रदान करने की प्रणालियों में सुधार किया गया हैं औटेक्नोलोजिकल व संस्थागत आधार ढ़ांचे को विकसित किया गया हैं। इन उदे्श्यों को प्राप्त करने के लिये रिर्जव बैंक विशेषज्ञों से विस्तृत सलाह मशविरा करने की नीति पर चलता रहा हैं और श्री एम नरसिहम समिति प्रथम 1991 व द्वितीय 1998 के अलावा कई अन्य समितियों व कार्यकारी दलों के सुझावों को भी लागू करने का प्रयास करता रहा हैं। इन समितियों में कुछ प्रमुख समितियों के नाम इस प्रकार हैं, जैसे – डॉ. आई.जी. पटेल समिति की नये निजी क्षेत्र के बैकों की स्थापना से सम्बन्धित लाइसेन्स नीति पर जून 2001 की रिपोर्ट श्री एस.एन. अग्रवाल की अध्यक्षता में नियुक्त कार्यकारी दल की रिपोर्ट जिसने बैंकों व वित्तीय संस्थाओं के अधिनियम, 1993 की बकाया कर्जों की रिकवरी के वर्तमान प्रावधानों की समीक्षा करके अपने सुझाव प्रस्तुत किये थे, श्री एस.एस. कोहली की अध्यक्षता में नियुक्त कार्यकारी दल ने जानबूझ कर भुगतान न करने वालों के बारे में अपनी सिफारिशें पेश की थी। प्रस्तुत इकाई में बैंकिंग क्षेत्र में सुधार हेतु नरसिंहम समिति तथा वर्मा समिति की सिफारिशों का उल्लेख किया गया हैं तथा पिछले दशक में बैंकिंग क्षेत्र में सुधारों की विस्तृत विवेचना की गई हैं।

5.3 बैंकिंग क्षेत्र में सुधार हेतु नरसिंहम समिति की सिफारिशें (Main Recommendations of Narasimham Committee of Banking Sector Reform):–

बैंकिंग क्षेत्र में व्यापक सुधारों के परिप्रेक्ष्य में नरसिंहम समिति की प्रमुख सिफारिशों में जहां एक ओर बैंकिंग क्षेत्र के सरंचनात्मक सुधारों पर जोर दिया गया हैं, वहां दूसरी ओर भारतीय बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ करने के साथ–साथ बैंकिंग परिसम्पत्तियों की गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों की आवश्यकता बताई गई। प्रमुख सिफारिशें संक्षेप में इस प्रकार हैं :–

(अ) संरचनात्मक सुधार (Structural Reforms) :–

(1) **सुदृढ़ वाणिज्यिक बैंकों का पारस्परिक विलय** – इससे जहां एक ओर वृहत्तर आर्थिक एवं वाणिज्यिक माहौल पैदा होगा, वहां दूसरी और उद्योगों पर इसका गुणक प्रभाव उत्पन्न होगा।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(2) **सुदृढ़ बैंकों का विलय कमजोर बैंकों के साथ नहीं** किया जाना चाहिये क्योंकि इससे सुदृढ़ बैंक की आस्तियों की गुणवत्ता पर ऋणात्मक प्रभाव पड़ेगा।

(3) **बड़े बैंकों का अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप देना** – देश के कतिपय बढ़े बैंकों को अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान करने की सिफारिश की गई हैं।

(4) **कमजोर बैंकों की पुनर्स्थापना हेतु** नेरो बैंकिंग अवधारणा का अनुसरण और असफलता पर ऐसे बैंकों को बन्द करने की सिफारिश की।

(5) **राष्ट्रीयकृत बैंकों में प्रबन्धन की स्वायत्तता एवं लोचशीलता हेतु परिवर्तन** कर बैंकों के बोर्डो के शेयर धारकों के प्रति उत्तरदायी बनाने की सिफारिश महत्वपूर्ण हैं।

(6) **राष्ट्रीयकृत बैंकों और स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया** की अंशधारिता में सरकार तथा रिर्जव बैंक का न्यूनतम हिस्सा 33 प्रतिशत तक नीचे लाने की सिफारिश की गई।

(7) **बैंकों में प्रबन्धकीय बोर्डों में नियुक्तियां बिना राजनैतिक हस्तक्षेप के व्यावसायिक कुशलता** के आधार पर की जाने की सिफारिश की गई हैं।

(8) **बैंकों में तेजी से कम्प्यूटरीकरण** तथा सहसम्बन्धी बैंकिंग पर ध्यान केन्द्रित करने की सिफारिश की गई।

(ब) बैंकिंग प्रणाली का सुदृढ़ीकरण :–

(1) **पूंजी पर्याप्ता निर्धारण** में ऋण जोखिमक` साथ–साथ बाजारीय जोखिमों को भी ध्यान में रखने की सिफारिश की गई।

(2) **जोखिम भारित आस्तियों से पूंजी का अनुपात** अर्थात् पूंजी पर्याप्ता को सन् 2000 तक 9 प्रतिशत तथा सन् 2002 तक 10 प्रतिशत के स्तर पर लाने की सिफारिश की हैं।

(3) **पूंजी पर्याप्ता अनुपात में आगे वृद्धि करने** तथा इसे न अपनाने वाले बैंकों को दण्डित करने की शक्ति रिर्जव बैंक को दिये जाने की सिफारिश भी महत्वपूर्ण हैं।

(4) **सरकारी बैंकों की पूंजी निधियों** ने वृद्धि हेतु बजटीय सहायता न देकर देश विदेश के पूंजी बाजारों से पूंजी प्राप्त करने को प्रोत्साहन देने की सिफारिश की गई हैं।

(स) परिसम्पत्त गुणवत्ता :–

(1) **परिसम्पत्तियों का वर्गीकरण** निम्नलिखित आधार पर करने की सिफारिश की गई हैं –

(प) **सन्देहास्पद परिसम्पत्ति** – पहली बार 18 माह तक किस्त व ब्याज का भुगतान न करने पर परिसम्पत्ति को सन्देहास्पद श्रेणी प्रदान की जाये।

(पप) **घटिया परिसम्पत्ति** – अगली बार 12 माह तक किस्त एवं ब्याज का भुगतान न होने पर उसे घटिया परिसम्पत्ति की संज्ञा प्रदान की जाये।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(पपप) क्षतिवान परिसम्पत्ति – पहचान कर ली गई किन्तु बट्टे खाते में न डाली गई परिसम्पत्ति को क्षतिवान परिसम्पत्ति की संज्ञा दी जाने की सिफारिश की गई।

(2) गैर–निष्पादनीय आस्ति – सरकारी प्रतिभूतियों द्वारा कवर किये गये असुविधाजनक हो चुके ऋणों को गैर–निष्पादनीय आस्ति माने जाने की सिफारिश की गई।

(3) प्राथमिकता क्षेत्र के ऋणों पर ब्याज सम्बन्धी आर्थिक सहायता को पूर्णतः समाप्त करने की सिफारिश की गई हैं।

(4) दो लाख रूपये से अधिक के ऋणों पर ब्याज निर्धारण का अधिकार बैंकों को दिये जाने की सिफारिश की गई हैं।

(5) बैंक दर (ठंदा ंजम) नकद कोषानुपात (Cash Reserve) तथा सार्वधिक तरल कोषानुपात (स्) की दरों में शनैः शनैः कटौती कर उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लाना।

(6) बैंक कर्मियों के विरूद्ध किसी भी प्रकार की कार्यवाही से पूर्व समुचित जांच पड़ताल करना।

(7) रिर्जव बैंक की नियामक एवं देखरेख सम्बन्धी क्रियाओं को पृथक् करने के लिये **बोर्ड फोर फाइनेंशियल सुपरविजन** (Board fro Financial Supervision - BFS) को स्वायत्तता प्रदान करना आदि।

इस प्रकार स्पष्ट हैं कि नरसिंहम समिति ने देश में उन्नत, प्रगतिशील एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की बैंकिंग व्यवस्था स्थापित करने हेतु बहुत ही व्यापक एवं सामयिक सिफारिशें प्रस्तुत की हैं जिससे बैंकों की परिसम्पत्तियों की गुणवत्ता में सुधार, गैर–निष्पादन सम्पत्तियों में कमी करनें, पूंजी पर्याप्ता अनुपात बढ़ाने, बैंकों को राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त करने, निदेशक मण्डल में पेशेवर व्यक्तियों को शामिल करने, बैंकों की खराब परिसम्पत्तियों के अधिग्रहण के लिये ARF की स्थापना तथा ठथै को स्वायत्तता प्रदान करने का मार्ग प्रशस्त हुआ हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 बैंकिंग क्षेत्र में संरचनात्मक सुधार हेतु नरसिंहम समिति द्वारा दी गई कोई दो सिफारिशे बताइये।

.....

.....

.....

प्र. 2 बैंकिंग प्रणाली के ''सुदृढ़ीकरण'' के लिए नरसिंहम समिति ने क्या सुझाव दिये हैं ?

.....

.....

.....

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

प्र. 3 ठथै का पूरा नाम बताइए।

.....

.....

.....

5.4 कमजोर बैंकों के पुनर्सरंचना हेतु वर्मा समिति की सिफारिशें (Recommendations of Verma Committee for Restructuring Weak Banks) :–

सार्वजनिक क्षेत्र के कमजोर बैंकों के पुनर्जीवन हेतु रिर्जव बैंक ऑफ इण्डिया (ल्ठप) ने वर्मा समिति का गठन किया। इस समिति ने अपनी सिफारिशें 4 अक्टूबर, 1999 को सौंप दी। इस समिति की प्रमुख सिफारिशें संक्षेप में इस प्रकार हैं :–

(1) **बैंकों की लाभप्रदता में वृद्धि तथा लागतों में कमी की व्यूहरचना अपनाने** की सिफारिश की हैं। लाभप्रदता में वृद्धि के लिये बैंकों को अपने कामकाज के तरीकों में सुधार लाने तथा मौजूदा एवं भावी गैर–निष्पादन परिसम्पत्तियों (Non-Performing Asssts - NPAs) में कमी तथा लागतों में कमी के लिये अलाभकारी व्यवसाय छोड़ने तथा कर्मचारी लागतों (Staff Costs) में कमी लाने की सिफारिश की हैं।

(2) **कर्मचारियों की संख्या में 30–35 प्रतिशत की कमी** जिसमें प्रारम्भ में 25 प्रतिशत की कमी तथा कर्मचारियों के वेतन में 5 वर्ष तक कोई वृद्धि करने की सिफारिश की।

(3) **कमजोर बैंकों में आधुनिक सूचना प्रोद्यौगिकी** अपनाने के लिए **बाहरी एजेन्सी की सेवाएं** लेने की सिफारिश की हैं।

(4) **गैर–निष्पादन परिसम्पत्तियों के मामले में** 50 लाख रूपये से अधिक ऐसी परिसम्पत्तियां नवगठित **ऐसेट रिकन्स्ट्रक्शन फण्ड (Asset Reconstruction Fund - ARF)** द्वारा हस्तगत करने तथा इस पर ARF का संचालन निजी क्षेत्र की किसी **ऐसेट मैनेजमेंट कम्पनी** द्वारा करने की सिफारिश की।

उल्लेखनीय हैं कि प्रारम्भ में **यूकों बैंक, इण्डियन बैंक तथा यूनाइटेड बैंक ऑफ इण्डिया** कमजोर बैंकों की श्रेणी में थे, किन्तु **कार्य निष्पादन में सुधार कर यूकों बैंक तथा यूनाइटेड बैंक ऑफ इण्डिया अब कमजोर बैंकों की सूची से बाहर हो गये हैं** तथा कमजोर बैंकों की सूची में देना बैंक तथा इण्डियन बैंक जिनका पूंजी पर्याप्त अनुपात पहले क्रमशः 7 प्रतिशत तथा 8 प्रतिशत था, वे भी अब कमजोर बैंकों की सूची से बाहर हो गये हैं। उनका पूंजी पर्याप्ता अपुनात 2002–03 में बढ़कर क्रमशः 9.33 प्रतिशत तथा 10.85 प्रतिशत पहुंच गया।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 वर्मा समिति के गठन का मुख्य उद्देश्य बताइये।

.....

.....

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

.....

प्र. 2 वर्मा समिति की कोई दो सिफारिशें बताइए।

.....

.....

.....

5.5 बैंकिंग क्षेत्र में सुधार :–

पछले वर्षों में बैंकिंग क्षेत्र में कई प्रकार के परिवर्तन देखने को मिले हैं जिनका सम्बन्ध ब्याज की दरों के ढ़ांचे, बैंकों की सुपरविजन सम्बन्धी नीति, विवेकपूर्ण मानदण्ड (prudential norms) पूंजी पर्याप्तता (Capital adequacy), परिसम्पत्ति, शुद्ध कर्ज की स्थिति के अनुरूप धन की व्यवस्था के मानदण्ड (provisioning norms), नये निजी बैंकों की स्थापना, जोखिम–प्रबन्ध (तपेा उंदंहमउमदज), गैर–निष्पादनकारी परिसम्पत्तियां (Non-performing Assets - NPAs) के प्रबन्ध, प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को साख प्रदान करने के कार्य, बैंकिंग क्षेत्र में कानूनी सुधारों (legal reforms) तथा बैंकिंग क्षेत्र में तकनीकी पगति व सुधार आदि से रहा हैं। आगे के विवरण से स्पष्ट होगा कि इन सुधारों के फलस्वरूप भारतीय बैंकिंग का स्वरूप काफी बदल गया हैं और यह अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों को छूने की दिशा में अग्रसर हो रहा हैं।

नीचे विभिन्न बैंकिंग सुधारों का परिचय दिया जा रहा हैं :–

5.5.1 ब्याज दर के ढ़ांचे में परिवर्तन :–

पिछले वर्षों में रिर्जव बैंक ने देश में मौद्रिक नीति के अन्तर्गत नरम व लोचदार (soft and flexible) ब्याज दर को अपनाने का समर्थन किया हैं ताकि निवेश बढ़ सकें। इस सम्बन्ध में बैंक दर (जिस पर रिर्जव बैंक बैंकों को उधार की सुविधा देता हैं) 29 अप्रैल, 2003 से 6 प्रतिशत की गयी हैं। एक दिन की रेपो दर 25 अगस्त, 2003 से 4.5 प्रतिशत की गयी हैं। रिपो के माध्यम से तरलता में कमी लायी जाती हैं। इसके अन्तर्गत बैंक अपने वित्तीय साधन रिर्जव बैंक के पास अल्प समय के लिए रखते हैं और यह कार्य तरलता समायोजन सुविधा (Liquidity Adjustment Facility LAF) के द्वारा किया जाता हैं। बैंक जमाओं पर ब्याज की दरें अल्प बचतों पर 01 मार्च, 2003 से 3.5 प्रतिशत की गई हैं (ये पहले 4 प्रतिशत थी)। व्यापारिक बैंकों ने प्राइम उधार की दरों (Prime Lending Rates PLR) (जो जाने माने व प्रतिष्ठित उधार लेने वालों पर लागू होती हैं) कम की हैं। निर्यात साख के लिए भी ब्याज की दरें कम की गयी हैं। लेकिन बैंकों को जमा की दरों में जितनी गिरावट आई हैं, उतनी गिरावट उधार की दरों में नहीं आ पायी हैं। एक वर्ष से अधिक की परिपक्वता की अवधि के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की जमा की दरें अगस्त 2000 में 8–10 प्रतिशत से घट कर 2002 के अंत में 6–8 प्रतिशत पर आ गयी हैं। अनुसूचित व्यापारिक बैंकों की उधार देने की औसत दरें 1995–1996 में लगभग 17 प्रतिशत से घटकर 2001–02 में लगभग 14 प्रतिशत पर आ पायी थी। लेकिन ये उतनी नहीं गिरी हैं जितनी इस अवधि में मुद्रास्फीति की दर गिरी हैं। इसलिए भारत में बैंकों की उधार देने की वास्तविक दर (तमंस समदकपदह तंजम) ऊँची बनी रही हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

चूंकी 2004–05 में मुद्रास्फीति की दर बढ़ने की सम्भावना हैं, इसलिए फिलहाल बैंक दर में और कमी नहीं की गयी हैं, बल्कि कुछ विशेषज्ञों का मत हैं कि सम्भवतया भविष्य में ब्याज दरों में कुछ वृद्धि करने की जरूरत पड़ सकती हैं। इस प्रकार बैंकिंग सुधारों के अन्तर्गत ब्याज की दरों को नीचा रखने का प्रयास किया गया हैं और इन पर से नियन्त्रण हटा कर बैंकों को इनके निर्धारण की स्वतंत्रता देने का प्रयास किया गया हैं। ब्याज की दरों का विनिमयन (deregulation) किया गया हैं।

5.5.2 नकद रिर्जव अनुपात (ब्त्) :–

1 जुलाई 1989 से 8 अक्टूबर 1992 तक भारत में अनुसूचित व्यापारिक बैंकों का नकद–रिर्जव–अनुपात शुद्ध मांग व अवधि देनदारियों (Net Demand and Time Liablities NDTL) का 15 प्रतिशत था जो 14 जून 2003 से 4.5 प्रतिशत कर दिया गया। इसे भविष्य में 3 प्रतिशत पर लाने का प्रयास किया जा रहा हैं। इसे घटाने से बैंकों की कृषि व उघोग आदि क्षेत्रों को उधार देने की क्षमता बढ़ जाती हैं। यह साख–नियन्त्रण का परोक्ष उपाय माना गया हैं।

5.5.3 वैधानिक तरलता अनुपात (Statutory Liquidity Ratio SLR) :–

इसके अन्तर्गत बैंकों को अपनी शुद्ध मांग व अवधि देनदारियों का एक निश्चित अनुपात नकद राशि, सोना या सरकारी प्रतिभूतियों के रूप में (तरल रूप में) अपने पास रखना पड़ता हैं। यह अनुपात 25 अक्टूबर, 1997 से 25 प्रतिशत की समान दर से लागू किया गया हैं। लेकिन व्यवहार में सुरक्षा व सुनिश्चित प्रतिफल के गुण के कारण भारत में वास्तविक ैस्त् की दर 2004–05 में 44 प्रतिशत के समीप पहुंच जाती हैं। बैंक कुछ कारणों से अपनी जमाओं का अधिक उपयोग सरकारी प्रतिभूतियों में करना पंसद करते हैं। अप्रैल 2002 में विवेकपूर्ण उपाय के रूप में प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों त्त्ठे का अपनी समस्त ैस्त् मात्राओं को केवल सरकारी व अन्य स्वीकृत प्रतिभूतियों में रखने की सलाह दी गयी थी।

5.5.4 विवेकपूर्ण मानदण्ड (Prudential Norms) :–

(प) पूंजी पर्याप्ता अनुपात (Capital Adequacy Ratio) :–

विवेकपूर्ण मानदण्डों के तहत सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए सुरक्षा की दृष्टि से पूंजी का जोखिम भारित परिसम्पत्तियों से अनुपात का न्यूनतम स्तर 9 प्रतिशत रखा गया हैं जिसे मार्च 2002 के अंत मक 27 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में से 25 ने (केवल देना बैंक व इण्डियन बैंक को छोड़कर) इससे अधिक का स्तर प्राप्त कर लिया था। इनमें से 23 बैंकों के लिए ब्।त् की राशि 10 प्रतिशत से अधिक रही हैं। सभी अनुसूचित व्यापारिक बैंकों ने ब्।त् में सुधार करने का प्रयास किया हैं। मार्च 2003 के अंत में सभी 27 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों ने ब्।त् के न्यूनतम स्तर 9 प्रतिशत से अधिक का स्तर प्राप्त कर लिया था। बैंकों को प्र्याप्त रिजर्व रखने हेतु प्रेरित करने के लिए एक 'निवेश उतार–चढ़ाव या उच्चावचन रिजर्व (Investment Fluctuation Reserve IFR) का निर्माण करने की सलाह दी गई है, जिसमें बिक्री के लिए उपलब्ध (।अंपसंइसम वित ैसम ।ै) किस्म के निवेश तथा व्यापार के लिए रखे जाने वाले (Held for Trading HFT) निवेश के लिए न्यूनतम 5 प्रतिशत का रिजर्व 31 मार्च 2002 को समाप्त होने वाले वर्ष से प्रारम्भ करके पाँच वर्षों की अवधि में बनाना होगा। इस प्रकार पर्याप्त रिजर्व रखने का प्रावधान करके जोखिम को कम करने का प्रयास किया गया है।

(पप) आय की पहचान / परिसम्पति वर्गीकरण (Income recognition/ Asset classification):–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

मई 2002 में बैंकों की सलाह दी गई कि जिन प्रोजेक्टों को कार्यान्वित किया जा रहा है, उन्हें उनको पूरा करने की तारीख के आधार पर तीन श्रेणीयों में विभक्त किया जाय:(1)जिन प्रोजेक्टो की वित्तीय वचनबद्धता (financial closure) प्राप्त कर ली गयी है उन्हें मानक परिसम्पतियों दो वर्ष तक मान ली जाएं; (2) जो प्रोजेक्ट 1997 से पहले स्वीकृत हो चुके है और जिनकी लागत 100 करोड रु या इससे अधिक हैऔर जिनकी वित्तीय वचनबद्धता का औपचारिक इस्तावेज नहीं बना है, उन्हें दो वर्ष तक की अवधि के लिए मानक परिसम्पति मान लिया जायें; तथा (3) 1997 से पूर्व जो प्रोजेक्ट 100 करोड़ रु. सं कम राशि का स्वीकृत हो चुका है, और जिसकी वित्तीय वचनबद्धता का औपचारिक दस्तावेज नही बना है, उसे दो वर्ष तक मानक परिसम्पति मान लिया जाय। (प्रोजेक्ट के पूरा होने की तारीख के बाद से)।

फरवरी 2003 में बैंकों को इस बात की इजाजत दी गई कि वे उपर्युक्त तीन श्रेणियों के प्रोजेक्टों में आमदनी की पहचान 'उत्पन्न होने के आधार पर (accrual basis) मानें, जो प्राप्ति आधार (receipt basis) से भिन्न होती है। उत्पन्न होने के आधार पर आमदनी की गणना वास्तविक प्राप्ति के आधार पर नही होती, बल्कि इस आधर पर होती है कि आमदनी का सृजन हो चुका है, और उसे आमदनी के तहत मान लेना चाहिए।

(पपप) **प्रावधान करने सम्बन्धी मानदण्ड** (Provisioning Norms) :–

31 मार्च 2004 से बैंकों के लिए यह आवश्यक कर दिया कि वे शुद्ध कर्ज कि स्थिति के 100 प्रतिशत तक का प्रावधान करें अपनें अन्तर्शाखा खातों की प्रविष्टियों के लिए, जो छः माह से ज्यादा अवधि के लिए समाधान नही की गयी हैं (Un-reconciled) और बकाया राशियों के रूप में चल रही है। इस प्रकार पूँजी–प्र्याप्तता अनुपात, आय की पहचान व परिसम्पति के वर्गीकरण तथा प्रावधान सम्बन्धी मानदण्डों को अपनाकर विवेकपूर्ण मानदण्डो को अपनाकर विवेकपूर्ण मानदण्डों को ऊँचा करने का प्रयास बैंकिंग सुधारों का महत्त्वपूर्ण अंग रहा है।

5.5.5 नये नीजि क्षेत्र के बैंकों की स्थापना (Setting up of New Private Sector Banks):– बैंकिंग क्षेत्र में सुधारों की दिशा में डॉ. आई.जी. पटेल उच्चस्तरीय सलाहकार समिति के सुझावों के आधार पर देश में 2002–2003 में 9 नये निजी क्षेत्र के बैंक काम करने लग गये हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं –IDBI बैंक लिमिटेड, सेन्युरियन बैंक लि., ग्लोबल ट्रस्ट बैंक लि., HDFC बैंक लिमिटेड, ICICI बैंक लिमिटेड, बैंक ऑफ पंजाब लिमिटेड, इंडसइंड बैंक लिमिटेड, कोटक महिन्द्रा बैंक लिमिटेड तथा UTI बैंक लिमिटेड। इससे बैंकिंग विकास को नया आयाम मिला हैं और ग्राहकों के लिए नई सुविधाएं उपलब्ध हुई हैं।

5.5.6 जोखिम प्रबन्ध (Risk Management) :–

पिछले वर्षों में बैंकों के विकास के साथ–साथ उनके समक्ष कई प्रकार की जोखिमें बढ़ गई हैं। इनमें विशेषतया बैंकों के लिये कार्यात्मक जोखिम (operational risk) बढ़ी हैं। बैंकों के समक्ष कई प्रकार की जोखिमें पायी जाती हैं, जैसे–साख की जोखिम, तरलता की जोखिम, भुगतान या निपटान की जोखिम, ब्याज की दर की जोखिम तथा विनिमय दर की जोखिम। रिर्जव बैंक ने इन जोखिमों को कम करने के लिए दिशा निर्देश जारी किये हैं जिनका बैंक उपयोग कर सकते हैं। लेकिन बैंकों में जोखिम प्रबंधन प्रणालियों को उनके व्यवसाय के आकार में परिवर्तनों, बाजार की दशाओं तथा बैंकों द्वारा जारी किये गये नये उत्पादों (innovative products) के अनुरूप ढ़ालना होगा।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

5.5.7 गैर निष्पादनकारी परिसम्पत्तियों का प्रबन्धन (NPA Management by Banks) :– जब बैंको के द्वारा दिये गये कर्ज पर ब्याज की राशि लगातार कम से कम दो मत्रतिमाही तक अर्थात् 6 माह (180 दिन) तक नहीं लौटायी जाती हैं, तो उसे गैर–निष्पादनकारी परिसम्पत्ति की श्रेणी में मान लिया जाता हैं। भविष्य में इसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के अनुसार एक तिमाही (90 दिन) पर लाने ककी बात कही जा रही हैं। बैंकों के लिए छच्। की समस्या काफी गम्भीर मानी गयी हैं। पिछले वर्ष में छच्। की समस्या का समाधान निकालने के लिए कई उपाय किये गये हैं। मार्च 2002 के अंत में सकल गैर–निष्पादनकारी परिसम्पत्तियों की राशि 70153 करोड़ रू. थी, जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का अंश 56473 करोड़ रू. था। मार्च 2003 के अंत में ये राशियां घटकर, क्रमशः 68,714 करोड़ रू. व 54,086 करोड़ रू. पर आ गयी हैं। इस प्रकार सकल छच्े की राशि में से कमी आयी हैं, फिर भी यह समस्या काफी गंभीर हैं। 1999–2000 में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए सकल छच्े का सकल अग्रिम राशियों से अनुपात 14 प्रतिशत था जो 2002–03 में घटकर 9.4 प्रतिशत पर आ गया। इस प्रकार इस अनुपात में कमी तो आयी हैं, लेकिन अभी इस दिशा में और प्रयास जरूरी हैं। रिर्जव बैंक ने व्यापारिक बैंकों को निर्देश दिये हैं कि वे छच्े को घटाने के लिए लोक अदालतों का उपयोग करें एवं कर्ज रिकवरी अदालतों की भी सहायता लें। सरकार द्वारा कर्ज रिकवरी अदालत (कार्य–प्रणाली) के सम्बन्धित नियमों, 2003 में संशोधन किया गया हैं ताकि ये अदालतें बेहतर ढ़ंग से काम को अंजाम दे सकें। इसके अलावा छच्े की समस्या के समाधान के लिए वित्तीय परिसम्पत्तियों के प्रतिभूतिकरण और पुनर्निमाण तथा प्रतिभूति हित को लागू करने का अधिनियम, 2002 (The Securitisation and Reconstruction of Financial Assets and Enforcement of Security Interest SARFAESI Act, 2002) में लागू किया गया हैं, जिसके माध्यम से अदालतों में हस्तक्षेप के बिना कर्ज की बकाया राशियों को वसूलने की व्यवस्था की जाती हैं। इस अधिनियम में व्यवस्था की गई हैं कि बैंक छच्। वाली कम्पनियों की वित्तीय परिसम्पत्तियों को प्रतिभूतिकरण कम्पनियों अथवा पुननिर्माण कम्पनियों को बेच सकते हैं, जिससे कर्ज की रिकवरी में काफी मदद मिल जाती हैं। इस प्रकार पिछले वर्षों में बैंकों द्वारा सुधारों की प्रक्रिया के अन्तर्गत अपने छच्े की रिकवरी के भी प्रयास किये गये हैं।

5.5.8 प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को उधार देने की व्यवस्था में सुधार :–

पिछले वर्षों मे प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को उधार देने की व्यवस्था में कई प्रकार के सुधार किये गये है; जैसे ड्रिप सिंचाई / स्प्रिंक्लर सिंचाई प्रणाली व कृषिगत मशीनरी के डीलरों के लिए उधार की सीमा 10 लाख रु. से बढाकर 20 लाख रु. का गई है। लघु उधोगों के लिए उधार की सीमा 10 लाख रु. से बढ़ाकर 20 लाख रु. की गयी है और इस सम्बन्ध में कार्यकारी पूँजी पर कोई सीमा नहीं रखी गयी है। कारीगरों व ग्रामीण तथा कुटीर उधेगों के लिए साख की सीमा 25 हजार रु. से बढ़ाकर 50 हजार रु. की बयी है। बैंकों को अपनी शुद्ध बैंक साख का 10 प्रतिशत समाज के कमजोर वर्गों को देना होगा, और इसका अंश प्राथमिकता क्षेत्र की कुल साख में 25 प्रतिशत रहेगा। आवास–कर्ज की सुविधा भी ग्रामीण व अर्द्ध–शहरी क्षेत्रों के लिए बढ़ायी गयी है।

5.5.9 ग्रामीण आधारभूत ढ़ांचे के विकास का कोष (Rural Infrastructure Development Fund RIDF) :–

नाबार्ड के राज्य सरकारो व राज्य के स्वामित्व वाले निगमों को ग्रामीण क्षेत्रों में सिंचाई, भू–संरक्षण, जल–प्रबंधन आदि के लिए चालू प्रोजक्टों को पूरा करने के लिए कर्ज उपलब्ध कराया जाता है। त्प्क्थ् में नवीं किस्त 2003–04 में 5,500 करोड रु. की प्रदान की गयी है। इसके द्वारा ब्याज की दर बैंक दर से 2 प्रतिशत बिन्दु नीची रखी गयी है। 2004–05 के बजट में त्प्क्थ् के उपयोग पर पुनः जोर दिया गया है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

5.5.10 स्थानीय क्षेत्रीय बैंक की स्थापना :–

1996 में स्थानीय बैंकों की स्थापना के दिशा निर्देश जारी किये गये थे। वर्तमान में निम्न पाँच बैंक स्थापित किये गये है; कोस्टल स्थानीय क्षेत्रीय बैंक लि., विजयवाडा, केपीटल स्थानीय क्षेत्रीय बैंक लि., फगवाडा, दक्षिण गुजरात स्थानीय क्षेत्रीय बैंक लि., नवसारी, कृष्णा भीमा समृद्धि स्थानीय क्षेत्रीय बैंक लि. महबूब नगर तथा सुभद्रा स्थानीय क्षेत्रीय बैंक लि. कोल्हापुर। ये स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति में योगदान देते है।

5.5.11 बैंकिंग में कानूनी सुधार (Legal Reforms in Banking) :–

एम. नरसिंहम की अध्यक्षता में नियुक्त बैंकिंग क्षेत्र में सुधारों पर 1998 की रिपोर्ट में कानूनी संधारों पर काफी जोर दिया गया था। इन सुधारों का उद्देश्य व्यापार व वाणिज्य की कार्यकुशलता में वृद्धि करना था। पिछले वर्षों में बैंकिंग क्षेत्र में कई प्रकार के कानूनी सुधार लागू किये गये हैं। वर्ष 2002 में एक संशोधित बैंकिंग ओम्बड्समैन स्कीम (Ombusdsman scheme) लागू की गयी हैं जिसके तहत एक विशिष्ट व्यक्ति को बैंकों के विवादों को निपटाने की जिम्मेदारी परस्पर समझौते व मध्यस्था की प्रक्रिया के द्वारा ओम्बड्समैन को सौंपी गई हैं। जैसा कि पहले संकेत दिया गया हैं 'सारफेसी (SARFAESI), अधिनियम 2002 पारित किया गया हैं ताकि बैंकों की पुरानी बकाया राशि वसूल की जा सकें। यह अधिनियम जनवरी 2003 से सहकारी बैंकों पर भी लागू कर दिया गया हैं। जनवरी 2003 से काले धन की वैधता का अवरोही अधिनियम, 2002 (Prevention of Money Laundering Act, 2002) लागू किया गया हैं जो अपराध से सम्बद्ध धन की जोखिम का सामना करेगा और इसके लिए उपयुक्त कानूनी ढ़ांचा उपलब्ध करेगा। बैंकिंग नियमन (संशोधन) व विधिक प्रावधान विधेयक 2003 सरकार के विचाराधीन हैं। इसमें बैंकिंग, बैंकिंग नीति आदि को पुनः परिभाषित किया जाएगा। रिर्जव बैंक अधिनियम, 1934 में संशोधन किया जाएगा ताकि कर्ज प्रबन्धन को मौद्रिक प्रबंधन से पृथक किया जा सके। बैंक जमा बीमा निगम विधेयक पारित किया जाएगा ताकि जमा बीमा व साख गारन्टी निगम किसी भी बैंक द्वारा प्रीमीयम का भुगतान न मिलने पर उसका रजिस्ट्रेशन निरस्त कर सकें।

5.5.12 बैंकिंग में तकनीकीय सुधार :–

नये निजी बैंकों, विदेशी बैंकों व कुछ पुराने निजी बैंकों ने कम्प्यूटराइजेशन आदि की दिशाओं में काफी परिवर्तन किये हैं और इस दिशा में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक भी काफी आगे बढ़ रहे हैं। बैंकों के द्वारा प्रक्रियाओं के आधुनिकीकरण को अत्यधिक महत्व दिया जा रहा हैं। इससे उदारीकरण के दौर में बैंकिंग के विस्तार में मदद मिली हैं। सूचना–प्रौद्योगिकी की रणनीतियों को व्यावसायिक रणनीति से जोड़ने का प्रयास तेजी से किया जा रहा हैं।

5.5.13 अन्य सुधार :–

बैंकिंग व्यवस्था में अनेक प्रकार के आवश्यक सुधार नित्य प्रति किये जा रहे हैं, जैकों की शीघ्र जमा कराने की व्यवस्था, अस्वीकृत चैकों को शीघ्रता से लौटाने की व्यवस्था, टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं के लिए बहुत कम ब्याज पर (शून्य ब्याज पर भी) कर्ज देने की व्यवस्था (विनिर्माताओं से बट्टे की राशि का समायोजन करके), अपने ग्राहक को जानों ताकि वित्तीय गड़बड़े रोकी जा सकें, काले धन के प्रसार पर रोक लग सकें, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में विनिवेश के लिए बोली लगाने वालों को बैंक धन उपलब्ध करा सकें, तथा ऐसे उपाय करना ताकि स्टॉक बाजार में समय–समय पर होने वाले काण्ड़ों को रोका जा सकें।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 बैंकिंग क्षेत्र में सुधार हेतु किन विवेकपूर्ण मानदण्डों को ऊँचा करने का प्रयास किया गया हैं ?

.....

.....

.....

प्र. 2 बैंकिंग क्षेत्र में प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को उधार देने की व्यवस्था में क्या सुधार किये गये हैं ?

.....

.....

.....

प्र. 3 त्क्थ् का पूरा नाम बताइए।

.....

.....

.....

प्र. 4 बैंकिंग क्षेत्र में किये गये कानूनी सुधार बताइए।

.....

.....

.....

5.6 सारांश :–

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता हैं कि 1991 से आर्थिक सुधारों के दौर में उदारीकरण की प्रक्रिया को सफल बनाने के लिए वित्तीय व बैंकिंग सुधारों पर भी काफी ध्यान केन्द्रित किया गया हैं। आज की बैंकिंग प्रणाली पहले कि तुलना में अधिक व्यापक, अधिक आधुनिक, अधिक प्रगतिशील व अधिक विकासोन्मुख हो गयी हैं। पिछले वर्षों में हर साल मौद्रिक व साख नीति की घोषणा में वित्तीय में वित्तीय सुधारों को आगे बढ़ाने का सतत प्रयास रहा है। यही वजह है कि भारत में ब्याज की दरों में कमी दिखायी देती है, और ब्याज की दरों की दरों को लचीला बनाया गया है और इनमें काफी सीमा तक विनिमय व विनियन्त्रण की प्रक्रिया का प्रभाव देखने

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

को मिलता है। इससे निवेश को प्रोतसाहन देने की कोशिश की गयी है। सामाजिक न्याय व सामाजिक कल्याण की दृष्टि से बैंकिंग प्रणली के माध्यम से समाज के कमजोर वर्गो को प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रो को साख की अधिक सुविधा प्रदान करके विकास का अवसर दिया गया है। बैंकिंग क्षेत्र के लिए विभिन्न प्रकार के विवेकपूर्ण उपाय लागू करके; जैसे–पूँजी–पर्याप्तता–अनुपात, परिसम्पतियों का वर्गीकरण, आदि के जरिए जोखिम को कम करने का प्रयास किया गया है। रिजर्व बैंक ने बैंकिंग प्रणाली पर देख रेख व निगरानी बढ़ा दी है। उसने बैंकिंग व्यवस्था को अधिक कार्यकुशल बनाने में अपनी तरफ से कोई कोर–कसर नहीं छोडी है और बैंकिंग सुधारों की प्रक्रिया को जारी रखकर गैर–निष्पादनकारी परिसम्पतियो का अनुपात कुल उधार की राशियों में कम करने में सफलता प्राप्त की है। आज रिजर्व बैंक 'तरलता के समायोजन' में काफी नाम कमा चुका है और मुद्रास्फीति की दर एक अंक में काफी स्थिर स्तर पर कायम है और यह विदेशी विनिमय दर को भी उचित स्तर पर बनाये रखने में प्रयत्नशील रहा है। आशा है आगामी वर्षों में बैंकिंग सुधारों कि प्रक्रिया को अधिक व्यापक व अधिक गहन बना कर विकास की दर को ऊँचा करना सम्भव हाक सकेगा। राकेश मोहन के अनुसार, ''भारत में उधार की वास्तविक दरों को कम करने की आवश्यकता है। इसके लिए सरकार और रिजर्व बैंक को कुछ ढ़ांचागत कठोरताओं को दूर करने का प्रयास करना होगा, और स्वयं बैंकों को भी अपनी कार्यकुशलता में सुधार करना होगा। इन्हें लघु व मध्यम उपक्रमों क लिए साख की सुविधा बढ़ानी होगी और दीर्घकालीन वित्तीय व्यवस्था के लिए अचित व अनुकूल वातावरण बनाना होगा। NPA के स्तरों में कमी व बैंको के द्वारा उचित जोखिम प्रबंधन से इनकी कार्यकुशलता में सुधार करने में भारी मदद मिलेगी और देश में एक सुदृढ़ साख–संस्कृति का विकास हो पाएगा।'' इसलिए आगामी वर्षो में बैंकिंग सुधारों का नया ढांचा तैयार किया जाना चाहिए। फिलहाल संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार ने सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के निजीकरण के विचार को छोड़ दिया हैं और इन्हें सार्वजनिक क्षेत्र में ही रखने का निर्णय किया हैं। लेकिन निजी क्षेत्र में नये बैंक खोलने की मनाही नहीं हैं। भारत में भावी आर्थिक विकास में एक आधुनिक व प्रतियोगी किस्म की बैंकिंग प्रणाली की नितान्त आवश्यकता हैं। इसकी आर्थिक सुधारों में केन्द्रीय भूमिका रहेगी।

5.6 निबन्धात्मक प्रश्न :–

निम्न प्रश्नों के उत्तर 500 शब्दों में दीजिए।

प्रश्न 1. भारत में बैंकिंग क्षेत्र के आर्थिक सुधारों की विस्तृत विवेचना कीजिए।

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

5.3 के उत्तर

1. (1) बैंकों के प्रबन्धकीय बोर्डों में नियुक्तियां बिना राजकीय हस्तक्षेप के व्यावसायिक कुशलता के आधार पर की जाए। (2) बैंकों में तेजी से कम्प्यूटरीकरण पर ध्यान दिया जाए।
2. देखिए 5.3 भाग (ब)
3. बोर्ड फॉर फाइनेन्शियल सुपरविजन (Board for financial supervision)

5.4 के उत्तर

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. सार्वजनिक क्षेत्र के कमजोर बैंकों के पुनर्संरचना हेतु रिर्जव बैंक ऑफ इण्डिया ने वर्मा समिति का गठन किया।

2. (1) कर्मचारियों की संख्या में 30–35 प्रतिशत की कमी (2) कमजोर बैंकों में आधुनिक सूचना प्रौद्योगिकी अपनाने के लिए बाहरी एजेन्सी की सेवाएं ली जाए।

5.5 के उत्तर

1. पूंजी पर्याप्ता अनुपात, आय की पहचान व परिसम्पत्ति के वर्गीकरण तथा प्रावधान संबंधी मानदण्ड।
2. बैंको अपनी शुद्ध बैंक साख का 10 प्रतिशत समाज के कमजोर वर्ग को देना होगा तथा इसका अंश प्राथमिकता क्षेत्र की कुल साख में 25 प्रतिशत रहेगा।
3. Rural Infrastructure Development Fund (ग्रामीण आधारभूत ढ़ांचे के विकास का कोष)
4. देखिये 5.5.11

5.9 संदर्भ ग्रंथ :–

1. मिश्रा एवं पुरी, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
2. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम्, 'भारतीय अर्थव्यवस्था'
3. सारस्वत, शर्मा, गुप्ता, गोधा, 'बैंकिंग एवं वित्तीय व्यवस्था'
4. लक्ष्मीनारायण नाथूरामका, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा सार्वजनिक वित्त'
5. बी. एल. ओझा, 'मुद्रा, बैंकिंग तथा राजस्व'

5.10 शब्द कोष :–

नरसिंहम समिति	वर्मा समिति
नकद रिर्जव अनुपात	वैधानिक तरलता अनुपात
विवेकपूर्ण मानदण्ड	जोखिम प्रबन्ध
स्थानीय क्षेत्रीय बैंक	कानूनी सुधार
राजकोषीय क्षेत्र	विदेशी निवेश
औटेक्नोलोजिकल	गैर–निष्पादन परिसम्पत्तिय

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1

Hkkjrh; fjtoZ cSad vf/kfu;e] 1934

The Reserve Bank of India Act, 1934

1-1 çkDdFku (Introduction)

किसी भी देश में केन्द्रीय बैंक की स्थापना एक सुसंगठित एवं सुव्यवस्थित मौद्रिक व्यवस्था स्थापित करने के उद्देश्य से आवश्यक समझी जाती है। भारत में 18वीं शताब्दी के आरम्भ से ही केन्द्रीय बैंक की स्थापना की ओर विचार किया जाने लगा। सर्वप्रथम सन् 1896 में लार्ड वारेन हेस्टिंग्स ने ब्रिटिश सरकार को इस प्रकार की बैंक की स्थापना करने के लिए पत्र लिखा तथा जनरल बैंक ऑफ बंगाल एण्ड बिहार को केन्द्रीय बैंक बनाने का सुझाव दिया। इसका उद्देश्य था कि केन्द्रीय बैंक भारत के बैंकों का समय–समय पर मार्ग–दर्शन कर सकेगा तथा उनका उचित नियमन तथा नियन्त्रण रखकर उनकी गतिविधियों की सूचना केन्द्र सरकार को दे सकेगा। इसके पश्चात् समय–समय पर प्रमुख विद्वानों, सम्मेलनों एवं जाँच आयोगों ने केन्द्रीय बैंक की स्थापना हेतु सुझाव दिये।

सन् 1913 में पुनः चैम्बरलिन आयोग के सदस्य लार्ड कीन्स ने भी इस प्रकार की बैंक की स्थापना पर जोर दिया किन्तु तत्कालीन अंग्रेज सरकार ने तीन प्रजिडेन्सी बैंकों यथा प्रजिडेन्सी बैंक ऑफ बंगाल, मद्रास एवं बम्बई को मिलाकर 1921 में इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना कर दी और उसे बैंकों के नियंत्रण एवं मार्गदर्शन का कार्य सौंप कर केन्द्रीय बैंक की स्थापना को नजरअन्दाज कर दिया तथा नोट निर्गमन का अधिकार सरकार ने अपने पास ही रखा। इस प्रकार मुद्रा का निर्गमन भारत सरकार द्वारा एवं साख का नियन्त्रण इम्पीरियल बैंक द्वारा किया जाता था।

सन् 1926 में हिल्टन आयोग ने मुद्रा तथा साख को नियनत्रित करने की दोहरी नियन्त्रण पद्धति को समाप्त करने एवं बैंकिंग व्यवस्था को समुचित रूप से चालने की दृष्टि से केन्द्रीय बैंक की स्थापना करने की पुरजोर सिफारिश की।

सन् 1928 में भारतीय विधान सभा में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना के लिये एक बिल पेश किया किन्तु यह बैंक सरकारी हो अथवा हिस्सेदारी का बैंक होना चाहिये के विवाद में फंसकर रह गया और बिल पास न हो सका।

पुनः केन्द्रीय बैंकिंग जाँच समिति ने 1931 में रिजर्व बैंक की स्थापना के सुझाव को क्रियान्वित करने की सिफारिश की, परिणाम स्वरूप तुरन्त 8 सितम्बर 1933 को रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापनार्थ दूसरा बिल भारतीय विधानसभा (Indian Legislative Assembly) में प्रस्तुत किया गया जो अन्ततः पास हो गया और 6 मार्च, 1934 को उस पर तत्कालीन वायसराय के हस्ताक्षर हो गये और भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 प्रभावी हो गया। 1 अप्रेल 1935 से इस बैंक ने विधिवत कार्य प्रारम्भ कर दिया।

1-2 vf/kfu;e nk pj.kk e ykx& इस अधिनियम को दो चरणों में लागू किया गया। 1 जनवरी, 1935 को प्रथम चरण के रूप में अधिनियम की धारा 2 से 19, 47 से 52, 55 से 58 तथा 61 का लागू किया गया तथा दूसरे चरण 1 अप्रेल 1935 को शेष बची धाराओं को लागू कर दिया गया।

1-3 fjtoZ cSad dh LFkkiuk ds mís'; [Objectives of Establish Reserve Bank of India)

प्रत्येक देश के आर्थिक विकास में सुदृढ़, मौद्रिक व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ऐसे देशों में जहाँ मुद्रा

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

बाजार तथा बैंकिंग व्यवस्था अविकसित होती है या पूर्ण विकसित नहीं होती है वहाँ केन्द्रीय बैंक के नियमन एवं नियन्त्रण के साथ साथ मुद्रा बाजार तथा मौद्रिक और बैंकिंग व्यवस्था का विकास करना पड़ता है। इससे सम्बन्धित राष्ट्र का आर्थिक विकास निर्बाध गति से संचालित होता है तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में विकास हेतु पर्याप्त वितीय सुविधायें उपलब्ध होती है। इन्हीं कारणों से भारत में केन्द्रीय बैंक के रूप में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना की गयी। भारत में रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना का उद्देश्य निम्न प्रकार थे –

¼1½ enk ,o lk[k uhfr e leUo; (Co-Ordination in Money and credit Policy) –इस बैंक की स्थापना से पूर्व भारत में मुद्रा निर्गमन का कार्य सरकार स्वयं करती थी तथा साख नियन्त्रण का कार्य इंपीरियल बैंक द्वारा किया जाता था। मुद्रा तथा साख मौद्रिक व्यवस्था के अभिन्न अंग है। अतः यह आवश्यक था कि इनका संचालन किसी एक ही संस्था द्वारा किया जाय। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना कर मुद्रा एवं साख नीति में समन्वय स्थापित किया गया।

¼2½ :i; d vkUrfjd ,o ckâ eY; e fLFkjrk To Maintain Internal and External Value of Money) –

राष्ट्रीय मुद्रा में जन विश्वास बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि उस देश की मुद्रा के आन्तरिक एवं बाह्य मूल्य में स्थिरता बनी रहे। यह अनुभव किया गया है कि रूपये के आन्तरिक एवं बाह्य मूल्य में स्थिरता स्थापित करने हेतु केन्द्रीय बैंक की स्थापना आवश्यक है। मुद्रा के मूल्य में स्थिरता स्थापित करने के लिए यह भी आवश्यक समझा गया कि मुद्रा और साख पर किसी एक ही संस्था का नियन्त्रण रहे। इससे मुद्रा पूर्ति का विस्तार एवं संकुचन व्यापारिक आवश्यकताओं के अनुसार किया जाना सम्भव था। अतः रिजर्व बैंक की स्थापना कर मुद्रा के मूल्य में स्थिरता लाने का प्रयास किया गया।

¼3½ cfdx dk lefpr fodkl (Adequate Development of Banking) –प्रत्येक देश में केन्द्रीय बैंक, बैंकों का बैंक होता है। रिजर्व बैंक की स्थापना का एक कारण यह भी था कि देश में बैंकिंग व्यवस्था का विकास केन्द्रीय बैंक की सहायता के बिना सम्भव नहीं था। इस बैंक की सहायता, निर्देशन एवं मार्ग दर्शन देश में एक समुचित बैंकिंग व्यवस्था का विकास करता है।

¼4½ cdk d udn dk"kk dk dUnh;dj.k (Centralisation of Bank's Cash Reserves) –रिजर्व बैंक की स्थापना से पूर्व सभी बैंक अपने नकद कोषों को अलग अलग रखा करते थे। इससे न तो बैंकिंग व्यवस्था में जनता का विश्वास उत्पन्न होता था, न ही बैंकिंग प्रणाली में दृढ़ता आ पाती थी और न ही कोषों का समुचित एवं ठीक उपयोग हो पाता था। अतः यह अनुभव किया गया कि सभी बैंकों के नकद कोषों के केन्द्रीयकरण के लिए एक केन्द्रीय बैंक की स्थापना की जाय।

¼5½ enk ckt kj dk lxBu (Organisation of Money Market) –रिजर्व बैंक की स्थापना से पूर्व भारत में सुसंगठित एवं सुव्यवस्थित मुद्रा बाजार का अभाव था। मुद्रा बाजार के विभिन्न भागों में किसी प्रकार के सहयोग एवं समन्वय का नितान्त अभाव था। मुद्रा बाजार के इस दोष को दूर करने के लिए एक केन्द्रीय बैंक की स्थापना को आवश्यक समझा गया।

¼6½ Ñf"k lk[k dh 0;oLFkk (Arrangement of Agricultural Credit) – भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा कृषि देश का सबसे बड़ा उद्योग है। देश में कृषि क्षेत्र के समुचित विकास हेतु पर्याप्त तथा अधिक मात्रा में साख एवं अन्य बैंकिंग सहायता की आवश्यकता अनुभव की गयी। रिजर्व बैंक की स्थापना से पूर्व कृषि साख हेतु देश में कोई उचित व्यवस्था नहीं थी। अतः कृषि साख की व्यवस्था के लिए एक केन्द्रीय बैंक की स्थापना की गई।

¼7½ fon'kk l ekfnd lEidl (Monetary Contacts with Foreign Countries) –अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के बढ़ने के साथ ही भुगतान संतुलन को समायोजित रखने के प्रयास स्वरूप भी केन्द्रीय बैंक की स्थापना की आवश्यकता अनुभव की गयी थी। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व के अन्य देशों के बैंकों से मौद्रिक सम्पर्क

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

स्थापित करने के लिए केन्द्रीय बैंक की आवश्यकता थी।

¼8½ **lkoZtfud _.kk dk izcU/k (Management of Public Debts)** –हमारी अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक ऋण का महत्वपूर्ण स्थान है। इन ऋणों में जनता का विश्वास बनाये रखने के लिए यह आवश्यक था कि इनकी प्राप्ति एवं भुगतान एवं लेखाजोखा रखने की व्यवस्था केन्द्रीय बैंक के द्वारा की जाय। अतः केन्द्रीय बैंक के रूप में रिजर्व बैंक के स्थापित करने की आवश्यकता थी।

1-4 fjtoZ cSad dh ifjHkk"kk&रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया अर्थात् केन्द्रीय बैंक एक ऐसी संस्था है जो देश की मौद्रिक, बैंकिंग तथा साख व्यवस्था का इस प्रकार नियमन एवं नियन्त्रण करती हैं, जिससे देश की आर्थिक प्रगति वांछित गति से उचित दिशाओं में होती रहती हैं।

1-5 vf/kfu;e dh dqy /kkjk,¡& प्रारम्भ में इस अधिनियम में कुल 61 धाराएँ थीं किन्तु समय–समय पर किये गये संशोधनों से कुछ धाराओं यथा 5, 14, 15, 16, 32, 35, 36, 44, 55, 56 को हटा दिया गया है।

1-6 vf/kfu;e esa dqy v/;k;&इस अधिनियम में कुल 7 अध्याय हैं, जिनमें निम्नांकित विषयों का अध्यायवार समावेश इस प्रकार है –

Ø-	**v/;k;**	**lekfo"V fo"k;**
1.	प्रथम अध्याय	प्रारम्भिक
	Chapter First	Preliminary
2.	द्वितीय अध्याय	स्थापना, पूँजी, प्रबन्ध व व्यवसाय
	Chapter Second	Incorporation, Capital, Management & Business
3.	तृतीय अध्याय	रिजर्व बैंक के केन्द्रीय बैंक के रूप में कार्यों का विवरण
	Chapter Third	Central Banking Functions of Reserve Bank
4.	तृतीय (अ)	साख सूचनाओं का एकत्रीकरण एवं आपूर्ति
	Chapter Third (A)	Collection and Furnishing of Credit Information
5.	तृतीय (ब)	गैर–बैंकिंग तथा अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा निवेश प्राप्ति एवं उपयोग सम्बन्धी प्रावधान
	Chapter Third (B)	Provision Relating to Non-Banking Institutions receiving Deposits and Finance
6.	तृतीय (स)	व्युत्पन्नी मुद्रा बाजार की प्रतिभूतियों के लेन–देन सम्बन्धी नियमन की शक्तियाँ
	Chapter Third (C)	Prohibition of Acceptance of Deposits by unincorporated Bodies
7.	तृतीय (द)	असमामेलित संस्थाओं द्वारा जमा स्वीकार करने पर प्रतिबन्ध
	Chapter Third (D)	Power to regulate transactions in Derivatives, money market Instruments or Securities etc.
8.	चतुर्थ अध्याय	सामान्य प्रावधान
	Chapter Fourth	General Provisions
7.	पंचम अध्याय	दण्ड व्यवस्था
	Chapter Fifth	Penalties

1-7 vuqlwfp;k¡ (Schedules) –प्रारम्भ में इस अधिनियम में 5 अनुसूचियों का समावेश था किन्तु कालान्तर में तीन अनुसूचियाँ हटा दी गई। अब केवल दो अनुसूचियाँ हैं – प्रथम अनुसूची में रिजर्व बैंक के कार्यक्षेत्रों (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण) का निर्धारण तथा दूसरी अनुसूची में अनुसूचित बैंकों (Scheduled Banks) के नाम हैं। जिनकी

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

संख्या बदलती रहती है क्योंकि इस अनुसूची में रिजर्व बैंक की आवश्यक शर्तों को पूरा करने वाले बैंकों के नाम जोड़े जाते हैं तथा शर्तें पूरी न करने वालों के नाम निकाल दिये जाते हैं। इसमें से राष्ट्रीयकृत बैंकों के नाम भी हटा दिये जाते हैं।

1-8 vf/kfu;e dk dk;{k= –इस अधिनियम को प्रारम्भ में जम्मू–कश्मीर को छोड़ सम्पूर्ण देश पर लागू किया गया था किन्तु 1956 के संशोधन से यह जम्मू–कश्मीर में भी लागू होने के पश्चात् यह सम्पूर्ण देश पर लागू हो गया है।

1-9 fjto cd dh ith (Capital of R.B.I.) –अधिनियम की धारा 4 के अनुसार रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना के समय कुल पूँजी 5 करोड़ रू. थी जो 100–100 रूपये के 5 लाख अंशों (Shares) में विभाजित थी। यह पूँजी प्रारम्भ में निजी अंशधारियों को आंवटित की गई तथा केन्द्र सरकार के पास 2.2 लाख रू. की हिस्सा पूँजी थी। 1948 में रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण करने से बैंक की समस्त पूँजी केन्द्र सरकार द्वारा खरीद ली गई अतः रिजर्व बैंक की 5 करोड़ रू. की सारी पूँजी अब केन्द्र सरकार के स्वामित्व में है।

1-10 dUnh; lpkyd e.My dk xBu (Composition of the Central Board) –**1-10-1** अधिनियम की ध ारा 7 तथा 8 के अनुसार रिजर्व बैंक का प्रबन्ध उसके केन्द्रीय निदेशक मण्डल (Central Board of Directors) के हाथ में है जिसमें 20 निदेशक हो सकते हैं और उसका गठन निम्नलिखित विधि से किया जाता है – रिजर्व बैंक की प्रबन्ध व्यवस्था इस तालिका से स्पष्ट है –

1. गवर्नर (Governor) – 1 – सर्वोच्च पूर्णकालिक अधिकारी
2. डिप्टी गवर्नर (Deputy Governors) – 4–सभी पूर्णकालिक अधिकारी
3. संचालक (Directors) – 15 (10 भारत सरकार द्वारा मनोनीत + 4 स्थानीय मण्डलों द्वारा मनोनीत + एक भारत सरकार द्वारा मनोनीत अधिकारी – सभी अंशकालिक)

1-10-2 dUnh; lpkyd e.My (Central Board of Directors) dk xBu &

1. एक गवर्नर जिसकी नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा की जाती है। उसका कार्यकाल 5 वर्ष तक की अवधि का हो सकता है और उसकी नियुक्ति एक से अधिक बार भी की जा सकती है।
2. अधिक से अधिक चार डिप्टी गवर्नर जिनकी नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा की जाती है। उनका कार्यकाल भी 5 वर्ष तक हो सकता है और उनकी नियुक्ति दुबारा भी की जा सकती है।
3. चार निदेशक केन्द्र सरकार द्वारा मनोनीत किये जाते हैं और उनका मनोनयन रिजर्व बैंक के प्रत्येक स्थानीय निदेशक मण्डल में से किया जाता है।
4. दस निदेशक भारत सरकार द्वारा चार वर्ष की अवधि तक के लिये केन्द्र सरकार द्वारा मनोनीत किये जाते हैं। नये निदेशक की नियुक्ति होते ही पुराने निदेशक का कार्यकाल समाप्त माना जाता है।
5. एक निदेशक केन्द्र सरकार द्वारा मनोनीत सरकारी अधिकारी, जो प्रायः भारत सरकार का वित्त सचिव (Finance Secretary) होता है जो सरकार की इच्छानुरूप अवधि तक कार्य कर सकता है।

lpkyd e.My d oru] HkÙk rFkk dk; – रिजर्व बैंक का गवर्नर तथा उसके चार डिप्टी गवर्नर पूर्णकालिक अधिकारी होते हैं और उनका पूरा समय बैंक के प्रशासन में लगता है। इनके वेतन–भत्ते केन्द्र सरकार की सहमति से केन्द्रीय निदेशक मण्डल द्वारा निर्धारित किये जाते हैं।

lpkyd e.My d vf/kdkj – रिजर्व बैंक का गवर्नर बैंक का प्रमुख अधिकारी होता है। वह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

केन्द्रीय निदेशक मण्डल की सभाओं की अध्यक्षता करता है तथा बैंक के समूचे कार्य के संचालन की देख–रेख करता है। चार डिप्टी गवर्नर तथा एक सरकारी अधिकारी केन्द्रीय निदेश मण्डल की सभाओं में भाग लेने तथा अपनी राय प्रकट करने के अधिकारी तो हैं किन्तु उन्हें मत (Vote) देने का अधिकार नहीं है। इस प्रकार केन्द्रीय निदेशक मण्डल के 20 में से केवल 15 निदेशकों को ही मताधिकार (Voting Right) प्राप्त है।

fMIVh xoZuj dk vf/kdkj & गवर्नर की अनुपस्थिति में उसके द्वारा मनोनीत डिप्टी गर्बनर केन्द्रीय निदेशक मण्डल की सभाओं की अध्यक्षता करने तथा मत (Vote) देने का अधिकारी हो जाता है।

fu.kZ;ksa dh oS|rk – केन्द्रीय निदेशक मण्डल के द्वारा लिये गये सभी निर्णय, चाहे कोई पद खाली भी क्यों न हो, वैध माने जाते है और रिक्त पद के आधार पर किये गये निर्णय को चुनौती नहीं दी जा सकती।

1-10-3 fo'ks"k ifjfLFkfr;ksa esa fjtoZ cSad dk dsUnzh; funs'kd e.My dk vf/kdkjksa dk LFkxu (Stay on Powers of Central Board of R.B.I.) –इस अधिनियम में भारत सरकार को विशेष परिस्थितियों में अपनी ओर से आदेश जारी कर केन्द्रीय निदेशक मण्डल के सम्पूर्ण अधिकारों के स्थगन का अधिकार दिया गया है।

1-10-4 fjtoZ cSad dk dsUnzh; funs'kd e.My dh cSBdsa (Meetings of the Central Board of Directors of R.B.I.) –अधिनियम की धारा 13 के अनुसार निम्नांकित प्रावधान उल्लेखनीय हैं –

1. अधिनियम की धारा 13(1) के अनुसार वर्ष में कम से कम छः बैठकें होना आवश्यक है। तथा तीन महीने में कम से कम एक बैठक बुलाना जरूरी है।
2. अधिनियम की धारा 13(2) के अनुसार बैठकें बुलाने का अधिकार गवर्नर को है अथवा चार निदेशकों की तत्ससम्बन्धी इच्छा पर भी गवर्नर बैठकें बुला सकता है।
3. अधिनियम की धारा 13(3) के अनुसार केन्द्रीय निदेशक मण्डल की बैठकों की अध्यक्षता गवर्नर करता है और उसकी अनुपस्थिति में उसके द्वारा मनोनीत डिप्टी गवर्नर बैठकों की अध्यक्षता कर सकता हैं। निर्णायक मत (Casting Vote) – केन्द्रीय मण्डल की सभा में किसी विषय पर बराबर मत (Vote) होने पर अध्यक्ष को अपना निर्णाया मत (Casting Voate) देने का अधिकार होता है।

1-11 LFkkuh; e.My dk xBu (Local Boards their constitution & Function)

1-11-1 अधिनियम की धारा 9 के अनुसार निम्न प्रकार स्थानीय मण्डल का गठन किया गया है –

सभी 4 मण्डलों में 5–5 निदेशक

1.	पूर्वी क्षेत्र	– कलकत्ता	: 5 निदेशक
2.	पश्चिमी क्षेत्र	– मुम्बई	: 5 निदेशक
3.	उत्तरी क्षेत्र	– नई दिल्ली	: 5 निदेशक
4.	दक्षिणी क्षेत्र	– चैन्नई	: 5 निदेशक

fVIi.kh % सभी स्थानीय मण्डलों के 5–5 निदेशक भारत सरकार द्वारा मनोनीत होते है।

1-11-2 pkj LFkkuh; e.Myksa dk {ks= (Area of Four Local Boards) –रिजर्व बैंक अधिनियम में बैंक के कुशल संचालन की दृष्टि से उसके प्रशासन की इकाइयों को चार क्षेत्रों में बांट कर उनके अलग–अलग चार स्थानीय बोर्ड बनाये गये हैं, जिनके सम्मिलित राज्य निम्नानुसार हैं –

1- iwohZ {ks= (Eastern Zone) – इस क्षेत्र के अन्तर्गत अरुणाचल, असम, नागालैण्ड, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा, मेघालय, पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा, सिक्किम तथा अण्डमान निकोबार द्वीप

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

समूह शामिल हैं तथा मुख्यालय कोलकाता है।

2- **if'peh {k= (Western Zone)** – इस क्षेत्र में मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, गोआ तथा केन्द्र शासित प्रदेश दीव, दमन, दादर नागर हवेली शामिल हैं। इसका मुख्यालय मुम्बई है।

3- **mÙkjh {k= (Northern Zone)** – इस क्षेत्र में जम्मू–कश्मीर, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, चण्डीगढ़, दिल्ली, राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश शामिल हैं और इस क्षेत्र का मुख्यालय दिल्ली है।

4- **nf{k.kh {k= (Southern Zone)** – इस क्षेत्र के अन्तर्गत आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल तथा पाण्डिचेरी एवं लक्षदीप आते हैं और इस क्षेत्र का मुख्यालय चेन्नई (मद्रास) है।

1-11-3 pkj LFkkuh; e.Myk dk xBu (Formationof Four Local Local Boards) – रिजर्व बैंक अधिानियम में इन अलग–अलग क्षेत्रों में समुचित बैंकिंग विकास को दृष्टिगत रखते हुए प्रशासनार्थ प्रत्येक क्षेत्र में एक–एक स्थानीय मण्डल का गठन किया गया है जिसकी रचना इस प्रकार है–

(1) प्रत्येक स्थानीय मण्डल के पांच निदेशक होते हैं उनकी नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा उसी क्षेत्र के निवासियों में से की जाती है और उनके चयन में अर्थशास्त्र, सहकारिता तथा स्वदेशी बैंकिंग से सम्बन्धित व्यक्तियों को प्राथमिकता दी जाती है।

(2) स्थानीय मण्डल का अध्यक्ष – सम्बन्धित मण्डल के निदेशक सदस्यों द्वारा अपने में से ही एक व्यक्ति को अध्यक्ष चुन लेते हैं वह उसकी सभाओं की अध्यक्षता करता है।

(3) स्थानीय मण्डलों की नियुक्ति चार वर्ष के लिये होती है और कार्यकाल समाप्ति के बाद भी नयी नियुक्ति तक बने रहते हैं। इनकी दुबारा नियुक्ति भी की जा सकती है।

(4) स्थानीय मण्डलों का कार्य निर्धारण केन्द्रीय निदेशक मण्डल द्वारा किया जाता है और वे अपने–अपने क्षेत्र की बैंकिंग एवं मौद्रिक समस्याओं के बारे में केन्द्रीय निदेशक मण्डल को सुझाव देते रहते है।

(5) स्थानीय मण्डल के निदेशकों की नियुक्ति में अयोग्यता – निम्नलिखित व्यक्तियों को स्थानीय मण्डल की सदस्य मनोनीत नहीं किया जा सकता –

(a) वेतन–भोगी सरकारी अधिकारी।

(b) दिवालिया, पागल अथवा अस्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति।

(c) किसी बैंक में नियोजित अधिकारी या कर्मचारी

(d) किसी सहकारी बैंक अथवा व्यापारिक संस्था के निदेशक मण्डल का कोई सदस्य

1-12 fjtoZ cSd d dk;kZy; (Offices of Reserve Bank)-बैंक द्वारा अहमदाबाद, बंगलौर, भुवनेश्वर, बायकुला (मुम्बई), गौहाटी, हैदराबाद, जयपुर, कानपुर, नागपुर तथा पटना में अपने शाखा कार्यालय खोले है। इसके अतिरिक्त बैंक के प्रतिबन्धित कार्य करने वाले कार्यालय श्रीनगर, जम्मू, लखनऊ, चण्डीगढ़, भोपाल, इन्दौर, कोचीन एवं त्रिवेन्द्रम में स्थापित किये गये हैं। रिजर्व बैंक को केन्द्रीय सरकार की पूर्ण अनुमति लेकर किसी भी स्थान पर शाखा कार्यालय खोलने का अधिकार है। हमारे देश में अनेक स्थान ऐसे है जहाँ अभी भी रिजर्व बैंक का कोई कार्यालय नहीं है। ऐसे स्थानों पर स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, रिजर्व बैंक के अभिकर्त्ता के रूप में कार्य करता है। रिजर्व बैंक का विदेश में अब कोई कार्यालय नहीं है।

1-13 fjtoZ cSd d eq[; foHkkx

(1) **ukV fuxZeu foHkkx** –

अधिनियम की धारा 23 में प्रावधान किया गया है कि इस विभाग का प्रधान कार्य कागजी नोटों का

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

प्रकाशन करना है। इस विभाग की शाखाएँ मुम्बई, कलकत्ता तथा चैन्नई आदि 14 स्थानों पर हैं। हर एक शाखा दो भागों में विभाजित है – प्रथम कोष विभाग तथा द्वितीय साधारण विभाग। प्रथम विभाग का कार्य नोट निकालने और उसका विनिमय करने का है। दूसरे विभाग का कार्य रजिस्ट्रेशन करने, नोटों को जाँचने तथा रद्द करने, हिसाब रखने तथा अंकेक्षण करने का है।

(2) **cfdx foHkkx** –यह विभाग अन्य बैंकों को अनुज्ञा–पत्र देने, उसके नकद कोष रखने, उनको आर्थिक सहायता तथा सलाह देने, उनका निरीक्षण करने, उनके रुपये एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने तथा सरकारी लेन–देनों का उचित प्रबन्ध करता है। इस विभाग की शाखाएँ मुम्बई, कलकत्ता, चैन्नई, दिल्ली, कानपुर आदि 14 स्थानों पर है। यह विभाग भी हिस्से हस्तान्तरण, जमाखाता, सिक्यूरिटियों, सरकारी खाता तथा सरकारी ऋण आदि पाँच विभागों में विभाजित है। इसका प्रबन्ध एक मैनेजर तथा अन्य सहायक अधिकारियों द्वारा होता है।

¼3½ **fofu;e fu;U=.k foHkkx** –इस विभाग की स्थापना विदेशी विनियम–दर नियंत्रण करने के उद्देश्य से द्वितीय महायुद्ध काल में की गई थी। विनिमय दर को स्थायी रखने के उद्देश्य से यह विभाग निश्चित दर पर विदेशी विनिमय का क्रय विक्रय करता है। विदेशी विनिमय अधिनियम (FERA), 1973 के अन्तर्गत अब समस्त विदेशी विनियम कार्य इस विभाग द्वारा नियुक्त किये हुए कुछ अधिकृत एजेन्टों द्वारा ही किया जाता है। एक्ट की धारा 40 के अन्तर्गत विदेशी विनिमय का क्रय–विक्रय करने का अधिकार रिजर्व बैंक को ही दिया गया है। अब फेरा अधिनियम में कुछ छूट दी गई है। भारतीय रुपये को चालू खाते में पूर्ण परिवर्तनशील घोषित कर दिया गया है।

¼4½ **Ñf"k lk[k&foHkkx** –इस विभाग का प्रधान कार्य कृषि–साख के सम्बन्ध में खोज करने तथा कृषि साख समस्याओं पर मन्त्रणा देने के लिए विशेषज्ञों को नियुक्त करना, आवश्यतानुसार केन्द्रीय सरकार, प्रादेशिक सरकारों, प्रदेशीय सहकारी संस्थाओं और बैंकिंग संस्थाओं को कृषि साख सम्बन्धी सुविधाएँ देना तथा रिजर्व बैंक की कृषि साख नीति का निर्धारण करना है।

¼5½ **cfdx fodkl foHkkx (Department of Banking Development)** –यह विभाग अक्टूबर 1950 में ग्रामों तथा छोटे शहरों में बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार करने तथा ग्रामीण अर्थ समस्याओं का अध्ययन करने तथा हल निकालने के लिए स्थापित किया गया था। इस विभाग का एक मुख्य कार्य ग्रामीण बैंकिंग अनुसंधान कमेटी की सिफारिशों को कार्यान्वित करना है।

¼6½ **cfdx fØ;kvk dk foHkkx (Department of Banking Operations)** –इस विभाग का मुख्य कार्य भारतीय बैंकिंग पद्धति का नियन्त्रण तथा निरीक्षण करना है। 1940 में बैंकिंग कम्पनी एक्ट के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को अन्य समस्त बैंकों के नियन्त्रण तथा निरीक्षण करने के बहुत महत्वपूर्ण अधिकार दिये गये हैं। इन अधिकरों को उचित ढंग से काम में लाने के लिए इस विभाग की परम आवश्यकता हुई। जुलाई सन् 1949 में रिजर्व बैंक ने इस विभाग को अन्य बैंकों का वार्षिक निरीक्षण करने, उनके विभिन्न प्रकार के विवरणों–पत्रों की जाँच करने, उनकी कार्य–पद्धति की विवेचना करने तथा उनके दोषों को दूर करने के लिए वार्षिक रिपोर्ट आवश्यक सुझावों सहित प्रकाशित करने के लिए स्थापना की है।

¼7½ **vUos"k.k rFkk lad foHkkx (Department of Research and Statistics)** –इस विभाग का मुख्य कार्य मुद्रा तथा बैंकिंग आदि क्षेत्रों में खोज करना तथा मुद्रा–बाजार, बैंकिंग ब्याज दरें, उत्पादन, लाभांश आदि से सम्बन्धित आँकड़ों को एकत्रित करके प्रकाशित करना हे। यही विभाग एक मासिक–पत्र तथा वार्षिक मुद्रा तथा अर्थ–सम्बन्धी रिपोर्ट आदि प्रकाशित करता है।

¼8½ **vk|kfxd lk[k foHkkx** –यह विभाग राज्य वित्त निगमों को परामर्श देने तथा लघु व मध्यम उद्योगों को साख उपलब्ध कराने का कार्य करता हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

¼9½ **O;; rFkk ctV fu;U=.k foHkkx** –यह विभाग बैंक के व्यय तथा बजट नियन्त्रण का कार्य करता है।

¼10½ **xj cfdx dEiuh foHkkx** –यह विभाग गैर–बैंकिंग कम्पनियों तथा वित्तीय संस्थाओं की देखरेख व जाँच करता है।

¼11½ **vkfFkd fo'y"k.k rFkk uhfr foHkkx** –इस विभाग का कार्य आर्थिक समस्याओं का अध्ययन एवं विश्लेषण कर नीति निर्धारित करना है।

1-14 fjto cd d dUnh; cfdx dk; (Central Banking Functions of Reserve Bank)-रिजर्व बैंक भारत का केन्द्रीय बैंक है। अतः यह बैंक उन सभी कार्यों को करता है जो किसी देश के केन्द्रीय बैंक से अपेक्षित है। रिजर्व बैंक का प्रमुख कार्य 'मौद्रिक स्थिरता की प्राप्ति के लिए नोट निर्गमन एवं नियन्त्रण करना तथा कोषों को रखना है और देश के हित में मुद्रा तथा साख का संचालन करना है।' रिजर्व बैंक के कार्यों को प्रमुख रूप से तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है –

(I) नियमन एवं नियंत्रण सम्बन्धी कार्य,

(II) साधारण बैंकिंग कार्य

(III) आर्थिक विकास सम्बन्धी कार्य।

इन कार्यों का विस्तृत विवेचन निम्न प्रकार है :–

¼I½ **fu;eu rFkk fu;U=.k lEcU/kh dk; %**

(Regulatory and Controlling Functions)

इन कार्यों का संक्षिप्त विवेचन निम्न प्रकार है :–

1- **i= enk dk fuxeu (Issue of Paper Currency)** –(धारा 22, 23, 24, 25, 26, 26ए, 27, 28, 28ए, 33)

पत्र मुद्रा निर्गमन का इस बैंक को एकाधिकार प्राप्त है। भारतीय बैंक अधिनियम की धारा 24 के अनुसार बैंक को 2, 5, 10, 20, 50, 100, 500, 1000, 5000, 10000 रूपये के नोट छापने का अधिकार प्राप्त है। एक रूपये के नोट का निर्गमन भारत सरकार द्वारा किया जाता है। 1978 से पूर्व रिजर्व बैंक 5000 व 10000 रूपये के नोटों का भी निर्गमन करता था, किन्तु अब इन्हें बन्द कर दिया गया है। नोट निर्गमन के लिए रिजर्व बैंक में एक पृथक नोट निर्गमन विभाग है।

पत्र मुद्रा में जनता का विश्वास बनाये रखने के लिए नोट निर्गमन विभाग को नोट निर्गमन के बदले कुछ कोष रखना होता है। इस कोष को "पत्र मुद्रा कोष" कहते है। यह कोष स्वर्ण सिक्कों, स्वर्ण धातु, विदेशी प्रतिभूतियों, रूपया तथा प्रतिभूतियों के रूप में रखा जा सकता है। 25 अक्टूबर 1957 के संशोधनानुसार पत्र मुद्रा निधि में कम से कम 115 करोड़ रूपये का सोना तथा 85 करोड़ रूपये की विदेशी प्रतिभूतियाँ रखना आवश्यक है। अतः भारत की वर्तमान नोट निर्गमन प्रणाली न्यूनतम कोष प्रणाली पर आधारित है।

2- **ljdkj dk cdj (Banker to the Government)** –(धारा 20, 21, 21ए, 21बी)

अन्य देशों में स्थित केन्द्रीय बैंक के समान रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों के बैंकर के रूप में भी कार्य करता है। सरकार के बैंकर के रूप में रिजर्व बैंक निम्न सेवाएँ प्रदान करता है :

¼v½ **ljdkjh ikfIr;k (Govt. Receipts)** – यह बैंक केन्द्रीय सरकार, विभिन्न राज्य

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

सरकारों तथा सरकारी संस्थाओं से रूपया जमा करता है। बैंक सरकारी जमा राशियों पर किसी प्रकार का ब्याज नहीं देता है।

¼c½ ljdkjh Hkqxrku (Government Payments) –बैंक जिस सीमा तक रूपया जमा करता है उस सीमा तक सरकार के आदेश से भुगतान भी करता है।

¼l½ lkoZtfud _.k dh O;oLFkk (Arrangement of Public Debts) –बैंक सरकार के लिए सार्वजनिक ऋण की व्यवस्था भी करता है। इसके अन्तर्गत बैंक ऋणों की राशि को एकत्र करना, उन पर देय ब्याज एवं मूलधन का भुगतान करना तथा ऋणों का हिसाब किताब रखना आदि कार्य करता है।

¼n½ ljdkj dks _.k (Loan to Government) –रिजर्व बैंक पर्याप्त जमानत लेकर सरकार को ऋण देता है।

¼;½ fons'kh fofu;e dk izcU/k (Arrangement of Foreign Exchange) –बैंक सरकार के लिए विदेशी विनिमय का प्रबन्ध करता है।

¼j½ vU; (Other) आवश्यकता पड़ने पर रिजर्व बैंक सरकार की ओर से टेण्डर तथा ट्रेजरी बिल्स बेचने आदि की व्यवस्था भी करता है।

3- cSadks ds cSad ds :i esa dk;Z djuk (Banker's Bank)

रिजर्व बैंक भारत में स्थित सभी बैंकों के बैंक के रूप में कार्य करता है। अपनी इस भूमिका का निर्वाह हेतु बैंक निम्न दो कार्य करता है :

(i) cSafdax laLFkkvksa ij fu;U=.k (Control Over Banking Institutions)

रिजर्व बैंक देश में स्थित समस्त बैंकों के लिए पथ प्रदर्शन एवं उन पर नियन्त्रण का कार्य करता है। किसी नये बैंक की स्थापना अथवा बैंक की किसी नई शाखा खोलने के लिए रिजर्व बैंक की पूर्व अनुमति अनिवार्य है। इससे बैंकों को अनुचित विस्तार एवं प्रतिस्पर्द्धा पर नियन्त्रण रहता है। वर्तमान व्यवस्था के अनुरूप प्रत्येक अनुसूचित बैंक को अपने वर्तमान निक्षेपों का नियमानुसार एक निश्चित भाग रिजर्व बैंक के पास अनिवार्य रूप से नकद कोष में रखना पड़ता है। विकट परिस्थितियों में बैंक आदि के फेल अथवा भुगतान करने में असमर्थ रहने पर इस राशि से जमाकत्ताओं को भुगतान कर बैंक उनके हितों की रक्षा करता है।

(ii) cSadks dh lqfo/kk,¡ (Facilities to Bank) –रिजर्व बैंक स्वयं के नियन्त्रण में कार्य करने वाले बैंकों को निम्नलिखित सुविधाएँ प्रदान करता है :

¼1½ izR;{k _.k (Direct Fund) –रिजर्व बैंक अनुसूचित बैंकों को मान्य प्रतिभूतियों की जमानत पर 90 दिनों के लिए ऋण देता है।

¼2½ /ku gLrkUrj.k (Transfer of Funds) –रिजर्व बैंक अनुसूचित बैंकों को रियायती दरों पर धन हस्तान्तरण की सुविधा भी प्रदान करता है।

¼3½ fcyksa dh dVkSrh (Discounting of Bills) –रिजर्व बैंक निम्न बिलों को पुनः भुनाने की सुविधा प्रदान करता है :

1. जो व्यापारिक कार्यों के लिए लिखे गये हों,
2. जिनकी अवधि 90 दिन से अधिक न हो, तथा

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

3. जन पर कम से कम दो प्रतिष्ठित व्यक्तियों के हस्ताक्षर हो

¼4½ **vfUre _.knkrk (Lender of the Last Resort)** –रिजर्व बैंक देश में स्थित अनुसूचित बैंकों के लिए अन्तिम ऋणदाता के रूप में भी कार्य करता है।

4- lk[k dk fu;U=.k (Regulation of Credit) –विश्व के समस्त देशों में स्थित केन्द्रीय बैंकों का एक महत्वपूर्ण कार्य साख का नियन्त्रण है। भारत के केन्द्रीय बैंक, रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया को भी इस सम्बन्ध में व्यापक एवं शक्तिशाली अधिकार प्राप्त है। अतः रिजर्व बैंक देश की मुद्रा एवं साख के नियमन एवं नियन्त्रण के लिए विभिन्न प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष अस्त्रों का प्रयोग करता है।

5- fon'kh fofue; ij fu;U=.k (Control over Foreign Currency) –रिजर्व बैंक रूपये के बाह्य मूल्य को स्थिर बनाये रखने तथा केन्द्र एवं राज्य सरकारों को विदेशी विनिमय की आवश्यता को पूरा करने के लिए, विदेशी विनिमय का क्रय–विक्रय भी करता है।

6- vU; dk;Z (Other Funcitons) –उपर्युक्त वर्णित कार्यों के अतिरिक्त रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया निम्नलिखित साधारण बैंकिंग कार्य भी करती है

¼1½ **Ñf"k foÙk 0;oLFkk (Agriculture Finance)** –अपने प्रारम्भ से ही रिजर्व बैंक कृषि कार्यों के लिए वित्तीय सुविधायें देने का कार्यों के लिए वित्तीय सुविधायें देने का कार्य कर रहा है।

¼2½ **vkS|ksfxd foÙk 0;oLFkk (Industrial Finance)** –रिजर्व बैंक औद्योगिक साख प्रदान करने वाली विभिन्न संस्थाओं की स्थापना में सक्रिय सहयोग एवं पर्याप्त कोष प्रदान करता है।

¼3½ **cSafdx f'k{kk (Banking Education)** –बैंक के विभिन्न अधिकारियों को प्रशिक्षण प्रदान करने एवं बैंकिंग की शिक्षा के विकास हेतु रिजर्व बैंक ने एक बैंकिंग ट्रेनिंग कॉलेज की स्थापना की ही है।

¼4½ **lek'kks/ku xg dk;Z (Clearing House Function)** – देश का केन्द्रीय बैंक होने के कारण, रिजर्व बैंक अन्य बैंकों के आपसी लेन–देन के शीघ्र निपटारे हेतु समाशोधन कार्य भी करता है।

¼5½ **eqnk LFkkukUrj.k (Transfer of Money)** –रिजर्व बैंक अन्य बैंकों के लिए निःशुल्क अथवा नाम मात्र शुल्क लेकर मुद्रा को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने का कार्य भी करता है।

¼6½ **eqnk ifjorZu (Conversion of Money)** –रिजर्व बैंक बड़े नोटों के बदले छोटे नोट तथा नोटों के बदले में धात्विक मुद्रा देने का कार्य भी करता है।

¼7½ **vkadMksa dk ,d=.k ,oa izdk'ku (Collection and Publication of Data)** – रिजर्व बैंक मुद्रा, साख, कृषि उत्पादन, लाभांश, ब्याज की दरें एवं मुद्रा बाजार से सम्बन्धित आर्थिक सूचनाएँ और आँकड़े एकत्र कर उन्हें प्रकाशित करने का कार्य भी करता है। इन विषयों पर अनुसंधान आँकड़ों के संग्रहण एवं प्रकाशन के लिए बैंक में एक पृथक शोध एवं सांख्यिकी विभाग है।

(II) lkekU; cSafdx dk;Z (General Banking Funchtion)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

उपर्युक्त वर्णित केन्द्रीय बैंकिंग कार्यों के अतिरिक्त रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया निम्नलिखित साधारण बैंकिंग कार्य भी सम्पन्न करता है।

¼1½ **tek Lohdkj djuk (Accepting Deposits)** –रिजर्व बैंक केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, पोर्ट ट्रस्ट एवं अन्य बैंकों तथा व्यक्तियों का निक्षेप स्वीकार करता है। इन निक्षेपों पर बैंक किसी प्रकार का ब्याज नहीं देता है।

¼2½ **0;kikfjd rFkk okf.kfT;d fcyksa dk Ø;&foØ;**

(Transactions of Trade and Commercial Bills) –रिजर्व बैंक भारत में भुगतान किये जाने वाले व्यापारिक एवं वाणिज्यिक बिलों को खरीदने, बेचने एवं उनकी पुर्नकटौती भी करता है किन्तु यह कार्य केवल ऐसे बिलों के संदर्भ में ही करता है जो 90 दिन से अधिक न हो।

¼3½ **Ñf"k fcyksa dk Ø;&foØ; (Sale and Purchase of Agriculture Bills)** –रिजर्व बैंक भारत में भुगतान होने वाले कृषि बिलों के क्रय–विक्रय का कार्य भी करता है। बैंक ऐसे बिलों पर समय सम्बन्धी छूट भी देता है ये बिल 15 महीने की अवधि से अधिक नहीं होने चाहिए।

¼4½ **_.k nsuk (Granting Loans)** –रिजर्व बैंक केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों को ऋण देने का कार्य भी करता है। इन ऋणों की अधिकतम अवधि 90 दिन है।

¼5½ **fons'kh izfrHkwfr;ksa dk Ø;&foØ; (Transactions of Foreign Securities)** –रिजर्व बैंक भारत के बाहर अन्य देशों की प्रतिभूतियों का क्रय विक्रय कर सकता है। इनका भुगतान खरीदने की तारीख से 10 वर्षों के अन्दर हो जाना चाहिए।

¼6½ **eY;oku /kkrqvksa dk Ø;&foØ; (Transactions of Precious Metals)** –रिजर्व बैंक सोना, चाँदी व सोने के सिक्कों के क्रय–विक्रय का कार्य भी करता है।

¼7½ **vU; ns'kksa ds cSadksa ls 0;ogkj (Transactions with Other Countries Banks)** –अपने कार्यों के निर्बाध संचालन हेतु रिजर्व बैंक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के सदस्यों राष्ट्रों के केन्द्रीय बैंकों के साथ खाता खोल सकता है। उनके साथ एजेन्सी सम्बन्ध रख सकता है तथा उनके एजेन्ट के रूप में भी कार्य कर सकता है। रिजर्व बैंक अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से भी लेन–देन कर सकता था।

(III) vkfFkZd fodkl lEcU/kh dk;Z

(Functions Related to Economic Development)-रिजर्व बैंक के आर्थिक विकास सम्बन्धी कार्यों का अध्ययन निम्न दो शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है। इनका संक्षिप्त विवेचन निम्न प्रकार है : –

¼v½ **vkfFkZd fodkl dks c<kok (To Encourage Economic Development)** –देश का केन्द्रीय बैंक होने के कारण देश में आर्थिक विकास का उचित वातावरण निर्मित करने तथा विकास की गति को तीव्र करने का दायित्व रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया का ही है। इस दायित्व के निर्वाह हेतु बैंक निम्न कार्यों में सक्रिय भूमिका निभा रहा है।

¼1½ **cSfdax lqfo/kkvksa dk foLrkj (Expansion of Banking Facilities)** –रिजर्व बैंक अपनी स्थापना से ही देश में आवश्यक बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार करने हेतु प्रयत्नशील है। इस प्रयत्न के फलस्वरूप अर्थव्यवस्था में वित्तीय साधनों के अभाव तथा ब्याज की ऊँची दर की समस्या काफी हद तक दूर हुई। विस्तार कार्यक्रम को पर्याप्त महत्व देकर रिजर्व बैंक में एक पृथक बैंकिंग विकास विभाग खोला गया। यह विभाग बैंक के बम्बई स्थित प्रध

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

ाान कार्यालय में एक उप–गवर्नर को देख रेख में कार्य कर रहा है।

भारतीय मुद्रा बाजार एवं पूंजी बाजार अत्यन्त ही असंगठित एवं अनेक समस्याओं से परिपूर्ण हैं। बैंक इस दिशा में अत्यन्त ही सजग है तथा इन बाजारों को सुदृढ़ बनाने हेतु बैंकिंग कानून के अन्तर्गत इसके द्वारा अनेक प्रयास किये गये है।

¼2½ **fjtoZ cSad ,oa Ñf"k lk[k (Reserve Bank and Agricultureal Credit)** –रिजर्व बैंक की स्थापना के साथ ही एक कृषि साख विभाग की स्थापना की गयी। इस विभाग ने समय–समय पर अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये है।

¼3½ **fjtoZ cSad ,oa y?kq m|ksx (Reserve Bank and Small Scale Industries)** – भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु उद्योग का महत्व को मध्यनजर रखते हुए बैंक ने इन उद्योगों को ऋण देने वाली संस्थाओं को सम्भावित हानि के विरूद्ध गारंटी देने की योजना 1 जुलाई 1960 से प्रारम्भ की। इस व्यवस्था के अन्तर्गत बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं द्वारा दिये गये ऋणों की गारंटी व्यवस्था भारत सरकार करती है। वास्तव में इस प्रकार की गारंटी व्यवस्था रिजर्व बैंक के प्रबन्ध में ही एक गारन्टी संगठन के अन्तर्गत की गयी है। अब प्रत्येक ऋण के लिए रिजर्व बैंक को गारंटी लिखकर नहीं देनी पड़ती वरन् ऋण देने वाली प्रत्येक संस्था गारंटी संगठन से समझौता कर लेती है और ऋण की गारंटी स्वतः ही हो जाती है।

¼4½ **fjtoZ cSad vkSj vkS|ksfxd foÙk (Reserve Bank & Industrial Finance)** –देश में तीव्र औद्योगीकरण की सम्भावनाओं एवं उसके लिए पर्याप्त वित्तीय साधन उपलब्ध करने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक ने सन् 1957 में अपने यहां एक अलग से औद्योगिक वित्त विभाग की स्थापना की। यह विभाग औद्योगिक वित्त में दीर्घकालीन सहायता देने वाली संस्थाओं को वित्तीय साधनों की उपलब्धि करता है।

¼c½ **vkfFkZd fLFkjrk dk;e j[kuk (To Maintain Economic Stability)** – रिजर्व बैंक आर्थिक विकास के बढ़ाने के साथ–साथ अर्थव्यवस्था की उतार–चढ़ाव से रक्षा करने हेतु आर्थिक स्थिरता कायम रखने का भी कार्य करता है। इसके लिए बैंक निम्नांकित प्रयास करता है :

(1) पंचवर्षीय योजना की आवश्यकताओं के अनुरूप मौद्रिक नीति को अपनाना।

(2) अधिक विकासात्मक व्यय कर अर्थव्यवस्था पर मुद्रा प्रसार सम्बन्धी दबावों को कम करना।

(3) आर्थिक विकास के लिए आवश्यक वित्त प्रदान करने के साथ ही उपर्युक्त मूल्य नीति अपनाने का प्रयास करना, तथा

(4) साख का नियमन, नियन्त्रण एवं उसके प्रयोग पर कड़ी निगरानी रखना।

1-15 fjtoZ cSad dk fo'ks"kkf/kdkj (Special Rights of RBI) -

रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 18 द्वारा विशेष परिस्थितियों में रिजर्व बैंक को साख–नियमन एवं नियंत्रण का विशेषाधिकार दिया गया है, जो अग्र प्रकार है –

(अ) धारा 17 के अन्तर्गत नहीं आने वाले किसी भी विनिमय बिल या प्रतिज्ञा–पत्र का क्रय–विक्रय अथवा पुर्नःकटौती करना,

(ब) एक निर्धारित राशि से अधिक के विदेशी विनिमय का क्रय–विक्रय करना, तथा

(स) किसी राज्य सहकारी बैंक अथवा उसकी सिफारिश पर किसी सहकारी समिति को 90 दिन तक की अवधि का ऋण देना आदि हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1-16 fjtoZ cSad dk oftZr@izfrcfU/kr dk;Z (Prohibited Functions of R.B.I.) –रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 19 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक द्वारा निम्नांकित कार्य करना वर्जित है –

(1) किसी भी प्रकार का व्यापार या व्यवसाय करना,

(2) किसी बैंकिंग कम्पनी अथवा अन्य किसी कम्पनी के अंश खरीदना अथवा अंशों की धरोहर पर ऋण देना,

(3) किसी स्थायी सम्पत्ति को बन्धक रख कर अथवा उसके अधिकार पत्रों की जमानत पर ऋण देना,

(4) चालू अथवा अन्य खातों में जमा पर ब्याज देना,

(5) सामान्य व्यक्तियों को ऋण या अग्रिम देना

(6) दर्शनी बिलों के अतिरिक्त अन्य कोई बिल लिखना या स्वीकार करना।

fVIi.kh % यहाँ उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त व्यवस्थाएँ रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 17, 18, 42 तथा 45 में ही गई व्यवस्थाओं में बाधक नहीं होगी।

1-17 fjtoZ cSad vf/kfu;e ds izeq[k izko/kku (Main Provisions) %

1.17.1 fjtoZ cSad }kjk fons'kh fofue; dh [kjhn fcØh dh O;oLFkk ds çko/kku

(Provision for Purchase and Sale of foreign Exchange by R.B.I.) –रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 40 के अन्तर्गत प्रदत्त अधिकारों के अनुसार रिजर्व बैंक द्वारा मुम्बई, दिल्ली, चेन्नई, कोलकात्ता तथा केन्द्र सरकार के द्वारा निर्धारित केन्द्रों पर समय–समय पर निर्धारित शर्तों एवं दरों पर विदेशी विनिमय का क्रय–विक्रय किया जा सकता है। इन लेन–देनों में रिजर्व बैंक को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (I.M.F.) के नियमों एवं विदेशी मुद्रा के क्रय–विक्रय का कोई भी सौदा तत्कालीन निर्धारित सीमा से कम की राशि का नहीं हो सकता।

1.17.2 fjtoZ cSad vf/kfu;e esa Hkkjrh; cSfdax iz.kkyh fu;eu ,oa fu;a=.k ds çko/kku (Provision in R.B.I. Act for Regulation and Control of Indian Banking System)

–यद्यपि भारतीय बैंकिंग प्रणाली के नियमन के लिये एक अलग बैंकिंग कम्पनी (नियमन) अधिनियम, 1949 बनाया गया है फिर भी रिजर्व बैंक देश का शीर्षस्थ बैंक होने के नाते बैंकों के बैंकर के रूप में कार्य करता है और उनके लिये अन्तिम ऋणदाता (Lender of Last Resort) भी है। देश में मौद्रिक और साख व्यवस्था का नियंत्रण करना भी रिजर्व बैंक का प्रमुख दायित्व है अतः इस परिप्रेक्ष्य में भारतीय बैंकिंग कम्पनीज (नियमन) अधिनियम, 1949 तथा रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 में रिजर्व बैंक को भारतीय बैंकिंग प्रणाली के प्रभावी नियमन एवं नियंत्रण के लिये कई अधिकार दिये गये हैं, जिनका प्रावधान रिजर्व बैंक अधिनियम की कई धाराओं में किया गया है। उनमें धारा 17, 18, 42,45(1), 45(बी), 45(सी), 45(डी), 45(ई) तथा पेनाल्टी सम्बन्धी प्रावधान धारा 58(बी) में दिये गये हैं। इनमें कुछ का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है –

¼1½ okf.kfT;d foi=ksa ,oa izfrKki=ksa dk Ø; vFkok iqudVkSrh

(Purchase or Rediscounting of Commercial Bills or Promissory Notes) –रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 17(2)(a) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक भारत में लिखे गये एवं भारत में देय व्यापारिक विपत्रों तथा प्रतिज्ञापत्रों का क्रय कर सकता है अथवा उनकी पुर्नकटौती कर सकता है किन्तु निर्यात बिलों की परिपक्वता अवधि 180 दिन और अन्य बिलों की अवधि 90 दिन से अधिक नहीं होनी चाहिए। उन पर दो अच्छे हस्ताक्षरों की शर्त भी पूरी हो।

¼2½ Ñf"k dk;ksZa ds foÙk iks"k.k gsrq fy[ks x;s foi=ksa rFkk izfrKki=ksa dk Ø; vFkok iqudVkSrh (Purchase or Rediscounting of Agricultural Finance Bills and Promissory Notes) –

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

अधिनियम की धारा 17(2)(b) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक कृषि कार्यों, फसल विपणन आदि के वित्त पोषण के लिये भारत में लिखे एवं भारत में देय अधिक से अधिक 15 माह में परिपक्व होने वाले कृषि बिलों या प्रतिज्ञापत्रों को खरीद सकता है अथवा उनकी पुर्नकटौती कर सकता है। इन पर दो अच्छे हस्ताक्षरों की शर्त भी पूरी होनी चाहिए।

¼3½ **y?kq m|kxk d foÙk ik"k.k gr fy[k x;s foi=k dh [kjhn ;k iu[kjhn ;k iudVkrh (Purchase or Rediscounting of Bills for Small Industries Finance)** – अधिनियम की धारा 12(2)(bb) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक भारत में लिखें एवं भारत में देय अधिक से अधिक 12 माह में परिपक्व होने वाले ऐसे बिलों की खरीद या पुर्नकटौती कर सकता है बशर्ते उन पर दो सम्मानित हस्ताक्षर हों जिनमें एक किसी अनुसूचित बैंक, राज्य सहकारी बैंक या वित्तीय संस्था का हो।

¼4½ **jktdh; ifrHkfr;k dk ikIr dju vFkok mue 0;olk; djr gr fy[k x; foi= (Purchase or Rediscounting of Bills to acquire Govt. Securities or to do business in them)** –अधिनियम की धारा 17(2)(c) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को ऐसे बिलों की खरीद पुर्नकटौती का अधिकार दिया गया है जो भारत में देय, 90 दिन तक की परिपक्वता से अधिक नहीं और दो सम्मानित हस्ताक्षरों से युक्त हों जिनमें कम से कम एक हस्ताक्षर अनुसूचित बैंक का हो।

¼5½ **fon'kh fofue; fcyk dh iudVkrh (Rediscounting of foreign Bills of Exchange)** – अधिनियम की धारा 17(3)(B) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष ;प्डथ्द्ध के किसी सदस्य राष्ट्र में लिखे ऐसे विपत्रों की पुर्नकटौती कर सकता है जो भारत के निर्यात व्यवहार के लिये लिखे होने पर अधिक से अधिक 180 दिन में परिपक्व हों और अन्य कार्यों के लिये अधिक से अधिक 90 दिन में परिपक्व हो।

¼6½ **ifrKk i=k dh ifrHkfr ij _.k ;k vfxe (Loan or Advances against Securities)** –

अधिनिमय की धारा 17(3)(A) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक आवश्यक शर्तों के पूरी होने पर अनुसूचित बैंकों तथा राज्य सरकारी बैंकों को प्रतिज्ञा पत्रों पर ऋण अथवा अग्रिम स्वीकार कर सकता है। जो अधिक से अधिक 180 दिन में परिवक्व हो।

¼7½ **vU; lEifÙk;k dh ifrHkfr ij _.k ;k vfxe (Loans and Advances against other property)** –अधिनियम की धारा 17(3)(C) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक निर्धारित सम्पत्तियों की प्रतिभूति पर अधिक से अधिक 90 दिन का ऋण या अग्रिम दे सकता है बशर्तें कि तत्सम्बन्धी शर्तें पूरी हो गई हो।

¼8½ **vkikrdkyhu _.k (Emergency Loans)** –अधिनियम की धारा 18 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक अनुसूचित बैंकों को आपातकालीन ऋण भी दे सकता है।

¼9½ **vuqlfpr cdk }kjk udn dk"kkuikr (CRR)** –अधिनियम की धारा 42 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को अनुसूचित बैंकों के द्वारा अपनी कुल देयताओं का 6 प्रतिशत जो रिजर्व बैंक के पास रखने की वैधानिक अनिवार्यता है और उसके पालन न करने पर अर्थदण्ड व अन्य दण्ड की व्यवस्था है।

¼10½ **vuqlfpr cdk }kjk ifooj.k iLrr dju dh vfuok;rk** आदि भी अधिनियम की धारा 42(2) तथा 42 (6) में रिजर्व बैंक के अधिकारों को व्यक्त करती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

¼11½ **_.k ,oa vfxze lEcU/kh lwpuk,¡** प्राप्त करने एवं उसे प्रसारित करने के लिये धारा 45(डी) व 45(सी) में विशेष प्रावधान हैं।

¼12½ **n.M dh O;oLFkk** – अधिनियम की धारा 58(बी) में दण्ड की व्यवस्था का प्रावधान किया गया है।

¼13½ **cSad lEcU/kh vkadMk rFkk rF;ksa dk izdk'ku** करने का दायित्व भी रिजर्व बैंक पर डाला गया है।

¼14½ **fjtoZ cSad cSadksa dk cSad] lykgdkj ,oa ekxZn'kZd gS**। इस दृष्टि से अधिनियम में कई प्रावधान हैं जिनसे बैंकों के विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

1.17.3 cSadksa }kjk fjtoZ cSad esa j[ks tkus okys udn dks"kkuqikr lEcU/kh çko/kku (Provision Relating to Cash Reserve Ratho of Banks in R.B.I.) –

¼1½ **fjtoZ cSad vkWQ bf.M;k ,DV 1934 dh /kkjk 42(1), 42(1A), 42 (1C), 42(2), 42(3), 42 (3A)** आदि के प्रावधानों के अन्तर्गत बैंकों को अपनी मांग जमाओं (Demand Deposits) तथा सावधि जमाओं (Time Deposits) की देयताओं का एक निश्चित प्रतिशत रिजर्व बैंक के पास जमा करवाना अनिवार्य है और रिजर्व बैंक को इस प्रतिशत दर में समय–समय पर परिवर्तन का अधिकार है। प्रारम्भ में प्रत्येक अनुसूचित बैंक को अपनी माँग जमाओं का 5 प्रतिशत तथा सावधि जमाओं का 2 प्रतिशत रिजर्व बैंक के पास नकद कोषानुपात रखना पड़ता था। 1956 के संशोधन से रिजर्व बैंक को माँग जमाओं के नकद कोषानुपात को 5 प्रतिशत से 20 प्रतिशत तक बढ़ाने तथा सावधि जमाओं के नकद कोषानुपात को 2 प्रतिशत से बढ़ाकर 8 प्रतिशत तक कर सकने का अधिकार मिल गया। पुनः 1962 के संशोधन के अधिनियम में रिजर्व बैंक को कुल जमाओं का 3 प्रतिशत नकद कोषानुपात रखने का अधिकार दिया गया तथा रिजर्व बैंक इसे बढ़ाकर 15 प्रतिशत तक कर सकता था। कालान्तर में रिजर्व बैंक अधिनियम के कई संशोधनों से नकद कोषानुपात प्रतिशत में समय–समय पर परिवर्तन किया गया है।

वर्तमान में कोषानुपात की दर 25 जनवरी 2011 से बैंक की कुल देयताओं का 6 प्रतिशत है।

¼2½ **vfrfjDr udn dks"kkuqikr (Additional C.R.R.)** – अधिनियम की धारा 42(1A) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को अतिरिक्त नकद कोषानुपात का अधिकार मिल गया था किन्तु 1996 में यह समाप्त कर दिया गया है।

¼3½ **C;kt pqdkus dh O;oLFkk** –अधिनियम की धारा 42(1–बी) के अन्तर्गत बढ़ाये गये नकद कोषानुपातों पर निर्धारित दर पर ब्याज देने की व्यवस्था थी, किन्तु 1 अप्रेल 2007 से इस व्यवस्था को बन्द कर दिया गया है।

¼4½ **C;kt dh n.Muh; nj ls olwyh** –अधिनियम की धारा 42(3) के अन्तर्गत यदि किसी बैंक का न्यूनतम नकद कोष वैधानिक सीमा से कम हो जाये तो दण्डनीय दर से ब्याज वसूली का रिजर्व बैंक को अधिकार है।

¼5½ **nks"kh vf/kdkfj;ksa ij vFkZn.M** –रिजर्व बैंक अधिनियम में धारा 42(3A)) के अन्तर्गत जो अधिकारी बैंक के नकद कोषों की अल्पता के दोषी है उनमें से प्रत्येक पर 500रू. प्रति सप्ताह की दर से अर्थदण्ड भी लिया जा सकता है, जब तक कि नकद कोषों की अल्पता का दोष रहता है।

¼6½ **nks"kh lapkydksa dks vFkZn.M o cSad dks u;s fu{ksi Lohdkj djus ij jksd dh**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

0;oLFkk – यदि दीर्घ अवधि तक नकद कोषानुपात की अल्पता रहती है तो अधिनियम की धारा 42(3A)B के अन्तर्गत रिजर्व बैंक ऐसे बैंकों को नवीन निक्षेप स्वीकार करने पर रोक लगा सकता है और जो बैंक इस आदेश का उल्लंघन करते हैं उनके संचालकों पर प्रतिदिन 500रू. का अर्थदण्ड दोष चालू रहने तक लगाया जा सकता है।

1.17.4 fjto! cSd dk fu/kkfjr i=i= ea lwpuk çf"kr djuk

(Submission of Statements & Returns by Banks to R.B.I.) –रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 42(2) के प्रावधान के अन्तर्गत प्रत्येक अनुसूचित बैंक को हर शुक्रवार के अन्त में रिजर्व बैंक द्वारा निधारित प्रपत्र में बैंक के दायित्वों – जमाओं, ऋणों, नकद कोषों आदि के बारे में विवरणी बैंक के दो अधिकारियों द्वारा हस्ताक्षर करवा कर आगामी पांच दिनों में रिजर्व बैंक को प्रेषित करने की अनिवार्यता है।

42(2)(i) के प्रावधान के अन्तर्गत यदि भौगोलिक कारणों से किसी अनुसूचित बैंक के लिये ऐसी साप्ताहिक विवरणी भेजना संभव न हो तो रिजर्व बैंक रियायत के तौर पर अस्थायी साप्ताहिक प्रविवरण तथा 20 दिन के भीतर पक्का प्रविवरण अथवा माह समाप्ति के 20 दिन के भीतर मासिक प्रविवरण भेजने की इजाजत दे सकता है।

vFkn.M 0;oLFkk – यदि कोई बैंक रिजर्व बैंक द्वारा वांछित साप्ताहिक प्रविवरण (Weekly Statements) नहीं भेजता तो उसे त्रुटि जारी रहने तक निर्धारित दर से अर्थदण्ड देना पड़ता है।

1.17.5 vuqlfpr cSd cuus dh 'kr! **(Conditions for Becoming Scheduled Bank)** – रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 42(6)(a) में उन शर्तों का प्रावधान है जिनके पूरा करने पर ही रिजर्व बैंक ऐसे बैंकों के नाम अपनी द्वितीय अनुसूची (Second Schedule) में शामिल करता है। ऐसे बैंकों को ही अनुसूचित बैंक (Scheduled Bank) कहा जाता है जिनका नाम रिजर्व बैंक की द्वितीय अनुसूची में अंकित है। अनुसूचित बैंक बनने के लिये निम्नांकित तीन शर्तों की पूर्ति करना जरूरी है।

(i) उस बैंक की प्रदत्त पूंजी तथा संचित कोषों (Paid-up Capital and reserves) का योग 5 लाख रू. से कम नहीं होना चाहिये।

(ii) रिजर्व बैंक को यह विश्वास हो जाये कि ऐसा बैंक जमाकत्ताओं के हितों के विरूद्ध कार्य नहीं कर रहा है।

(iii) वह बैंक भारत या अन्य किसी देश में बैंक के रूप में पंजीकृत है, इसमें राज्य सहकारी बैंक भी शामिल हैं।

जो बैंक इन तीनों शर्तों की पूर्ति नहीं कर पाते है उन्हें अनुसूचित बैंक की श्रेणी में नहीं लिया जा सकता। यदि किसी बैंक का नाम अनुसूचित बैंक की श्रेणी में दर्ज कर लिया जाय और कालान्तर में इन तीन शर्तों में से किसी भी शर्त की अवहेलना हो जाये तो ऐसे बैंक का नाम अनुसूचित बैंक की अनुसूची में से हटाया जा सकने का रिजर्व बैंक अधिनियम में प्रावधान है।

1.17.6 cSdk d! rF;k dk idk'ku **(Purblication of Facts of the Banks)** – रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 43 के प्रावधान के अन्तर्गत रिजर्व बैंक द्वारा देश के सभी अनुसूचित बैंकों की जमाओं, दायित्वों आदि से सम्बन्धित सामूहिक आंकड़ों को प्रति पाक्षिक प्रकाशित करना अनिवार्य है। यही कारण है कि रिजर्व बैंक ये आँकड़े सभी अनुसूचित बैंकों से प्रति सप्ताह (प्रत्येक शुक्रवार तक के आंकड़े) प्राप्त कर उन्हें सामूहिक रूप से प्रकाशित करता है।

1.17.7 fjto! cSd d! ,tUV d! :i e! LVV cSd dh fu;fDr

(State Bank of India as Agent of R.B.I.) – रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 45(1) के अन्तर्गत यह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

व्यवस्था की गई है कि जहाँ रिजर्व बैंक की कोई शाखा या कार्यालय नहीं है वहां अब स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया (SBI) अथवा उसकी सम्बन्ध समूह बैंक शाखा को रिजर्व बैंक अपना एजेन्ट (प्रतिनिधि) नियुक्त कर सकता है। प्रारम्भ में 1956 से पूर्व जब स्टेट बैंक नहीं था तब इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया रिजर्व बैंक के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता था।

1.17.8 lk[k lpuk lok (Credit Information Service) –रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 45(A) से धारा 45(G) तक में यह प्रावधान है कि रिजर्व बैंक एक ही व्यक्ति या संस्था द्वारा कई बैंकों से ऋण लेने की प्रवृत्ति पर रोक तथा साख के केन्द्रीयकरण पर नियंत्रण के उद्देश्य से किसी भी बैंक से विभिन्न व्यक्तियों एवं संस्थाओं को दिये गये अग्रिमों एवं ऋणों की सूचना मांग सकता है और इस प्रकार संग्रहित सूचना अन्य बैंकों को दे सकता है ताकि वे बैंक उसका उपयोग उधार देते समय कर सके।

1.17.9 xj&cfdx dEifu;k }kjk tek,¡ ikIr dju dk fu;eu

(Regulationof Receipts of Deposits by Non-Banking Companies) –रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 45(H) से 45(S) तक के प्रावधानों के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को गैर–बैंकिंग कम्पनियों द्वारा जमाएँ प्राप्त करने तथा उनका उधार देने अथवा उपयोग करने की क्रियाओं का नियमन करने के कई अधिकार प्राप्त हैं। इन प्रावधानों के अन्तर्गत रिजर्व बैंक किसी भी गैर–बैंकिंग कम्पनी द्वारा:

(1) जमाएँ प्राप्त करने हेतु विज्ञापन अथवा प्रोस्पेक्टस (Prospectus) निकालने पर रोक लगा सकता है,

(2) जमाएँ प्राप्त करने पर कुछ शर्तें लगा सकता है,

(3) प्राप्त जमाओं सम्बन्धी सूचना मांग सकता है,

(4) जमाएँ प्राप्त करने सम्बन्धी दिशा–निर्देश जारी कर सकता है।

इन धाराओं का उद्देश्य बैंकों तथा गैर बैंकिंग कम्पनियों के बीच जमा प्राप्त करने की प्रतिस्पर्द्धा पर रोक लगाना तथा जमाकर्त्ताओं के धन के दुरूपयोग को रोकना है। 20 मार्च, 1997 को संशोधित रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 45(S) के द्वारा अनिगमित निकायों (Unicorported Bodies) को जमाएँ स्वीकार करने से प्रतिबन्धित कर दिया गया है।

1.17.10 fjtoZ cSd }kjk xzkeh.k lk[k grq nks fo'ks"k dks"kksa dh LFkkiuk

(Establishment of Two Special Funds for Rural Credit by R.B.I.) –1956 में रिजर्व बैंक ने कृषि साख को बढ़ावा देने के लिये रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 46(A) में निम्नलिखित दो विशेष कोषों की स्थापना की थी। नाबार्ड की स्थापना के बाद कृषि ऋणों की वित्त व्यवस्था का कार्य नाबार्ड को सौंप दिया गया है तथा ये दोनों कोष भी उनको स्थानान्तरित कर दिये गये है –

¼v½ jk"Vªh; xzkeh.k lk[k ¼nh?kZdkyhu lapkyu½ dks"k [National Rural Credit (Long-term Operations) funds] – इस कोष की स्थापना रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 46(A) के अन्तर्गत की गई है और इसमें प्रारम्भ में 10 करोड़ रूपये रिजर्व बैंक ने दिये तथा आगामी पांच वर्षों में प्रतिवर्ष कम से कम 5 करोड़ रूपये लाभ–हानि खाते में डालने का प्रावधान किया गया। इस कोष का उपयोग निम्नांकित कार्यों के लिए किया जा सकता है –

1. सहकारी संस्थाओं के अंश खरीदने के लिये राज्य सरकारों को 20 वर्ष तक की अवधि के ऋण प्रदान करना।

2. राज्य सरकार की गारन्टी पर राज्य सहकारी बैंकों को कृषि कार्यों में सहायतार्थ 15 महिने से 5 वर्ष की अवधि तक ऋण देना

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

3. राज्य सरकार की गारन्टी पर केन्द्रीय भूमि बन्धक/विकास बैंकों को 20 वर्ष तक की अवधि के ऋण देना

4. राज्य सरकार की गारन्टी पर केन्द्रीय भूमि विकास/बन्धक बैंकों को ऋण–पत्र खरीदना।

¼c½ jk"Vªh; xkeh.k lk[k ¼fLFkjhdj.k½ dks"k

[National Rural Credit (Stabilisation) Fund] –इस कोष की स्थापना भी 1956 में रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 46(A) के अन्तर्गत की गई। इस कोष में रिजर्व बैंक द्वारा प्रथम पांच वर्षों में लाभ–हानि खाते से कम से कम 1 करोड़ रूपये प्रति वर्ष डालने का प्रावधान किया गया था।

इस कोष का उपयोग देश में सूखा पड़ने अथवा अन्य किसी प्राकृतिक विपदा के वर्ष में राज्य सहकारी बैंकों को 15 महिनें से 5 वप्र की अवधि के मध्यकालीन ऋण देने में किया जा सकता था ताकि वे अधिनियम की धारा 17 के अन्तर्गत प्राप्त ऋणों का पुर्नभुगतान कर सके। नाबार्ड की स्थापना के बाद ये दोनों कोष नाबार्ड के अन्तर्गत स्थानान्तरित कर दिये गये।

1.17.11 fjtoZ cSad }kjk vkS|ksfxd foÙk dks"k dh LFkkiuk

(Estabilshment of Industrial Finance Fund by R.B.I.) – रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 46C(1) के अन्तर्गत कृषि वित्त कोषों की भांति औद्योगिक वित्त व्यवस्था हेतु 1 जुलाई 1964 में रिजर्व बैंक द्वारा राष्ट्रीय औद्योगिक साख (दीर्घकालीन संचालन) कोष [National Industrial Credit (Long Term Operations) Fund) की स्थापना की गई जिसमें प्रारम्भ में रिजर्व बैंक ने 10 करोड़ रू. डाले तथा बाद के वर्षों में प्रति वर्ष 5 करोड़ रू. लाभ–हानि खाते में डालने का प्रावधान किया गया है।

अधिनियम की धारा 46(2) के प्रावधान के अनुसार इस कोष का उपयोग किया जा सकता है।

1.17.12 fjtoZ cSad }kjk jk"Vªh; vkokl lk[k ¼nh?kZdkyhu lapkyu½ dks"k dh LFkkiuk

(Estabilshment of National Housing Credit (Long Term Operations) Fund by R.B.I.) – अधिनियम की धारा 45 D (1) जो 17.3.1990 से प्रभावी हुई है में यह प्रावधान किया गया है कि रिजर्व बैंक द्वारा राष्ट्रीय आवास साख (दीर्घकालीन संचालन) कोष की स्थापना एवं संचालन किया जायेगा जिसमें आवश्यकतानुसार धन जमा किया जायेगा तथा धारा 45 D (2) में यह प्रावधान किया गया है कि इस कोष का उपयोग राष्ट्रीय आवास बैंक को ऋण एवं अग्रिम देने तथा उनके बाण्ड्स तथा ऋण–पत्र खरीदने में किया जायेगा।

1.17.13 fjtoZ cSad dk ykHk lEcU/kh izko/kku (Provisions Relating to Profits of R.B.I.) –रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण के बाद 1949 से रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 47 के अन्तर्गत यह प्रावधान है कि रिजर्व बैंक को होने वाला वार्षिक शुद्ध लाभ प्रतिवर्ष केन्द्र सरकार को सौंप दिया जायेगा तथा यह लाभ धारा 48 के प्रावधान के अन्तर्गत आयकर से मुक्त रखा गया है।

1.17.14 fjtoZ cSad }kjk cSad nj dh ?kks"k.kk (Declaration of Bank Rate by R.B.I.) –रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 49 के अन्तर्गत प्रावधान किया गया है कि रिजर्व बैंक समय समय पर बैंक दर (Bank Rate) की घोषणा करेगा। जिस दर पर वह विनिमय बिलों तथा अन्य व्यापारिक पत्रों (Commercial Papers) को खरीदेगा अथवा उनकी पुर्नकटौती (Rediscounting) करेगा। अब तक बैंक दर में कई बार परिवर्तन कर चुका है। दिनांक 25.1.2011 से बैंक दर 6 प्रतिशत है।

1.17.15 fjtoZ cSad ds [kkrksa dk vads{k.k ,oa tkap (Audit of Accounts of R.B.I.) –रिजर्व बैंक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

अधिनियम की धारा 50, 51, तथा 52 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक के सभी खातों के अनिवार्य अंकेक्षण का प्रावधान है। अधिनियम की धारा 50(1) के प्रावधान के अन्तर्गत केन्द्र सरकार कम से कम दो अंकेक्षकों की नियुक्ति कर सकती है। ये अंकेक्षक अपना प्रतिवदेन (Report) केन्द्र सरकार को प्रस्तुत करते हैं।

अधिनियम की धारा 51 में यह भी प्रावधान है कि भारत सरकार चाहे तो वह रिजर्व बैंक के हिसाब–किताब की जांच के लिये अंकेक्षकों के अतिरिक्त भारत के महा–अंकेक्षक एवं नियंत्रक (Comptroller and Auditor General of India) को भी आदेश दे सकती है।

1.17.16 fjtoZ cSd esa vyx Ñf"k foÙk foHkkx dh LFkkiuk

(Setting of Separate Agricultureal Credit Department in R.B.I.) –भारत की कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में कृषि वित्त के महत्व को दृष्टिगत रखते हुए रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 54 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक में ही एक अलग "कृषि वित्त विभाग" खोला गया है जो अग्र कार्यों का सम्पादन करता है–

(1) **Ñf"k lk[k iwfrZ iz;Ruksa esa leUo; LFkkfir djuk** – यह विभाग रिजर्व बैंक, राज्य सहकारी बैंकों और अन्य साख संस्थाओं के कृषि साख पूर्ति प्रयत्नों में समन्वय स्थापित करना।

(2) **Ñf"k fo'ks"kKksa dk LVkQ j[kuk** – जिसका कार्य कृषि साख सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन करना तथा केन्द्र सरकारों, राज्य सरकारों, राज्य सहकारी बैंकों तथा अन्य साख संस्थाओं की कृषि साख के सम्बन्ध में सलाह देना है।

1.17.17 vf/kfu;e ds n.M lEcU/kh izko/kku (Penal Provision of R.B.I. Act) – रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 58(B) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को जान–बूझकर गलत सूचनाएँ देने, सूचना न देने या विलम्ब करने, धारा 31 का उल्लंघन करने अथवा ऋण सम्बन्धी गोपनीयता भंग करने के लिये दोषी व्यक्तियों को दण्ड देने की व्यवस्था की गयी है जो संक्षेप में इस प्रकार है –

¼1½ **tkucw>dj vlR; fooj.k nsuk** – जब कोई व्यक्ति अपने प्रार्थना–पत्र, विवरणी, प्रविवरण आदि में रिजर्व बैंक को जानबूझकर गलत सूचना देता है अथवा कोई महत्वपूर्ण तथ्य छिपाता है तो दोषी व्यक्ति को 3 वर्ष का कारावास, आर्थिक दण्ड या दोनों का भागी बनाया जा सकता है। (धारा 58B(1))

(2) सूचना देने में भूल, चूक या विलम्ब होने पर रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 58 B(2) के अन्तर्गत प्रत्येक अपराध के लिये 2000रू. आर्थिक दण्ड अथवा अपराध जारी रहने तक 100रू. प्रतिदिन का अर्थदण्ड दिया जा सकता है।

(3) रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 31 के प्रावधानों का उल्लंघन करने पर उस विपत्र की राशि तुल्य अर्थदण्ड की अर्थव्यवस्था है। (धारा 58 B(3))

(4) ऋण सम्बन्धी गोपनीयता भंग करने के दोषी व्यक्ति को अधिनियम की धारा 58 B(4) के अन्तर्गत 6 माह का कारावास अथवा एक हजार रु. का अर्थदण्ड अथवा दोनों सजाएँ दी जा सकती है।

रिजर्व बैंक अधिनियम के अन्तर्गत यदि अपराध किसी कम्पनी द्वारा किया जाता है तो उसके लिये उत्तरदायी व्यक्ति दण्ड का भागी होगा।

1-18 fjtoZ cSd vf/kfu;e 1934 esa dbZ la'kks/ku (Amendments in R.B.I. Act, 1934) –1935 में अधिनियम के लागू होने के बाद इसमें कई महत्वपूर्ण संशोधन समय–समय पर किये गये। यहां तक कि प्रारम्भ में 61 धाराओं में से कई धाराओं को हटा दिया गया है तथा प्रारम्भ की पांच अनुसूचियों के स्थान पर अब केवल दो अनुसूचियाँ रह गई हैं। रिजर्व बैंक अधिनियम के निम्नलिखित संशोधन उल्लेखनीय है :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(i) **1948** में रिजर्व बैंक अधिनियम में संशोधन करने से वह हिस्सेदारों का बैंक न रहकर पूर्णतः सरकारी बैंक हो गया। केन्द्र सरकार ने हिस्सेदारी की समस्त अंश पूँजी स्वयं खरीद ली।

(ii) **1951** के संशोधन से यह अधिनियम समस्त भारत में लागू हो गया, गवर्नर की अनुपस्थिति में गवर्नर द्वारा मनोनीत डिप्टी गवर्नर को गवर्नर के सभी अधिकार मिल गये। कृषि बिलों की अवधि 9 माह से बढ़ाकर 5 माह कर दी गई। राज्य सहकारी बैंकों से भी रिजर्व बैंक द्वारा वे सभी विवरण मांग सकने का अधिकार मिल गया जो वे अनुसेचित बैंकों से मांग सकते हैं।

(iii) **1953** के संशोधन से बैंक को राज्य सहकारी बैंकों को 16 माह से 5 वर्ष तक की अवधि के लिये 5 करोड़ रु. तक के ऋणों का अधिकार मिल गया।

(iv) **1955** के संशोधन 28से ग्रामीण साख व्यवस्था हेतु रिजर्व बैंक को दो विशेष कोष (1) राष्ट्रीय ग्रामीण साख (दीर्घकाल संचालन) कोष तथा (2) राष्ट्रीय ग्रामीण साख (स्थिरीकरण) कोष स्थापित करने का अधिकार मिल गया और उनकी स्थापना कर दी गई।

(v) **1956** के संशोधन से भारतीय मुद्रा प्रणाली में पर्याप्त मितव्ययिता एवं लोचता के उद्देश्य से उसकी धारा 33(2) में नोट निर्गमन की आनुपातिक कोष प्रणाली के स्थान पर न्यूनतम कोष प्रणाली का शुभारम्भ हुआ। प्रारम्भ में यह कोष 515 करोड़ रु. रखा गया था किन्तु कालान्तर में संशोधन द्वारा न्यूनतम 200 करोड़ रू. रखा गया जिसमें 115 करोड़ रू. का स्वर्ण तथा 85 करोड़ रू. की विदेशी प्रतिभूतियाँ रखी गई। इस संशोधन से अधिनियम की धारा 37 अप्रभावी हो गई।

(vi) **1964** के संशोधन से धारा 46(C) के अन्तर्गत औद्योगिक वित्त व्यवस्था के लिये रिजर्व बैंक को राष्ट्रीय औद्योगिक साख (दीर्घकालीन संचालन) कोष स्थापित करने का अधिकार मिल गया।

(vii) **1965** के संशोधन से रिजर्व बैंक को राज्य सहकारी बैंकों को भी अनुसूचित बैंकों की सूची में शामिल करने का अधिकार प्राप्त हो गया।

(viii) **1974** के संशोधन से 'देयताओं' की परिभाषा में परिवर्तन किया गया जिसके अनुसार किसी बैंक के कुल दायित्वों में से अगर (1) भारतीय स्टेट बैंक या उसके सहायक बैंक (2) कोई राष्ट्रीयकृत बैंक (3) कोई बैंकिंग कम्पनी या सहकारी बैंक अथवा केन्द्र सरकार द्वारा कोई अनुसूचित बैंक अन्य वित्तीय संस्था के कुल दायित्वों को घटाने के बाद प्राप्त शेष राशि कुल 'देयताओं' में गिनी जायेगी।

(ix) **1977** में पारित संशोधन से रिजर्व बैंक की अतिरिक्त नकद कोष (Additional Cash Reserve Ratio-CRR) प्राप्त करने का अधिकार मिल गया किन्तु 1996 में इसे समाप्त कर दिया गया था।

(x) **/kkjk 45 S ds izko/kku (Provision of Sectioh 45 S)**

20 ekp] 1997 ds fjtoZ cSd ¼la'kks/ku½ अधिनियम की धारा 45(S) के अन्तर्गत गैर–बैंकिंग वित्तीय कम्पनीज (Non-Banking Finance Companies - NBFCs) पर रिजर्व बैंक ने नियंत्रण को कड़ा कर दिया है। इस अधिनियम के द्वारा कुछ अपवादों को छोड़ अब अनिगमित निकायों (Unicorported Bodies) की जमाएँ स्वीकार करना प्रतिबन्धित कर दिया है। अधिनियम के अनुसार जिन व्यक्तियों, फर्मों अथवा व्यक्ति समूहों का मुख्य कारोबार किसी भी योजना के तहत जमाएँ प्राप्त करना व उधार देना वे भी यह कार्य बिना गैर बैंकिंग वित्तीय कम्पनी गठन के नहीं कर सकेंगे।

यद्यपि कोई भी कारोबारी व्यक्ति अपने कारोबार के लिये बाजार से जमाएँ प्राप्त कर सकेगा लेकिन जमा प्राप्त कर उधार देने का कार्य, सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश, किराया खरीद पद्धति पर कोई भी वस्तु बेचने का कार्य, किसी भी तरक का बीमा व्यवसाय, चिट फण्ड व्यवसाय, नकद या वस्तु के रूप में उपहार या इनामी योजना का आकर्षण देकर धन इकट्ठा करने का कार्य मुख्य या सहायक कारोबार के रूप में

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

करने वाले लोग अब रिजर्व बैंक के यहाँ गैर–बैंकिंग वित्तीय कम्पनी को बिना पंजीकृत कराये नहीं कर सकेंगे।

इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (IDBI) की धारा 2(सी) में परिभाषित उद्योगों व कृषि कार्य में लगे लोगों को अधिनियम से छूट दी गई है और वे जमाएँ प्राप्त कर सकेंगे। विधेयक के अनुसार किसी भी व्यक्ति द्वारा अधिनियम में परिभाषित 22 रिश्तेदारों से जमा लेने तथा उसे हर तरह के उपयोग में लेने पर छूट जारी रखी गई है।

1-19 fjtoZ cSd dk jk"Vh;dj.k Nationalisation of Reserve Bank of India

रिजर्व बैंक की स्थापना एक अंशधारियों के बैंक के रूप में की गई। इस बैंक की स्थापना से ही जन भावना रिवर्ज बैंक का राष्ट्रीयकरण किये जाने के पक्ष में थी। स्वतन्त्रता के पश्चात् तो बैंक के राष्ट्रीयकरण की बात जोरदार मांग के रूप में की जाने लगी। अतः भारत सरकार ने सन् 1948 में रिजर्व बैंक (जन अधिकार में हस्तांतरण) अधिनियम (The Reserve Bank (Transfer to Public Ownership) Act) पारित कर, 1 जनवरी, 1949 को रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण कर दिया।

(A) fjtoZ cSd ds jk"Vh;dj.k ds i{k esa rdZ fuEufyf[kr Fks &

¼1½ vU; ns'kksa ds dsUnzh; cSadksa dk jk"Vh;dj.k

(Nationalisation of Central Banks in Other Countries) –विश्व के विभिन्न देशों में केन्द्रीय बैंकों के राष्ट्रीयकरण की प्रवृत्ति रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण सम्बन्धी निर्णयों को प्रभावित किया। रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में भारतीय जनमत का यह तर्क था कि जब स्वस्थ प्रजातन्त्रात्मक शासन व्यवस्था तथा निजी साहस को पर्याप्त महत्व देने वाले देशों में भी केन्द्रीय बैंकों का राष्ट्रीयकरण हो चुका है तो भारत में केन्द्रीय बैंक का राष्ट्रीयकरण क्यों नहीं हो। उल्लेखनीय हे कि 1945 में कामनवैल्थ बैंक ऑफ आस्ट्रेलिया तथा बैंक ऑफ फ्रान्स तथा 1946 में बैंक ऑफ इंग्लैण्ड का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया था।

¼2½ jktuSfrd Lora=rk rFkk fu;kstu dk izkjEHk

(Political Freedom and Beginning of Planning Era) –स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में आर्थिक विकास हेतु आर्थिक नियोजन का चयन किया गया। नियोजन की सफलता के सम्बन्ध में पर्याप्त धन की आवश्यकता के संदर्भ में रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण आवश्यक समझा गया। ब्रिटिश शासनकाल में राष्ट्र विरोधी नीतियों के अन्तर्गत तो रिजर्व बैंक का अंशधारियों के बैंक बने रहने का औचित्य था किन्तु स्वतन्त्र भारत में स्थापित राष्ट्रीय सरकार की स्थापना के पश्चात् बैंक का राष्ट्रीयकरण कर सरकारी नियन्त्रण में रखा जाना उपर्युक्त समझा गया।

¼3½ jk"Vh; rFkk lkekftd fgrksa dh lqj{kk (Protection of National and Scoial Interest) –

रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण के सम्बन्ध में यह तर्क भी प्रस्तुत किया गया कि सरकार के नियन्त्रण में ही रिजर्व बैंक सामाजिक तथा राष्ट्रीय हितों को सुरक्षा प्रदान कर सकेगा। इस सम्बन्ध में यह कहा गया कि यदि रिजर्व बैंक का स्वामित्व निजी व्यक्तियों के हाथ में रहा तो बैंक का दृष्टिकोण किसी वर्ग के पक्ष में रह कर राष्ट्रीय हितों की अवहेलना कर सकता है। अतः रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण ही उपर्युक्त समझा गया।

¼4½ vkfFkZd rFkk ekSfnzd uhfr;ksa esa lkeUtL;

(Coordination of Economic and Monetary Policies) –तीव्र गति से आर्थिक विकास हेतु आर्थिक एवं मौद्रिक नीतियों में सामन्जस्य आवश्यक है। अतः यह मत व्यक्त किया गया कि रजिर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण से इन नीतियों में अधिक सामन्जस्य स्थापित किया जा सकेगा।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

¼5½ **cfdx 0;oLFkk ij lefpr fu;U=.k (Proper Control over Banking System)** –बैंकों में जनता का विश्वास बनाये रखने हेतु उन पर समुचित नियन्त्रण आवश्यक है। अतः देश की बैंकिंग व्यवस्था पर समुचित नियन्त्रण हेतु केन्द्रीय बैंक को उपर्युक्त समझा गया। अतः रिजर्व बैंक को राष्ट्रीय स्वामित्व में लेना आवश्यक था।

¼6½ **ykHk dk n'k fgr e i;ksx (Use of profit for the Benefit of Country)** –रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण हेतु समर्थकों ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि मध्य लाभांश के रूप में वितरण अनुपयुक्त है। रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण कर इस लाभ के देश के हित में प्रयोग करना सम्भव था।

(B) **jk"Vªh;dj.k d foi{k e rdZ**

(The View Against Nationalisation)- रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में उपर्युक्त तर्कों के विपरीत राष्ट्रीयकरण के विरोधी पक्ष द्वारा निम्न तर्क प्रस्तुत किये गये थे –

(1) राष्ट्रीयकरण से राजनैतिक हस्तक्षेप की आशंका व्यक्त की थी।

(2) बैंक के सरकारी नियन्त्रण के लिये जाने से कार्य क्षमता में गिरावट आ जाने की संभावना भी व्यक्त की गयी।

(3) बैंक राष्ट्रीयकरण से व्यापारिक तथा बैंकिंग परम्पराओं की अवहेलना व्यक्त की गयी।

(4) रिजर्व बैंक के राष्ट्रीयकरण का विचार स्वतंत्र भारत की प्रथम औद्योगिक नीति, 1948 के प्रस्ता के अनुकूल नहीं था।

(5) राष्ट्रीयकरण से बैंक के अंशधारियों को एक बड़ी राशि मुआवजे के रूप में देनी पड़ेगी।

(6) रिजर्व बैंक अधिनियम में पहले ही सरकार को सर्वाभौतिक अधिकार प्रदान किये हुए है फिर बैंक का अनायास ही राष्ट्रीयकरण क्यों?

वास्तव में रिजर्व बैंक राष्ट्रीयकरण से पूर्व अंशधारियों का बैंक अवश्य था किन्तु बैंक सचालन के संबन्ध में सरकार को प्राप्त अधिकारों के कारण व्यवहार में बैंक सरकारी बैंक के समान ही था। बैंक के गवर्नर, डिप्टी गवर्नर्स तथा संचालकों की नियुक्ति सरकार के द्वारा ही की जाती थी। ऐसा अवसर भी कभी उपस्थिति नहीं हुआ जब कि रिजर्व बैंक तथा सरकार की नीतियों में टकराव दृष्टिगत हुआ हो। निःसंदेह यह बैंक अंशधारियों का बैंक था किन्तु इसके बावजूद भी बैंक ने कभी भी राष्ट्रीय हितों की अवहेलना कर अंशधारियों के स्वार्थों की पूर्ति नहीं की। स्वतन्त्रता के पश्चात् बैंक के राष्ट्रीयकरण की नीति के प्रति अति सरकारी उत्साह का प्रदर्शन थी। अतः राष्ट्रीयकरण के विरूद्ध प्रस्तुत की गई आपत्तियों के बावजूद भी सरकार ने रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण कर दिया।

1-20 Hkkjrh; fjtoZ cSad ¼la'kks/ku½ vf/kfu;e] 2006 dh izeq[k 'krsZ

[State Features of R.B.I. (Amendment) Act, 2066]- यह संशोधन अधिनियम भारतीय रिजर्व बैंक को मौद्रिक प्रबन्धन लिखतों सम्बन्धी सामर्थ्यकारी शक्ति प्रदान करता है। यह संशोधन रिजर्व बैंक को प्रमुख रूप से अनुसूचित बैंकों के लिये आरक्षित निधियों की वांछित मात्राएँ निर्धारित तथा मुद्रा एवं सरकारी प्रतिभूति बाजार को नियमित करने में व्यापक शक्तियाँ और लोच प्रदान करता है।

¼1½ **udnh vkjf{kr fuf/k vuqikr** (C.R.R.) – देश में मौद्रिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए रिजर्व बैंक, अनुसूचित बैंकों के लिये बिना किसी उच्चतम अथवा न्यूनतम दर के नकदी आरक्षित निधि अनुपात (CRR) का निर्धारण कर सकता है। वर्तमान में रिजर्व बैंक को बैंकों के जमा शेष CRR पर कोई ब्याज नहीं देना होता है। दिनांक 25.1.2011 से CRR 6 प्रतिशत है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

¼2½ **jik ,o fjol fjik nj (Repo and Reserve Repo Rates)** – यह संशोधन रिजर्व बैंक को यह शक्ति प्रदान करता है कि जिससे यह रेपो एवं रिवर्स रेपो के परिचालन तथा विदेशी प्रतिभूतियाँ समेत प्रतिभूतियों पर उधार दे सकेगा तथा उधार ले सकेगा। 25.1.2011 से रेपो रेट 6.5 प्रतिशत है तथा रिवर्स रेपो दर 5.50 प्रतिशत है।

इस संशोधन का प्रभाव रिजर्व बैंक द्वारा स्वयं द्वारा किये जाने वाले कारोबार पर भी पड़ेगा क्योंकि हाजिर सौदे में विक्रेता से क्रेता को सुपुर्द करने में और वायदा सौदे में अपने विक्रेता को वापिस सुपुर्द में संशोधन से पहले प्राप्त रेपो का लेखांकन कानूनी व्याख्या के रूप में बिक्री/खरीद के लेन–देन के रूप में माना जाता था। यह नया संशोधन रिपो/रिवर्स रिपो एक ही लेन–देन के दो सौदों के रूप में परिभाषित करता है न कि दो अलग–अलग स्वतंत्र लेन–देनों के रूप में।

¼3½ **emk ,o ljdkjh ifrHkfr cktkj (Money Market Instruments or Securities etc.)** – रिजर्व बैंक अधिनियम में एक नया अध्याय III (D) जो दिनांक 9.1.2007 से प्रभावी किया गया है। यह अध्याय व्युत्पन्नी मुद्रा बाजार की प्रतिभूतियों के व्यवहारों का नियमन इत्यादि से सम्बन्धित है। धारा 15W में प्रावधान किया गया है कि रिजर्व बैंक को ब्याज दरों अथवा ब्याज दर उत्पादों से सम्बन्धित नीति निर्धारण करने और प्रतिभूतियों का व्यापार करने वाली एजेन्सियाँ, मुद्रा बाजार लिखित विदेशी मुद्रा, व्युत्पनी अथवा उसी प्रकार के अन्य लिखितों (Instruments) के बारे में विनियमित करने, निर्देश देने और जानकारी मांगने और उन सत्ताओं का निरीक्षण करने, जो कि रिजर्व बैंक के विनियामक क्षेत्र के अन्तर्गत नहीं आते हैं, सम्बन्धी अधिकार देता है। इस प्रकार नये संशोधन के कारण स्टॉक एक्सचेन्ज में व्यापार किये जाने वाले व्युत्पनी उत्पाद (Derivative Products) यदि ये उत्पाद विदेशी मुद्रा, ब्याज दर, ऋण अथवा इनका मिश्रित किसी रूप में हो तो रिजर्व बैंक की अनुमति वांछनीय होगी। ब्याज दर फ्युचर्स और कॉरपोरेट बॉड में रेपो से सम्बन्धित मामलों पर नीति सम्बन्धी दिशा निर्देश भी रिजर्व बैंक की परिधि में आयेंगे। संशोधन से पहले रिजर्व बैंक मुद्रा बाजारों और अन्य लिखितों के लेन–देन को केन्द्र द्वारा प्रायोजित शक्ति के अन्तर्गत विनियमित करता था। अब उसे सीधे अधिकार मिल गया है।

¼4½ **O;RiUuh (Derivatives)** – अधिनियम में नये अध्याय IIID की धारा 45 U (a) के जोड़े जाने से रिजर्व बैंक को व्युत्पन्नी जमा ब्याज दर, देशी एवं विदेशी प्रतिभूतियों, दरों अथवा कीमतों के सूचकांक विदेशी विनिमय दर, क्रेडिट रेटिंग अथवा सूचकांक, स्वर्ण अथवा चाँदी की कीमतों स्वर्ण अथवा चाँदी की सिल्लियों जैसा कि इसकी अन्तर्निहित कीमत में परिवर्तनीय हो के बारे में कार्यवाही करने की शक्ति की अनुमति होगी।

इस संशोधन से ओटीसी व्युत्पन्नों (OCT-Derivatives) को कानूनी वैद्यता मिलती है यदि लेन–देन का एक भी पक्ष रिजर्व बैंक को अथवा उसके विनियामक क्षेत्र में आने वाली कोई एजेन्सीयाँ हो। संशोधन के पहले केवल स्टॉफ एक्सचेन्ज पर व्यापार किये जाने वाली व्युत्पन्नी वैद्य होती थी। अन्य संविदाओं को संविदा अधिनियम, 1872 (Contract Act, 1872) के अन्तर्गत निपटाया जाता था।

1-21 fu"d"k (Conclusion)

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि रिजर्व बैंक अधिनियम समय समय पर किये गये संशोधनों से काफी परिष्कृत, व्यावहारिक एवं व्यापक हो गया है। इसके प्रावधानों से रिजर्व बैंक को अपने उत्तरदायित्वों को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिये पर्याप्त अधिकार प्रदान किये गये हैं। अधिनियम में काफी लोचता भी रही है। रिजर्व बैंक द्वारा अधिनियम में प्रदत्त अधिकारों से मूल्य स्थायित्व में मदद मिली है, रुपये के आन्तरिक एवं बाह्य मूल्य में स्थिरता बनाये रखने का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

रिजर्व बैंक ने बैंकों के बैंक तथा अन्तिम ऋणदाता के रूप में देश में सुसंगठित बैंकिंग के विकास एवं विस्तार

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

का मार्ग प्रशस्त कर सुदृढ़ बैंकिंग व्यवस्था स्थापित करने में सफलता अर्जित की है। गैर–बैंकिंग संस्थाओं की गतिविधियों पर नियमन एवं नियन्त्रण करके जमाओं में वृद्धि से तीव्र पूँजी निर्माण तथा साख विस्तार का मार्ग प्रशस्त किया है। अतः रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 काफी हद तक उपयोगी सिद्ध हुआ है।

vH;kl d fy, ç'u

y?kÙkjkRed ç'u

(Short Answer Type Questions)

1. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया अधिनियम, 1934 के क्या उद्देश्य है?
2. रिजर्व बैंक अधिनियम में रिजर्व बैंक को क्या विशेषाधिकार दिया गया है?
3. रिजर्व बैंक अधिनियम द्वारा रिजर्व बैंक के वर्जित/प्रतिबन्धित कार्यों का वर्णन कीजिए।
4. रिजर्व बैंक अधिनियम में अनुसूचित बैंक बनने की मुख्य शर्तों का विवेचन कीजिये।
5. रिजर्व बैंक अधिनियम में रिजर्व बैंक को गलत सूचनाएँ देने पर दण्ड सम्बन्धी क्या प्रावधान है?
6. रेपो एवं रिवर्स रेपो दरों (Repo Rates & Reserve Repo Rates) का प्रयोग रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया किस प्रकार करता है?
7. रिजर्व बैंक (संशोधन) अधिनियम की धारा 45 S में क्या प्रावधान किये गये है।
8. तरलकोष से आप क्या समझते है।

fucU/kkRed ç'u

(Descriptive Questions)

1. भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम कें अन्तर्गत रिजर्व बैंक की प्रबन्ध व्यवस्था पर प्रकश डालिये।
2. भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 के प्रमुख प्रावधानों का वर्णन कीजिये।
3. नोट निर्गमन के सम्बन्ध में रिजर्व बैंक अधिनियम के प्रावधानों को स्पष्ट कीजिये।
4. भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम के अन्तर्गत भारतीय रिजर्व बैंक के कार्यों का वर्णन कीजिये।
5. रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 में निम्न के सम्बन्ध में क्या प्रावधान किये गये है :–
   (i) रिजर्व बैंक द्वारा विदेशी विनिमय की खरीद–बिक्री की व्यवस्था के प्रावधान।
   (ii) भारतीय बैंकिंग प्रणाली नियमन एवं नियन्त्रण सम्बन्धी प्रावधान।
6. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया अधिनियम में निम्न के सम्बन्ध में क्या व्याख्या की गई है।
   (i) नकद कोषानुपात।
   (ii) अनुसूचित बैंक बनाने की शर्तें।
7. रिजर्व बैंक अधिनियम के अन्तर्गत कृषि तथा औद्योगिक वित्त प्रावधानों का विवरण दीजिये।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

cfdx fu;eu vf/kfu;e] 1949

The Banking Regulation Act, 1949

2-1 **cfdx fu;eu dh vko';drk %&**किसी भी देष की अर्थव्यवस्था का विकास उस देष की सुदृढ़ बैंकिंग व्यवस्था पर निर्भर करता है, इसलिए प्रत्येक देष में बैंकिंग व्यवस्था का विकसित एवं सुसंगठित होना आवष्यक है। वैष्वीकरण एवं उदारवादी दृष्टिकोण ने बैंकिंग व्यवसाय के विकास को नई ऊँचाईयाँ प्रदान की है। बैंक एक सेवा उद्योग के रूप में जाना जाता है। बैंकों की कार्यशील पूँजी का अधिकांश भाग अंशधारियों का न होकर जमाकर्त्ताओं का होता है। इसलिए यह आवश्यक है कि जमा करने वालों के हितों की रक्षा करने के लिए सरकार कुछ आवश्यक कदम उठाये ताकि कोई भी बैंक जमाकर्त्ताओं की रकमों का दुरूपयोग नहीं कर सके।

हम यह जानते है कि बैंकिंग सुविधाओं का जितना विस्तार महानगरों में हुआ है, वहाँ दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्रों में भी बैंकिंग सुविधाओं में पहले से अधिक विस्तार एवं विकास हुआ है। आज ग्रामीण क्षेत्र में बैंक सेवाओं के प्रति लोगों का रूझान बढ़ा है। अधिकांश लोग बैंकों में खाते रखने लग गये हैं तथा अधिकांश लेन–देन बैंक के माध्यम से करते है। अतः उनकी बचत सुरक्षित रहे, इसलिए एक ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता महसूस की गई जो बैंकिंग प्रणाली में जमाकर्त्ताओं के हितों की रक्षा और पूँजी के उचित व सुदृढ़ विनियोग की व्यवस्था पर नियंत्रण स्थापित कर सके। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए भारत में बैंकिंग नियमन की आवश्यकता महसूस की गई।

2-2 **Hkkjr e cfdx fo/kku dk bfrgkl %&**1913 के पूर्व भारत में बैंकिंग कम्पनियों के नियंत्रण एवं नियमन के लिए कोई विशेष अधिनियम नहीं था। यद्यपि भारतीय विनिमय साध्य विलेख अधिनियम, 1881 (Indian Negotiable Instrument Act, 1881) में बैंकों के नियंत्रण हेतु नाम मात्र की व्यवस्था थी।

भारत में बैंकिंग विधान की आवश्यकता का प्रथम अनुभव 1913–14 के बैंकिंग सकंटकाल में हुआ जबकि देश के अनेक बैंक असफल हुए। जनता तथा आर्थिक विचारकों ने यह मत प्रकट किया कि यदि देश में बैंकिंग व्यवस्था तथा संगठन के नियमन सम्बन्धी कोई विधान होता तो भारतीय बैंक इतनी अनियमितताओं में संलग्न नहीं हो सकते थे। अतः देश में बैंकिंग विधान बनाने पर बल दिया गया परन्तु सरकार ने इस दिशा में कोई कार्यवाही नहीं की।

1929 e tc dUnh; cfdx tkp lfefr की नियुक्ति की गयी तो उसे यह कार्य सौंपा गया कि वह जनता के हितों की रक्षा करने के लिए बैंकिंग व्यवस्था के नियमन सम्बन्धी सुझाव दे। समिति ने भारतीय बैंकिंग व्यवस्था का नियन्त्रण करने के लिए केन्द्रीय बैंक की स्थापना का सुझाव दिया। किन्तु भारत सरकार ने इन सुझावों पर केवल यह कार्यवाही की कि भारतीय कम्पनी अधिनियम में कुछ संशोधन कर दिये जिनसे बैंकों के विस्तार तथा नीतियों का नियन्त्रण हो सकता था। ये उपाय भी बैंकिंग को प्रभावी ढ़ंग से नियन्त्रित करने में असफल रहे और देश में अनेक बैंक फेल हुए।

lu 1934 e fjto cd vkQ bf.M;k ,DV बना। इसके अन्तर्गत रिजर्व बैंक की स्थापना हुई और उसे व्यापाक अधिकार मिले। उसके हस्तक्षेप से भी स्थिति में कोई खास सुधार नहीं हुआ।

lu 1939 e fjto cd u ,d iFkd cfdx dkuu बनाने का सुझाव भारत सरकार के सामने रखा किन्तु द्वितीय महायुद्ध छिड़ जाने से वह कोई कदम न उठा सकी।

1943&44 e dEiuh dkuu dk iu% l'kkf/kr करके बैंकों के नियन्त्रण हेतु रिजर्व बैंक को और अधिक अधिकार दिये गये।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

lu 1946 e ,d v/;kn'k जारी करके रिजर्व बैंक को विस्तृत अधिकार प्रदान किये गये जिससे यदि कोई अनुसूचित बैंक उसके आदेशों की उपेक्षा करे, तो रिजर्व बैंक उसे अनुसूचित बैंकों की सूची में से निकाल सकता था।

भारत के स्वतन्त्र होने पर लोकप्रिय सरकार ने देश में बैंकिंग के स्वस्थ विकास के लिए एक स्वतन्त्र बैंकिंग कानून के निर्माण की आवश्यकता अनुभव की। तदनुसार बैंकिंग नियमन अधिनियम भारतीय विधान निर्मात्री सभा द्वारा पास किया गया और 16 मार्च, 1949 से देश में लागू किया गया।

1965 में एक संशोधन से इस अधिनियम का नाम बदलकर भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम, 1949 [Indian Banking (Regulation) Act 1949] कर दिया। इस संशोधन के बाद यह अधिनियम उन सभी सरकारी साख समितियों पर भी लागू होता है जो बैंकिंग व्यवसाय करती हैं।

2-3 Hkkjr e cfdx vf/kfu;e dh vko';drk ,o mí'; %

[Objects and Necessity of Banking Act in India]

बैंकों के प्रभावी नियन्त्रण एवं नियमन के विशेष कानून से जमाकर्त्ताओं के धन को सुरक्षा प्रदान करने और बैंकिंग के समुचित, सन्तुलित एवं समन्वित तीव्र विकास हेतु बैंकिंग अधिनियम की आवश्यकता महसूस की गई। अधि ानियम की आवश्यकता के प्रमुख कारण ये थे :–

¼1½ cdk dk Qy gku l jkduk (To Check Failures of Banks) –बैंकों के विकास काल से प्रारम्भ में ही बैंकों के निरन्तर फैल होने की प्रवृत्ति से जनता और जमाकर्ताओं का बैंकिंग व्यवस्था में विश्वास उठने लगा अतः बैंकों को फैल होने से रोकने के लिए प्रभावी बैंकिंग अधिनियम की आवश्यकता पड़ी।

¼2½ cfdx dk lUrfyr fodkl (Balanced Development of Banking) – स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व प्रभ ाावी बैंकिंग कानून के अभाव में भारत में बैंकिंग का सन्तुलित विकास नहीं हुआ। अधिकांश बैंक शाखायें शहरी क्षेत्रों तक सीमित थीं, ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का नितान्त अभाव था। अतः बैंकिंग के सन्तुलित विकास हेतु बैंकिंग अधिनियम की आवश्यकता बढ़ी।

¼3½ dêj ,o vufpr ifrLi)k ij fu;U=.k

(Control over cut-throat and Unwanted Competition) –बैंकों में परस्पर कट्टर प्रतिस्पर्द्धा के कारण कई बैंकों के द्वारा गलत विनियोजन एवं जमाकर्ताओं से प्रलोभन द्वारा निक्षेपों से कई बैंकों के फैल होने की नौबत आती थी। अतः बैंकों में अनुचित प्रतिस्पर्द्धा पर नियन्त्रण के लिये बैंकिंग विधान की आवश्यकता हुई।

¼4½ Lon'kh cdl rFkk lxfBr cfdx e leUo;

(Co-ordination among Indigenous Bankers and Organised Banking) –स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भारतीय मुद्रा बाजार में स्वदेशी बैंकर्स का बाहुल्य एवं प्रभुत्व था और भारतीय संगठित बैंकिंग से उसका समन्वय नहीं था अतः बैंकिंग सुविधाओं का पर्याप्त विकास करने के लिये स्वदेशी बैंकों पर नियन्त्रण तथा उनका संगठित बैंकिंग से समन्वय स्थापित करने के लिए बैंकिंग अधिनियम की आवश्यकता हुई।

¼5½ tekdrkvk d fgrk dh j{kk (To safeguard the Interests of Depositors) –बैंकों के निरन्तर फैल होने और उनके द्वारा जमाकर्ताओं को नुकसान पहुँचाने की प्रवृत्ति से जनता का बैंकों में धन जमा कराने का विश्वास उठता जा रहा था। अतः जनता का विश्वास जमाने तथा जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा के लिये बैंकों पर नियन्त्रण के लिये बैंकिंग विधान अति आवश्यक हो गया।

¼6½ lxfBr enk ckTkj dk fodkl (Development of Organised Money Market) –स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व वित्तीय सुविधाओं का अभाव था और मुद्रा बाजार अव्यवस्थित एवं असंगठित था जबकि तीव्र आर्थिक विकास के लिये एक संगठित मुद्रा बाजार की महती आवश्यकता होती है अतः संगठित मुद्रा बाजार के विकास हेतु प्रभावी बैंकिंग अधिनियम की आश्यकता महसूस हुई।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

¼7½ fjtoZ cSad dh ekSfnzd ,oa lk[k uhfr;ksa dk lQy fØ;kUo;u

(Successful Implementation of Monetary and Credit Policies of Reserve Bank) – भारतीय बैंकिंग पर रिजर्व बैंक का प्रभावी नियन्त्रण न होने से रिजर्व बैंक मौद्रिक एवं साख नीतियों को सफलतापूर्वक लागू करने में असमर्थ रहता था अतः उसके द्वारा लागू मौद्रिक एवं साख नीतियों की सफलता सुनिश्चित करने के लिये तथा बैंकिंग व्यवस्था पर उसके प्रभावी नियन्त्रण के लिये एक व्यापक बैंकिंग विधान की आवश्यकता थी।

¼8½ cSadksa ds vuqfpr fofu;kstuksa ij fu;U=.k (Control over Unwanted Investments of Banks) – बैंकों में प्रतिस्पर्द्धा एवं उद्योगपतियों के नियन्त्रण से बैंक सट्टेबाजी तथा गलत विनियोज करते थे। इससे बैंकिंग विकास कार्यों पर विनियोजन कम था अतः बैंकों के अनुचित विनियोजनों पर नियन्त्रण तथा उनके साधनों का समुचित उपयोग करने के उद्देश्य से बैंकिंग विधान आवश्यक हो गया था।

2-4 Hkkjrh; cSafdax ¼fu;eu½ vf/kfu;e 1949 dh izeq[k fo'ks"krk,¡ ½

[Main Features of Indian Banking (Regulation) Act, 1949]-स्त्रतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व भारतीय बैंकिंग में व्याप्त बुराइयों को दूर करने तथा देश में सुसंगठित एवं विकासोन्मुख बैंकिंग का मार्ग प्रशस्त करने के उद्देश्य से बैंकिंग (नियमन) अधिनियम, 1949 की आवश्यकता एवं उद्देश्य के उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस अधिनियम के द्वारा भारत में बैंकिंग व्यवसाय के नियोजित विकास और रिजर्व बैंक के प्रभावी नियन्त्रण से ही देश में बैंकिंग का सुदृढ़ आधार बनाना संभव है। इस अधिनियम की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार है :–

¼1½ vf/kfu;e dk mís'; (Objectives of the Act) –इस अधिनियम का उद्देश्य देश में सन्तुलित बैंकिंग विकास, बैंकिंग के क्षेत्र में व्याप्त बुराइयों को दूर करना, उनकी अनुचित प्रतिस्पर्द्धा पर नियन्त्रण, सुसंगठित मुद्रा बाजार का विकास करना, बैंकिंग को विकासोन्मुख बनाना तथा रिजर्व बैंक की मौद्रिक और साख नीतियों की सफलता का मार्ग प्रशस्त करना आदि है।

¼2½ vf/kfu;e dk {ks= (Scope of the Act) –इस अधिनियम का क्षेत्र व्यापक है। इस अधिनियम की धारा 2 में प्रावधान किया गया है कि इस अधिनियम के लागू होने के बाद भी 1956 के कम्पनी अधिनियम के बैंकिंग सम्बन्धी प्रावधान लागू माने जावेंगे। इन विभिन्न धाराओं में व्यवस्था है कि इस अधिनियम में कोई प्रावधान भारतीय अनुबन्ध अधिनिमय (Indian Contract Act), Hkkjrh; fofue; lk/; foys[k vf/kfu;e (Indian Negotiable Act, 1881), सिविल एवं क्रिमिनिल प्रोसीजर कोड (Civil and Criminal Procedure Code) तथा बैंकर्स बुक्स एविडेन्स एक्ट (Bankers Books Evidence Act) के प्रतिकूल नहीं होंगे। जिन बातों में यह अधिनिमय मौन है उनमें तत्सम्बन्धी अधिनियम के प्रावधान ही लागू रहेंगे।

बैंकों के राष्ट्रीयकरण से पूर्व 1969से पहले यह अधिनियम सभी बैंकिंग कम्पनियों पर समान रूप से लागू था पर बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद 18 जुलाई, 1969 से राष्ट्रीकृत बैंकों पर इस अधिनियम की केवल वे धारायें ही लागू हैं जिनके लिये 1970 के अधिनियम में प्रावधान किया गया है।

¼3½ vf/kfu;e dk uke ifjorZu (Change of Title) – 16 मार्च 1949 में इस अधिनियम को ''बैंकिंग कम्पनी अधिनियम, 1949'' (Banking Companies Act, 1949) के नाम से पारित किया गया था किन्तु दिसम्बर 1956 के संशोधन में इसे बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 [Indian Banking (Regulation) Act 1949] कर दिया गया जो आज भी इसी नाम से जाना जाता है।

¼4½ {ks= foLrkj (Expansion of Scope) – सितम्बर 1965 के पूर्व यह अधिनियम सहकारी बैंकों पर लागू नहीं होता था किन्तु सितम्बर, 1965 में इस अधिनियम में संशोधन करने से अधिनियम का क्षेत्र सहकारी बैंकों तक बढ़ गया।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

¼5½ **vf/kfu;e esa 56 /kkjk;sa rFkk ,d ifjf'k"V (56 Sections and One Appendix in the Act)** – भारतीय बैंकिंग नियमन अधिनियम में कुल 56 धारायें तथा एक परिशिष्ट है। इन 56 धाराओं में से प्रथम 55 धाराएँ तो देश के व्यापारिक बैंकों पर लागू होती हैं जबकि धारा 56 देश के सहकारी बैंकों पर लागू होती है।

2

¼6½ **lEiw.kZ ns'k ds cSadksa ij ykxw (Effective on all Banks of the Country)** – भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम, 1949 प्रारम्भ में जम्मू–कश्मीर को छोड़कर देश के सभी भागों में लागू होता था किन्तु 1956 में संशोधन द्वारा जम्मू–कश्मीर के बैंकों पर भी लागू कर दिया गया। अब यह अधिनियम देश के सभी राज्यों के बैंकों पर समान रूप से लागू है।

¼7½ **vkikr vf/kdkjksa dk izko/kku (Provision of Emergency Rights)** – इस अधिनियम में केन्द्र सरकार को यह अधिकार है कि आवश्यकता पड़ने पर भारतीय रिजर्व बैंक (Reserve Bank of India) के द्वारा लिखित आवेदन पर वह इस अधिनियम के समस्त प्रावधानों अथवा कुछ प्रावधानों के क्रियान्विती को अधिकाधिक 60 दिनों तक स्थगित कर सकती है।

¼8½ **cSafdax ¼fu;eu½ vf/kfu;e] 1949 ikap Hkkxksa esa foHkkftr gS (Banking Regulation Act 1949 is Divided in Five Parts)** – भारतीय बैंकिंग नियमन अधिनियम को पांच भागों में विभाजित किया गया है, जिसका विवरण निम्न प्रकार है –

भाग–1	प्रारम्भिक धारायें (धारा 1 से 5ए तक)
Part - I	Preliminary (Sec. 1 to 5 A)
भाग–2	बैंकिंग कम्पनियों का व्यवसाय (धारा 6 से 36ए तक)
Part - II	Business of Banking Companies (Sec. 6 to 36 A)
भाग–2ए	प्रबन्ध पर नियन्त्रण (धारा 36 ए ए से 36 ए सी)
Part - II A	Control Over Management (Sec. 36AA to 36AC)
भाग–2बी	बैंकिंग कम्पनियों के कुछ कार्यों पर निषेध (धारा 36 ए डी)
Part - II B	Prohibition of Certain Activities in Relation to Banking Companies (Sec. 36AD)
भाग–2सी	बैंकिंग कम्पनियों के उपक्रमों का अर्जन (धारा 36 ए ई से 36 ए जे)
Part - IIC	Acquisition of the Undertaking of Banking Companies (Sec. 36AE to 36 AJ)
भाग–3	बैंकिंग कम्पनियों के व्यवसाय का निलम्बन एवं समापन (धारा 36बी से 45 तक)
Part - III	Suspension and Winding-up of Business of Banking Companies (Sec. 36B to 45)
भाग–3ए	समापन कार्यवाही को शीघ्रता से निपटाने के लिये विशेष प्रावधान (धारा 45ए से 45X तक)
Part -IIIA	Special Provision for Speedy Disposal of Winding-up Proceedings (Sec.45A to 45X)
भाग–3बी	बैंकिंग कम्पनियों के सम्बन्ध में निश्चित कार्यविधियों के सम्बन्ध में प्रावधान (धारा 45वाई से 45 जेड एफ तक)
Part -IIIB	Provision Relating to Certain Operations of Banking Companies (Sec.45Y to 45ZF)
भाग–4	विविध प्रावधान (धारा 46 से 55 ए तक)
Part - IV	Miscellaneous Provisions (Sec. 46 to 55A)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

भाग–5 सहकारी बैंकों पर लागू मुख्य प्रावधान (धारा 56)

Part - V Main Provisions as applicable to Co-operative Banks (Sec. 56)

बैंकों के राष्ट्रीयकरण से पूर्व यह अधिनियम भारत में स्थित बैंकिंग कार्य में लगी हुई सभी कम्पनियों पर लागू होता था। 18 जुलाई, 1969 को बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया था। इसके बाद उन्हें सार्वजनिक निगमों के रूप में बदला गया है और इन पर बैंकिंग कम्पनियाँ (उपक्रमों का अर्जन और अन्तरण) अधिनियम, 1970 लागू किया गया। इन बैंकों पर बैंकिंग नियमन अधिनियम की वे धारायें ही लागू होती हैं, जिनकी व्याख्या अधिनियम, 1970 में की गई है।

2-5 vf/kfu;e dk e[; izko/kku [Main Provision of the Act]

बैंकिंग (नियमन) अधिनियम, 1949 के मुख्य प्रावधान निम्नलिखित है –

2-5-1 cSafdx dEiuh dh ifjHkk"kk (Definination of Banking Company) –

इस अधिनियम की धारा 5 (सी) के अनुसार ''बैंकिंग कम्पनी'' वह कम्पनी है जो भारत में बैंकिंग व्यवसाय करे।

"Banking Comapny" means any company which transacts the business of Banking in India

धारा 5(सी) में यह कहा गया है कि बैंकिंग कम्पनी वह है जो बैंकिंग व्यवसाय करें लेकिन बैंकिंग व्यवसाय क्या है, इसे धारा 5 (बी) में समझाया गया है।

2-5-2 cSafdx 0;olk; dh ifjHkk"kk (Defination of Banking Business) –

धारा 5(बी) के अनुसार "बैंकिंग" व्यवसाय से आशय ऋण देने या विनियोजन के लिये जनता से जमायें या निक्षेप स्वीकार करना है, जिन्हें उनके मांगने पर या अन्य प्रकार चैक, ड्राफ्ट अथवा अन्य प्रकार की आज्ञा पर लौटाया जा सके।

"Banking" means the accepting, for the purpose of lending or investment of deposits of money from the public, repayable on demand or otherwise, and withdrawable by cheque, draft, order or otherwise.

2-5-3 ^cSad*] ^cSadj*] ^cSafdx* ;k ^cSafdx dEiuh* 'kCn dk iz;ksx vfuok;Z –

धारा 7 के अनुसार कोई भी कम्पनी जो इस प्रकार का व्यवसाय करती है उसे अपने नाम के साथ बैंक, बैंकर, बैंकिंग या बैंकिंग कम्पनी शब्द का प्रयोग करना अनिवार्य है। वर्ष 1963 में धारा 7 में संशोधन कर यह प्रतिबन्ध लगाया गया है कि बैंकिंग व्यवसाय के अलावा अन्य कार्य करने वाली कम्पनियाँ इन शब्दों (बैंक, बैंकर या बैंकिंग) का प्रयोग नाम के साथ नहीं कर सकेंगी।

इससे यह स्पष्ट है कि बैंकिंग कम्पनी वह कम्पनी है जिसकी स्थापना कम्पनी अधिनियम के तहत हो तथा बैंकिंग व्यवसाय में लगी हो। ध्यान देने योग्य बात यह है कि औद्योगिक या अन्य कम्पनियाँ अपने वित्तीय संसाधन जुटाने के लिये जनता से निक्षेप प्राप्त करती हैं, तो उन कम्पनियों का बैंकिंग कम्पनी नहीं कहा जायेगा क्योंकि ऐसी कम्पनियाँ बैंकिंग कारोबार नहीं करती हैं।

2-5-4 cSafdx dEiuh dk dk;Z (Business of Banking Companies) –

बैंकिंग (नियमन) अधिनियम की धारा 6 में उन समस्त कार्यों का उल्लेख किया गया है जिन्हें बैंक या बैंकिंग कम्पनी कर सकती है। एक बैंक निम्नलिखित कार्यों का सम्पादन कर सकता है –

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. जमाएं स्वीकार करना, ऋण देना, अग्रिम देना, अधिविकर्ष बिलों की कटौती तथा नकद साख के रूप में वित्तीय सहायता प्रदान करना।
2. साख–पत्रों का निर्गमन करना।
3. चैकों, ड्राफ्टों, गश्ती–पत्रों आदि का निर्गमन।
4. बहुमूल्य वस्तुओं को सुरक्षा हेतु स्वीकार करना।
5. अंशपत्रों एवं प्रतिभूतियों का क्रय–विक्रय करना।
6. विदेशी विनिमय व विदेशी बैंक नोट का क्रय–विक्रय करना।
7. ग्राहकों के आदेश पर प्रतिभूतियों का क्रय–विक्रय करना।
8. राज्य, स्वायत्तशासी संस्थाओं, व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूह के लिए अभिकर्ता का कार्य करना।
9. गारन्टी व क्षतिपूरक कार्यों का सम्पादन करना।
10. व्यक्तिगत व सार्वजनिक ऋणों के लिए अनुबन्ध करना व उसका निर्गमन करना।
11. निजी, सार्वजनिक, राजकीय व नगरपालिकाओं के अंशपत्रों, ऋण पत्रों, स्कन्ध पत्रों आदि की गारन्टी देना, उसके निर्गमन में भाग लेना, उनका अभिगोपन करना व इन कार्यों के लिए सम्बन्धित व्यक्तियों अथवा संस्थाओं को ऋण प्रदान करना।
12. अपने व्यवसाय के विकास व वृद्धि से सम्बन्धित कार्यों को करना।
13. अपनी सम्पत्ति व अन्य अधिकारों का विक्रय प्रबन्ध, विकास, विनिमय व विबन्धन।
14. केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिकृत अन्य कार्यों का सम्पादन।
15. सार्वजनिक कार्यों हेतु ऋण की स्वीकृति प्रदान करना।
16. निजी आवश्यकता की पूर्ति हेतु भवन निर्माण, देखभाल, सम्पत्ति का क्रय इत्यादि कार्य करना।

2-5-5 0;olk; ij çfrc/k (Prohibition of Trading) –बैंकिंग (नियमन) अधिनियम की धारा 8 में बैंकिंग संस्थाओं के निषिद्ध कार्यों का वर्णन किया गया है अर्थात् एक बैंक के द्वारा निम्नांकित कार्य नहीं किये जा सकते है –

1. बैंक, बैंकिंग कार्यों के अलावा अन्य कोई व्यवसाय नहीं कर सकता है।
2. बैंक, ऐसी कम्पनियों के अंशों एवं ऋणपत्रों को नहीं खरीद सकता है जिसमें उसके संचालकों एवं प्रबन्धकों का आर्थिक हित निहित हो।
3. प्रत्यक्ष या परोक्ष में वस्तुओं का क्रय–विक्रय करना निषिद्ध है।
4. बैंक अपने ग्राहकों की ओर से भी व्यापारिक व्यवहार नहीं कर सकते हैं और न ही व्यापारिक जोखिक उठा सकते हैं।
5. बैंक किसी व्यक्ति या संस्था को पूर्व निर्धारित राशि से अधिक का ऋण नहीं दे सकता है।
6. बैंक अधिनियम द्वारा निर्धारित समय से अधिक के लिए ऋण नहीं दे सकते है।

2-5-6 xj cfdx lEifÙk;ksa dk fuLrkj.k (Disposal of Non-Banking Assets) &अधिनियम की धारा 9 के अनुसार कोई भी बैंकिंग कम्पनी अपने कार्यालय भवन के अतिरिक्त अन्य किसी अचल सम्पत्ति को बिना रिजर्व बैंक की अनुमति से अपने पास सात वर्ष से अधिक अवधि के लिए रखने पर रोक है। रिजर्व बैंक की विशेष अनुमति से इस अवधि को 5 वर्ष के लिए और बढ़ाया जा सकता है

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

2-5-7 cSadks dk çcU/k (Management of the Banks) –अधिनियम में बैंकों के प्रबन्ध के सम्बन्ध में निम्नलिखित व्यवस्थायें है –

(i) (अ) अधिनियम की धारा 10 के अनुसार कोई भी बैंकिंग कम्पनी अपने प्रबन्ध संचालन के लिये ऐसे व्यक्ति को सम्मिलित नहीं कर सकती है, जो

(1) किसी अन्य व्यापारिक या औद्योगिक कम्पनी का संचालक हो,

(2) दिवालिया घोषित हो चुका हो,

(3) फौजदारी मामले में जेल जा चुका हो,

(4) अन्य व्यवसाय में संलग्न हो।

(ब) अधिनियम की धारा 16 के अनुसार ऐसे व्यक्ति को भी संचालक नहीं बनाया जा सकता है जो किसी अन्य बैंक का संचालक हो।

(ii) संचालक मण्डल में प्रोफेशनल या अन्य अनुभवी व्यक्तियों की नियुक्तियाँ (Board of Director to include persons with professional other experience)

अधिनियम की धारा 10A के अनुसार यह आवश्यक है कि बैंकिंग कम्पनी में कम से कम 51 प्रतिशत संचालक ऐसे होने चाहिए जिन्हें –

(i) लेखाशास्त्र (Accountancy)

(ii) कृषि एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था (Agriculture and Rural Economy)

(iii) बैंकिंग (Banking)

(iv) सहकारिता (Co-Operation)

(v) अर्थशास्त्र (Economics)

(vi) वित्त (Finance)

(vii) विधि (Law)

(viii) लघु उद्योग (Small Scale Industry)

अथवा अन्य ऐसे विषय जो रिजर्व बैंक की राय में बैंकिंग कम्पनी के लिये उपयोगी हो, में से किसी एक या अधिक विषयों का ज्ञान होना चाहिये। साथ ही कम से कम दो संचालक ऐसे भी होने चाहिये जिन्हें कृषि एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था, सहकारिता तथा लघु उद्योगों का ज्ञान एवं व्यावहारिक अनुभव होना चाहिये तथा उनका किसी उद्योग, व्यापार एवं वाणिज्य से सम्बन्धित संस्थाओं, कम्पनियों या फर्म में सारवान हित (Substantial Interest) नहीं होना चाहिए।

(iii) v/;{k dh fu;qfDr (Appointment of Chairman or President) – अधिनियम की धारा 10 B में यह व्यवस्था है कि प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी के लिये यह आवश्यक है कि उसमें एक पूर्णकालिक अध्यक्ष हो। अध्यक्ष का कार्यकाल संचालक मण्डल निश्चित करता है जो 5 वर्ष से अधिक नहीं हो सकता। संचालक मण्डल चाहे तो उस व्यक्ति को दुबारा अध्यक्ष बना सकता है। धारा 104 B में यह प्रावधान है कि निम्न व्यक्तियों को बैंकिंग कम्पनियों का अध्यक्ष नहीं बनाया जा सकता है –

(1) बैंकिंग कम्पनी की सहायक कम्पनी तथा पंजीकृत धर्मार्थ कम्पनी को छोड़कर अन्य कम्पनियों के संचालक।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(2) व्यापार, व्यवसाय या उद्योग में संलग्न फर्म में साझेदार या इनके स्वामी।

(3) कम्पनी या फर्म में सारवान हित रखने वाले व्यक्ति।

(4) व्यवसाय एवं पेशे में संलग्न व्यक्ति।

(5) व्यापारिक, वाणिज्यिक और औद्योगिक संस्था का संचालक, प्रबन्धक।

2-5-8 (i) fu;ktu ij ifrcU/k ,o jkd (Prohibitions and Restrictions on Employment) – बैंकिंग नियमन अधिनियम की धारा 10 के प्रावधान के अनुसार बैंकिंग कम्पनी –

(1) प्रबन्ध के लिये प्रबन्ध अभिकर्त्ता की नियुक्ति नहीं कर सकती है,

(2) किसी ऐसे व्यक्ति को नियोजन में नहीं रखेगी या नियुक्त नहीं करेगी जो –

(क) जो दिवालिया हो गया हो या पहले दिवालिया रहा हो या जिसने अपने लेनदारों को भुगतान करना बन्द कर दिया हो, अथवा

(ख) जो किसी चारित्रिक या आपराधिक मामले में न्यायालय द्वारा दण्डित हो चुका हो,

(ग) जिसका पारिश्रमिक रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की दृष्टि में ज्यादा हो,

(घ) जिसका पारिश्रमिक या उसका भाग कमीशन अथवा कम्पनी के लाभों में से हिस्से के रूप में हो,

(3) अधिनियम की धारा 16(1) किसी ऐसे व्यक्ति को नियुक्त नहीं करेगी जो अन्य किसी कम्पनी में संचालक हो या अन्य व्यवसाय या पेशे में सम्मिलित हो।

(ii) अधिनियम की धारा 10 [(5A)] में प्रावधान किया गया है कि प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी के लिये यह आवश्यक है कि अपने अध्यक्ष, प्रबन्ध संचालक, पूर्णकालिक संचालक एवं मुख्य कार्यकारी की नियुक्ति, पद से हटाने, पूनर्नियुक्ति करने से पूर्व रिजर्व बैंक से लिखित में अनुमति प्राप्त करें। धारा 36 ए के प्रावधान के अनुसार रिजर्व बैंक सार्वजनिक हित में किसी भी बैंक के उच्च अधिकारी को हटा सकता है। साथ ही धारा 36 बी के प्रावधान के अनुसार किसी बैंक की प्रबन्ध व्यवस्था में सुधार लाने के लिये अतिरिक्त संचालकों (अधिकतम 5 संचालकों) की नियुक्ति कर सकता है।

2-5-9 çnÙk i th ,o jf{kr dk"k (Paid-up Capital and Reserve Fund) –बैंकिंग अधिनियम, 1949 की धारा 11 में बैंकों की न्यूनतम पूंजी सम्बन्धी प्रावधानों का उल्लेख किया गया है। न्यूनतम पूँजी निश्चित करते समय भौगोलिक कार्यक्षेत्र, बैंक की स्थापना का स्थान व बैंक के ग्राहकों की आवश्यकताओं का विशेष रूप से ध्यान रखा गया है। इस सम्बन्ध में धारा 11 के प्रावधान निम्नलिखित है –

1- Hkkjr e lekefyr cd d fy; –

(1) बैंकिंग कम्पनी जिसके व्यापारिक कार्यालय एक से अधिक राज्यों (कलकत्ता व मुम्बई को छोड़कर) में हैं, **mudh inÙk i th ,o lp; dk"kk dk ;kx U;ure 5 yk[k #i;** होना चाहिये।

(2) बैंकिंग कम्पनी के कार्यालय कलकत्ता व मुम्बई के साथ–साथ एक से अधिक राज्यों में स्थापित हैं तो उनकी **inÙk i th o lp; dk"kk dk ;kx U;ure 10 yk[k #i;** का होना चाहिए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(3) बैंकिंग कम्पनी के समस्त कार्यालय एक ही राज्य में हो किन्तु कलकत्ता व मुम्बई शहरों में नहीं हो तो **inÙk iath o lp; dk"k dk ;kx** न्यूनतम निम्नलिखित होगा –

(अ) मुख्य व्यापारिक कार्यालय के लिये **1 yk[k :i;s**

(ब) मुख्य व्यापारिक कार्यालय के जिले में स्थापित प्रत्येक शाखा के लिये **10 gtkj :i;s**

(स) मुख्य व्यापारिक कार्यालय के अतिरिक्त अन्य जिलों में स्थापित प्रत्येक शाखा के लिये **25]000 #i;s**

(द) केवल एक स्थान पर व्यापारिक कार्यालय हो **50]000 :i;s**

(4) यदि समस्त व्यापारिक कार्यालय एक राज्य में स्थित हो तथा मुम्बई या कलकत्ता में भी व्यापारिक कार्यालय हों –

(अ) उनमें से एक या अधिक मुम्बई या कलकत्ता में स्थित हों – **5 yk[k #i;s**

(ब) मुम्बई व कलकत्ता को छोड़कर अन्य स्थानों पर स्थित प्रत्येक व्यापारिक कार्यालय के लिये – **25000 :i;s**

2- Hkkjr ds ckgj lekfefyr cSd ds fy;s &

(अ) यदि मुम्बई या कलकत्ता शहर या दोनों में इनका कार्यालय हो – **20 yk[k :i;s**

(ब) यदि मुम्बई या कलकत्ता शहर को छोड़कर अन्यत्र उनका कार्यालय हो **15 yk[k :i;s**

2-5-10 vf/kÑr] vfHknÙk ,oa inÙk iath esa vuqikr

(Ratio between Authorised Capital & Subscribed Capital and Paid-up Share Capital) –

इस अधिनियम की धारा 12 के अनुसार अधिकृत पूंजी, अभिदत्त पूंजी व प्रदत्त पूंजी में कम से कम 4 : 2 : 1 का अनुपात होना चाहिये। यदि भविष्य में बैंकिंग कम्पनी अपनी अधिकृत पूंजी बढ़ाती है तो रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित अवधि (अधिकतम दो वर्ष) में अपनी अभिदत्त व प्रदत्त पूंजी का समायोजन करना होगा।

2-5-11 va'k/kkfj;ksa dk erkf/kdkj (Voting Rights of Share Holders) –बैंक अपनी पूंजी एकत्रित करने के लिये समता अंशों का ही निर्गमन कर सकते हैं। इस अधिनियम की धारा 12(2) के अनुसार प्रत्येक अंशधारी को पूंजी के अनुपात में मत देने का अधिकार होता है लेकिन किसी भी अंशधारी को मुल मतदान के 10 प्रतिशत से अधिक मत देने का अधिकार नहीं होगा।

2-5-12 ykHkka'k forj.k ij ifrcU/k (Restrictions as to payment of Dividend) – इस अधिनियम की धारा 15 के अनुसार बैंकिंग कम्पनी के लिये यह आवश्यक है कि वह लाभांश वितरण से पूर्व अपनी सभी व्यय एवं हानि की व्यवस्था कर ले। इन व्ययों में प्रारम्भिक पूंजीगत व्यय भी सम्मिलित हैं जिनकी व्यवस्था करनी होगी। इस प्रावधान में यह भी स्पष्ट है कि लाभांश वितरण से पूर्व स्वीकृत प्रतिभूतियों के मूल्य में अपकर्ष के कारण होने वाली हानियों का अपलिखित करना जरूरी नहीं है। भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 की धारा 205, 206 व 207 भी बैंकिंग कम्पनी पर लागू होती हैं। अतः लाभांश वितरण के पूर्व इनकी पालना करना भी जरूरी है।

2-5-13 jf{kr Q.M esa gLrkUrj.k (Transfer to Reserve Fund) –इस अधिनियम की धारा 17(1) के अनुसार प्रत्येक कम्पनी को लाभांश की घोषणा करने से पूर्व लाभ–हानि खाते द्वारा बताये गये लाभों का कम से कम 20 प्रतिशत संचय फण्ड में हस्तान्तरण करना आवश्यक है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

रिजर्व बैंक की सिफारिश पर केन्द्रीय सरकार इस प्रावधान से किसी बैंकिंग संस्थान को छूट दे सकती है बशर्ते की कम्पनी के रक्षित फण्ड का शेष कम्पनी की प्रदत्त पूंजी तथा अंश प्रीमियम के बराबर हो।

2-5-14 udn dk"kkuikr (Cash Reserve Ratio or C. R. R.) –अधिनियम की धारा 18 में यह व्यवस्था की गई थी कि प्रत्येक अनुसूचित बैंक को अपनी समय जमाओं (Time Liabilities) का 2 प्रतिशत तथा माँग जमाओं (Demand Liabilities) का 5 प्रतिशत रिजर्व बैंक के पास नकद कोषों के रूप में रखना होगा। 29 मार्च, 1985 के एक संशोधन से इसे सभी बैंकों के लिये उनकी कुल जमाओं का 3 प्रतिशत कर दिया गया तथा रिजर्व बैंक को यह भी अधिकार मिल गया कि वह आवश्यकता पड़ने पर नकद कोषानुपात को कुल जमाओं का 15 प्रतिशत तक बढ़ा सकेगा।

रिजर्व बैंक द्वारा CRR में कई बार परिवर्तन किया जा चुका है। भारतीय रिजर्व बैंक ने देश की मुद्रा स्फीति के बढ़ते दबाव पर अंकुश लगाने के लिये 23 दिसम्बर, 2006 से ही नकद कोषानुपात CRR में कई चरणों में वृद्धि कर 30 अगस्त 2008 में 9 प्रतिशत कर दिया।

उसके बाद अमेरिका एवं यूरोपीय देशों के साथ–साथ विश्व के अन्य देशों में भी मंदी के दुष्प्रभावों को देखते हुए भारतीय रिजर्व बैंक ने भारतीय अर्थव्यवस्था को मंदी से बचाने के लिये अर्थव्यवस्था में मौद्रिक तरलता बढ़ाने के उद्देश्य से CRR में कई चरणों में कमी का दौर प्रारम्भ किया। प्रारम्भ में 5 अक्टूबर, 2008 से नकद कोषानुपात को घटाकर 8.5 प्रतिशत तथा उसके बाद कई चरणों में घटाते हुए रिजर्व बैंक ने 25.1.2011 को CRR को 6 प्रतिशत कर दिया गया है।

बैंकिंग नियमानुसार प्रत्येक बैंक को रिजर्व बैंक को मासिक सामयिक विवरण अगले माह की 15 तारीख तक भेजना होता है।

2-5-15 _.kk ,o vfxze ij ifrcU/k ,o fu;U=.k

(Restrictions and Control on Loan and Advances) –

(a) अधिनियम की धारा 20 के प्रावधान के अनुसार प्रत्येक बैंक पर ऋण एवं अग्रिम देने के सम्बन्ध में निम्न प्रतिबन्ध हैं –

(1) बैंक अपने स्वयं के अंशों की प्रतिभूति पर ऋण स्वीकार नहीं कर सकता।

(2) बैंक ऐसी कम्पनी या साझेदारी संस्था को ऋण स्वीकार नहीं कर सकता जिसमें किसी संचालक या कर्मचारी का हित या हिस्सा हो।

(3) बैंक किसी ऐसे व्यक्ति को ऋण नहीं दे सकता, जिसमें गारन्टी किसी संचालक ने दी हो।

(4) बैंक अपने संचालक को भी ऋण नहीं दे सकता।

(b) धारा 21 में बैंकिंग कम्पनियों की ऋण नीति को नियन्त्रित करने के लिये रिजर्व बैंक को अधि कार दिया गया है। रिजर्व बैंक सामान्यतः सभी बैंकों या किसी विशेष बैंक को आदेश दे सकता है कि किसी उद्देश्य विशेष के लिये निर्धारित सीमा तक निश्चित ब्याज दर के आधार पर ही ऋण दें। साथ ही यह भी निर्देश देता है कि किन उद्देश्यों के लिये ऋण दिये जायें व किन उद्देश्यों के लिये नहीं। सुरक्षा की सीमा व गारन्टी के सम्बन्ध में निर्देश दिया जा सकता है।

2-5-16 cfdx dEifu;k dk ykbl!l nuk (Licensing of Bankin Companies) – इस अधिनियम की धारा 22 (2) के अनुसार कम्पनी को रिजर्व बैंक के पास लिखित में आवेदन करना होता है। रिजर्व बैंक लाइसेन्स देने से पूर्व ऐसी कम्पनी की लेखा पुस्तकों की जाँच कर सकता है। धारा 22 (3) के अनुसार

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

रिजर्व बैंक किसी भी कम्पनी को लाइसेंस तभी प्रदान करता है जबकि वह निम्नलिखित शर्तें पूरी होने के सम्बन्ध में सन्तुष्ट हो जाता है–

(अ) कम्पनी अपने वर्तमान एवं भावी जमाकर्ताओं को उनकी राशि देय होने पर, पूरी राशि चुका सकती है।

(ब) कम्पनी का कार्य संचालन ऐसा नहीं चल रहा है और सम्भावना भी नहीं है कि जिससे वर्तमान एवं भावी जमाकर्ताओं का अहित हो।

(स) विदेशी कम्पनी है तो –

 (1) भारत में उस कम्पनी द्वारा व्यवसाय चलाना सार्वजनिक हित में होगा,

 (2) जिस देश की कम्पनी है उस देश की सरकार व वहाँ का कानून भारतीय रजिस्टर्ड बैंकिग कम्पनियो के विरूद्ध नहीं है,

 (3) विदेशी कम्पनियो पर लागू होने वाले देश के कानून या अधिनियम का पालन करेगी।

2-5-17 ub' 'kk[kk [kkyuk ,o LFkkukUrj.k

(Opening of New Branches and Transfering Existing Ones) –कोई भी स्थापित बैंकिग कम्पनी विस्तार के लिये अपनी नई शाखा खोलना चाहती है या किसी शाखा का स्थान परिवर्तित करना चाहती है तो इस अधिनियम की धारा 23 के तहत उसे रिजर्व बैंक से पूर्व अनुमति प्राप्त करनी होगी। लेकिन यदि कोई बैंकिग कम्पनी एक ही शहर या गाँव में शाखा के स्थान में परिवर्तन करना चाहती है या अस्थायी शाखा (अधिकतम एक माह के लिये) स्थापित करना चाहती है तो इसके लिये रिजर्व बैंक की पूर्व–अनुमति लेने की आवश्यकता नहीं है।

नई शाखा खोलने के लिए बैंकिग कम्पनी द्वारा रिजर्व बैंक के पास लिखित में आवेदन करना होता है। रिजर्व बैंक प्राप्त आवेदन पत्रों पर निर्णय लेते समय निम्नलिखित बातों पर विचार करता है –

(1) बैंकिग कम्पनी की वित्तीय स्थिति तथा इतिहास

(2) बैंकिग कम्पनी के प्रबन्ध का सामान्य स्वरूप

(3) पूंजी की पर्याप्तता एवं आय की सम्भावना

(4) इससे क्या सार्वजनिक हित होगा।

उक्त बातों पर सन्तुष्ट होने के बाद ही रिजर्व बैंक नई शाखा खोलने या स्थान परिवर्तन के सम्बन्ध में अनुमति प्रदान करता है।

2-5-18 o/kkfud rjy dks"kkuqikr (Statutory Liquidity Ratio or S.L.R.) –सुदृढ बैंकिग व्यवस्था के सिद्धान्तो के अनुसार बैंको के पास पर्याप्त तरल साधनो का होना आवश्यक है ताकि जनता का विश्वास जमाया जा सके। भारतीय बैंकिग (नियमन) अधिनियम, 1949 की धारा 24 के अनुसार प्रत्येक अनुसूचित बैंक को अपनी कुल जमाओ का कम से कम 20 प्रतिशत तरल कोषानुपात रखना अनिवार्य किया गया था जिसे 1974 के एक संशोधन से बढ़ाकर 25 प्रतिशत कर दिया गया। कालान्तर में वैधानिक तरल कोषानुपात में कई बार संशोधन कर घटाया और बढ़ाया है। मुद्रा स्फीति के बढ़ते दबाव पर नियंत्रण हेतु 2.1.2011 से SLR को 24 प्रतिशत कर दिया है।

बैंकिंग रेग्यूलेशन एक्ट, 1949 के अभी तक के प्रावधानों के अन्तर्गत वैधानिक तरल कोषानुपा SLR को न्यूनतम दर सीमा 25 प्रतिशत तथा अधिकतम दर सीमा 40 प्रतिशत थी। किन्तु 23 जनवरी 2007 के एक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

अध्यादेश द्वारा भारत सरकार ने इस अधिनियम में एक ऐतिहासिक परिवर्तन दर SLR की न्यूनतम सीमा को समाप्त कर दिया है इससे रिजर्व बैंक को किसी भी सीमा तक SLR को नीचे निर्धारित करने का अधिकार मिल गया है।

2-5-19 Hkkjr esa lEifÙk (Property in India) –

1. इस अधिनियम की धारा 25 (1) का प्रावधान विदेशी बैंकिंग कम्पनियों पर लागू होता है जिन्हें अपनी समस्त मांग और अवधि दायित्व की 75 प्रतिशत सम्पत्ति भारत में रखना आवश्यक बनाया गया है। इस धारा का मुख्य उद्देश्य भारतीय पूंजी को विदेशों में निर्गमित होने से रोकना है। इसके लिये प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को अपनी तिमाही रिपोर्ट रिजर्व बैंक की भेजनी होती है। इन परिसम्पत्तियों में केवल उन्हीं प्रतिभूतियों, प्रतिज्ञा–पत्रों तथा विपत्रों का सम्मिलित किया जाता है जिनकी पुर्नःकटौती रिजर्व बैंक से की जा सकती है।

2. प्रत्येक बैंक को अधिनियम की धारा 25 (3) (सी) के अन्तर्गत प्रत्येक वर्ष के अन्त के 30 दिनों के अन्दर अपनी भारत में स्थित समस्त शाखाओं के ऐसे खातों की सूची भेजनी पड़ती है। यह सूची रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित विधि व प्रपत्र में भेजी जाती है। स्थायी निक्षेप के सम्बन्ध में खातों की अवधि की गणना परिपक्व तिथि से की जाती है।

2-5-20 vlapkfyr gksus okys [kkrksa dh lwpuk (Return of Unoperated Accounts) &अधिनियम की धारा 26 के प्रावधान के अनुसार प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को प्रत्येक वर्ष की समाप्ति के 30 दिनों के भीतर भारत में स्थित समस्त शाखाओं के ऐसे खातों का विवरण निर्धारित प्रपत्र में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया को भेजना पड़ता है जिनमें पिछले 10 वर्षों से कोई व्यवहार नहीं हो रहा है। स्थायी निक्षेप के सम्बन्ध में खातों की अवधि की गणना परिपक्व तिथि से की जाती है।

2-5-21 ekfld i=] vU; i= rFkk lwpuk,a ekaxus dk izko/kku

(Monthly Return and Power to Call for Other return and Information) &बैंकिंग अधिनियम की धारा 27 में प्रावधान किया गया है कि प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को अधिनियम के चाहे गये समस्त प्रपत्र व सूचनायें समय–समय पर रिजर्व बैंक के पास भेंजे। साथ ही रिजर्व बैंक किसी भी बैंक को किसी भी प्रकार की सूचना भेजना के लिये भी कह सकता है।

2-5-22 lwpuk izdk'ku dk vf/kdkj (Power to Publish Information) &अधिनियम की धारा 28 में यह प्रावधान किया गया है कि रिजर्व बैंक जनहित में प्राप्त किसी सूचना को प्रकाशित कर सकता है।

2-5-23 [kkrs ,oa fpëk (Account and Balance Sheet) -

1. अधिनियम की धारा 29 (1) के अन्तर्गत प्रत्येक बैंक के लिए यह आवश्यक है कि वे अन्तिम खाते व्यापारिक वर्ष के अन्तिम दिवस पर तृतीय अनुसूची में निर्धारित प्रपत्र के अनुसार बनाने होते है।

2. धारा 29 (2) के अनुसार अन्तिम खातों पर बैंक के मैनेजर अथवा वरिष्ठ अधिकारी तथा कम से कम तीन संचालकों के हस्ताक्षर होने चाहिये। संचालकों की संख्या तीन से कम होने पर सभी संचालकों के हस्ताक्षर होने चाहिए।

3. विदेशी बैंकों के लिये केवल भारत में जो प्रधान अधिकारी हैं, के हस्ताक्षर ही पर्याप्त माने जाते हैं, उन्हें संचालकों के हस्ताक्षर कराने की आवश्यकता नहीं है।

2-5-24 vads{k.k (Audit) &

1. अधिनियम की धारा 30(1) में यह प्रावधान किया गया है कि धारा 29 में तैयार किये गये अन्तिम

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

खातों का अंकेक्षण कराना आवश्यक है। यह अंकेक्षण भारतीय कम्पनी अधिनियम 1956 में दिये गये प्रावधानों के अनुसार समुचित योग्यता रखने वाले अंकेक्षकों द्वारा ही किया जाना चाहिये।

2. अधिनियम की धारा 30 (1-A) में यह प्रावधान किया गया है कि प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी को अंकेक्षक अथवा अंकेक्षकों की नियुक्ति, पुर्नः नियुक्ति अथवा हटाने से पहले रिजर्व बैंक की अनुमति लेनी होगी।

3. अधिनियम की धारा 30 (1-B) में यह प्रावधान किया गया है कि यदि रिजर्व बैंक जमाकत्ताओं अथवा जनहित अथवा बैंकिंग कम्पनी के हित में उपर्युक्त समझती है तो वो बैंकिंग कम्पनी के खातों का विशेष अंकेक्षण उस अवधि के लिए करा सकता है जिसके लिए रिजर्व बैंक उपर्युक्त समझता है। ऐसे विशेष अंकेक्षक को रिजर्व बैंक के निर्देशों की पालना करनी होगी तथा अपनी रिपोर्ट रिजर्व बैंक को तथा एक प्रति बैंकिंग कम्पनी को प्रेषित करनी होगी।

4. अधिनियम की धारा 30(1-C) में यह प्रावधान किया गया है कि विशेष अंकेक्षण के व्यय बैंकिंग कम्पनी द्वारा देय होंगे।

2-5-25 i=k dk iLrqrhdj.k (Submission of Returns) -अधिनियम की धारा 31 के प्रावधान के अनुसार प्रत्येक बैंक को अपने अंकेक्षित अन्तिम खातों की तीन प्रतियाँ आगामी 31 मार्च तक रिजर्व बैंक के पास भेजनी होती हैं। रिजर्व बैंक उचित समझता है तो इस अवधि में 3 माह की बढ़ोतरी कर सकता है।

2-5-26 [kkrs ,oa fpës dh ifr;k jftLVªkj dks i{k.k

(Copies of Balance Sheets and Accounts to be Sent to Registrar) &अधिनियम की धारा 32 के अनुसार अन्तिम खातों एवं अंकेक्षकों के प्रतिवेदन की प्रत्येक की तीन–तीन प्रतियाँ कम्पनियों के पंजीयक कार्यालय में प्रेषित करने के सम्बन्ध में प्रावधान है।

2-5-27 Hkkjr ds ckgj lekefyr cSfdx dEiuh ds vdsf{kr fpës dk inZ'ku

(Display of Audited Balance Sheet by Companies Incorporated Outside India) &धारा 33 में यह प्रावधान किया गया है कि विदेशी बैंकों के लिए भी यह आवश्यक है कि वह अपने अन्तिम खातों की एक प्रति बैंक द्वारा ऐसे स्थान पर लटका दे जहाँ से बैंक में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति देख सके।

2-5-28 xksiuh; iÑfr ds nLrkostks dh lpuk

(Production of Documents of Confidential Nature) &अधिनियम की धारा 34-A में यह प्रावधान किया गया है कि कोई भी बैंकिंग कम्पनी ऐसे दस्तावेजों को प्रस्तुत करने से मना कर सकती है जो गोपनीय प्रकृति के है और ऐसे दस्तावेज सूचना न देने की गोपनीयता को भंग करते हो।

2-5-29 fujh{k.k (Inspection) –

1 अधिनियम की धारा 35 (1) के अन्तर्गत बैंकिंग संस्थाओं के सामयिक निरीक्षण करने का रिजर्व बैंक को अधिकार दिया गया है। रिजर्व बैंक स्वयं अपनी प्रेरणा से या केन्द्रीय सरकार के आदेश के तहत किसी भी बैंक की लेखा पुस्तकों की जाँच कर सकता है।

2 धारा 35(1)(a) के प्रावधान के अनुसार बैंकिंग कम्पनी के अनुरोध करने पर उसकी रिपोर्ट रिजर्व बैंक को देनी होगी।

3 धारा 35 (2) में प्रावधान किया गया है कि बैंकिंग कम्पनी के प्रत्येक संचालक या अधिकारी या कर्मचारी का यह कर्त्तव्य है कि वह निरीक्षण अधिकारी के सम्मुख चाही गई समस्त सूचनायें या प्रपत्र समय पर प्रस्तुत करें।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

4 धारा 35 (3) में यह प्रावधान किया गया है कि निरीक्षण अधिकारी बैंक के किसी भी संचालक/ अधिकारी / कर्मचारी को शपथ दिलाकर उसकी जाँच कर सकता है।

5 धारा 35 (4) में यह प्रावधान किया गया है कि रिजर्व बैंक के प्रतिवेदन के आधार पर यदि केन्द्र सरकार जमाकत्ताओं के हितों के लिए उपर्युक्त समझती है तो सम्बन्धित बैंक को रिजर्व बैंक द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट पर एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करने का कह सकती है इसके पश्चात् भी यदि केन्द्र सरकार को यह उपर्युक्त प्रतीत होता है तो

(अ) बैंकिंग कम्पनी पर आगे जमाएँ प्राप्त करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है।

(ब) रिजर्व बैंक को धारा 38 के अन्तर्गत बैंकिंग कम्पनी के समापन की कार्यवाही करने के लिए कह सकती है।

6 धारा 35 (5) में यह प्रावधान किया गया है कि केन्द्रीय सरकार बैंकिंग कम्पनी को समुचित सूचना देकर रिजर्व बैंक द्वारा प्रस्तुत की गई जाँच रिपोर्ट को प्रकाशित भी करा सकती है।3

7. रिजर्व बैंक अधिनियम में रिजर्व बैंक को निम्न प्रकार से निरीक्षण करने के अधिकार प्रदान किये गये है :

¼v½ **lkekU; fujh{k.k (General Inspection) &**वर्ष में एक बार प्रत्येक देशी और विदेशी बैंक का रिजर्व बैंक सामान्यतः निरीक्षण करवाता है। विदेशी बैंकों का केवल भारत स्थित शाखाओं का निरीक्षण किया जाता है।

¼c½ **fo'k"k fujh{k.k (Special Inspection) &**

कुछ विशेष परिस्थितियों में रिजर्व बैंक सामान्य निरीक्षणों के अतिरिक्त भी बैंकों का विशेष निरीक्षण करवाता है। ये निर्णय निम्न कारणों से करवाएँ जाते है –

(i) नवीन शाखाओं की स्थापना अथवा पुरानी शाखाओं के स्थानान्तरणके समय

(ii) दो बैंकों के समामेलन के अवसर पर

(iii) लाइसेंस प्रदान करने से पूर्व अथवा

(iv) समामेलन, एकीकरण व व्यवसाय स्थगन के आदेशों को जारी करने से पूर्व

(v) धारा 35(ए), 36 व 37 के अन्तर्गत निर्देशों के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में।

8. जब रिजर्व बैंक किसी बैंक का निरीक्षण करवाता है तो उसे सम्बन्धित बैंक के पास निरीक्षण की एक प्रति अनिवार्यतः भेजनी पड़ती है।

9. यदि कोई बैंक निरन्तर चैतावनी अथवा सुझावों की अवहेलना करता जाता है तो रिजर्व बैंक भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम की धारा 38 के अन्तर्गत उस बैंक के कार्य समापन के सम्बन्ध में उच्च न्यायालय में एक प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर सकता है। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक, बैंकिंग (नियमन) अधिनियम की धारा 35 (4) (बी) के अन्तर्गत न्यायालय में बैंकिंग कम्पनियों के निस्तारण के सम्बन्ध में आवेदन प्रस्तुत कर सकता है। न्यायालय द्वारा रिजर्व बैंक को निस्तारक नियुक्त किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त धारा 44 में यह भी प्रावधान है कि ऐसी बैंकिंग कम्पनी को जिसे धारा 22 के अन्तर्गत लाईसेन्स प्रदान किया गया है, ऐच्छिक समापन उस समय तक नहीं किया जा सकता जब तक कि रिजर्व बैंक लिखित मेंइस आशय का प्रमाण न दे दे कि उक्त बैंकिंग कम्पनी अपने समस्त दायित्वों का भुगतान करने में समर्थ है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

2-5-30 fjtoZ cSad dk funsZ'ku dk vf/kdkj (Power of the Reserve Bank to Give Directions) &

अधिनियम की धारा 35-A में प्रावधान किया गया है कि रिजर्व बैंक को बैंकिंग कम्पनी द्वारा प्रतिवेदन देने पर या स्वयं अपने विवेक से धारा 35 (1) में दिये गये निर्देशन को परिवर्तित अथवा निरस्त कर सकती है। यदि रिजर्व बैंक को यह उचित प्रतीत होता है कि ऐसा करना जनहित में या बैंकिंग पॉलिसी के हित में है।

2-5-31 izcU/k lapkyd dh fu;qfDr ds lEcU/k esa izko/kku

(Provision Relating to Appointments of Managing Direction etc.) –धारा 55-B के प्रावधान के अनुसार किसी भी बैंकिंग कम्पनी के अध्यक्ष, प्रबन्ध संचालक, संचालक अथवा मुख्य कार्यकारी अधिकारी की नियुक्ति, पुर्नः नियुक्ति अथवा पद की समाप्ति तब तक प्रभावी नहीं होगी जब तक कि रिजर्व बैंक की पुर्व सहमति नहीं ली गई हो।

2-5-32 fjtoZ cSad ds vfrfjDr 'kfDr;k¡ ,oa dk;Z

(Further Power and Functions of Reserve Bank) –(अ) धारा 36 के अनुसार रिजर्व बैंक को निम्नलिखित शक्तियाँ एवं अधिकार प्राप्त है

(1) किसी बैंक या सभी बैंकों को **fo'ks"k lkSns u djus dh psrkouh** दे सकता है या प्रतिबन्ध लगा सकता है।

(2) किसी भी बैंक को **_.k nsdj lgk;rk** प्रदान कर सकता है।

(3) किसी भी बैंक की **lapkyd e.My dh lHkk** बुलाने का अधिकार है।

(4) बैंक के किसी **vf/kdkjh dks fjtoZ cSad dk;kZy; esa fopkj&foe'kZ** हेतु बुलाना।

(5) रिजर्व बैंक अपने अधिकारी को किसी भी बैंक के **lapkyd e.My dh lHkk esa mifLFkr gksus** व अपने विचार प्रस्तुत करने का आदेश दे सकता है व सभा की कार्यवाही की रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिये कह सकता है।

(6) रिजर्व बैंक किसी भी बैंक को यह आदेश दे सकता है कि रिजर्व बैंक के **fo'ks"k vf/kdkjh dks lapkyd e.My** की सभा की सूचना देवे।

(7) रिजर्व बैंक निरीक्षण के पश्चात् **cSad ds izcU/k esa ifjorZu djus dk vkns'k** दे सकता है।

(8) **/kkjk 36** के अनुसार रिजर्व बैंक किसी भी बैंक में उसके द्वारा भेजे गये विवरणों की **lR;rk dh tk¡p gsrq vf/kdkjh** नियुक्त कर सकता है।

(ब) अधिनियम की धारा 44 ए के प्रावधन के अन्तर्गत यदि किन्हीं बैंकिंग कम्पनीयों का एकीकरण होने का आवेदन रिजर्व बैंक के पास आया है तो उन्हें सहायता प्रदान की जा सकती है।

(स) अधिनियम की धारा 18(1)(3) के अन्तर्गत किसी बैंकिंग कम्पनी को ऋण या अग्रिम देकर सहायता प्रदान कर सकती है।

2-5-33 cSafdx dEiuh ds lapkydksa rFkk vU; O;fDr;ksa dks gVkus dk fjtoZ cSad dk vf/kdkj (Power of Reserve Bank to Remove Managerial and Other Persons of a Banking Comapny)&अधिनियम की धारा 36AA में यह प्रावधान किया गया है कि रिजर्व बैंक, बैंकिंग कम्पनी के किसी अध्यक्ष, संचालक अथवा मुख्य कार्यकारी अधिकारी, अथवा अधिकारी या कर्मचारी का कार्य जमाकमर्ताओं के हित के विरूद्ध है तो उन्हें सुनवाई का उचित अवसर देकर पद से हटा सकती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

2-5-34 vfrfjDr lapkyd®a dh fu;fDr djus dk fjtoZ cSad dk vf/kdkj

(Power of Reserve Bank to Appoint Additional Directors)-अधिनियम की धारा 36AB के प्रावधान के अनुसार रिजर्व बैंक की राय में जमाकत्ताओं के या जनहित में आवश्यक समझती हो तो किसी बैंकिंग कम्पनी में अतिरिक्त संचालकों की नियुक्ति समय–समय पर किसी भी तिथि से लिखित में कर सकती है।

2-5-35 cSadks ds lEcU/k esa fuf"k) dk;Z

(Prohibition of Certain Activities in Relation to Banking Companies)&

धारा 36AD के प्रावधान के अनुसार

(1) कोई भी व्यक्ति –

- (a) किसी अन्य व्यक्ति को बैंक भवन में जाने अथवा पास आने या किसी कर्मचारी को कार्य करने से नहीं रोकेगा।
- (b) ऐसा प्रदर्शन या कार्य बैंक भवन में नहीं करेगा जिसके परिणाम स्वरूप बैंक के कामकाज में बाधा आये या आने की संभावना हो।
- (c) ऐसा कार्य नहीं करेगा जिससे कि बैंकों पर से जमाकर्ताओं का विश्वास डगमगा जाये।

(2) उपर्युक्त प्रावधानों का उल्लंघन करने पर 6 माह का कारावास अथवा एक हजार रूपये का अर्थदण्ड अथवा दोनों सजाएं दी जा सकती हे।

2-5-36 dqN ekeyksa esa cSafdax dEiuh dk vf/kxg.k

(Acqusition of the Undertaking of Banking Companies in Certain Cases) &

(1) अधिनियम की धारा 36 AE में प्रावधान किया गया है कि केन्द्रीय सरकार, रिजर्व बैंक से प्राप्त रिपोर्ट के आधार पर संतुष्ट है कि –

- (a) बैंकिंग कम्पनी ने धारा 21 या धारा 35 A के अन्तर्गत दिये गये निर्देशों की पालना करने में एक से अधिक बार असफल रहा है।
- (b) जमाकर्ताओं के हितों के विरूद्ध कार्य किया जा रहा है तो
  - (i) बैंकिंग कम्पनी के जमाकत्ताओं के हित में या
  - (ii) बैंकिंग पॉलिसी के हित में है तो ऐसी बैंकिंग कम्पनी का व्यवसाय रिजर्व बैंक की सहमति से अधिग्रहण कर सकती है।

(2) अधिनियम की धारा 36 AF में यह प्रावधान किया गया है कि धारा 36AE में अधिग्रहित बैंकिंग कम्पनी का व्यवसाय चलाने के लिए केन्द्रीय सरकार, रिजर्व बैंक की सलाह से कोई योजना क्रियान्वित कर सकती है।

(3) अधिनियम की धारा 36 AG में अधिग्रहित बैंकिंग कम्पनी के अंशधारियों को क्षतिपूर्ति देने का प्रावधान किया गया है।

2-5-37 cSafdax dEiuh ds O;olk; dk fuyEcu

(Suspension of Business of a Banking Comapnies) –अधिनियम की धारा 37(1) में यह प्रावधान किया गया है कि किसी बैंकिंग कम्पनी के व्यवसाय का निलम्बन मात्र उच्च न्यायालय द्वारा

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

किया जा सकता है बशर्ते रिजर्व बैंक की इसमें सहमति हो।

2-5-38 cfdx dEiuh d 0;olk; dk lekiu (Winding up of Business of a Banking Companies)

(i) अधिनियम की धारा 38(1) में प्रावधान है कि किसी भी बैंकिंग कम्पनी का समापन उच्च न्यायालय के आदेश से ही किया जा सकता है। यह समापन भारतीय कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 391, 392, 433 तथा 583 तथा बैंकिंग नियमन अधिनियम की धारा 37(1) के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए किया जायेगा, यदि

(a) बैंक अपने ऋण के भुगतान में त्रुटि करता है, या

(b) रिजर्व बैंक द्वारा धारा 37 में किसी बैंकिंग कम्पनी के निलम्बन के लिए आवेदन किया गया हो।

(ii) अधिनियम की धारा 38(2) में यह प्रावधान किया गया है रिजर्व बैंक किसी बैंकिंग कम्पनी के समापन के लिए तभी प्रार्थना करेगा जब धारा 35 (4)(b) के अन्तर्गत केन्द्र सरकार द्वारा उच्च न्यायालय में किसी बैंकिंग कम्पनी के समापन के लिए आवेदन करने का कहा गया हो।

(iii) अधिनियम की धारा 38(3) में यह प्रावधान किया गया है कि रिजर्व बैंक किसी बैंकिंग कम्पनी के समापन के लिए तभी प्रार्थना करेगा, जबकि –

(iv) यदि बैंकिंग कम्पनी ने

(i) न्यूनतम चुकता पूँजी तथा कोष के प्रावधानों की पालना करने में असफल हो गया हो जो कि धारा 11 में वर्णित है।

(ii) अधिनियम की धारा 22 में वर्णित लाईसेन्स से सम्बन्धित प्रावधानों की पालना करने में विफल रहा हो।

(iii) धारा 34(4)(a) या 42 (3-A)(b) के प्रावधानों के अन्तर्गत किसी बैंकिंग कम्पनी को नई जमाओं को स्वीकार करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया हो।

(iv) धारा 38 (4) के प्रावधान के अनुसार कोई भी बैंक ऋण के भुगतान के तभी अयोग्य समझा जाता है जबकि –

(अ) रिजर्व बैंक के कार्यालय वाले स्थान पर स्थापित बैंक ऋण के मांग की दो दिन तक पूर्ति नहीं कर पाता है।

(ब) रिजर्व बैंक का कार्यालय न होने वाले स्थान पर स्थापित बैंक ऋण के भुगतान की मांग की 5 दिन तक पूर्ति नहीं करता है।

2-5-39 cd iy[kk o iLrdk dk lk{; d :i e ekU;rk

(Recognition of Banks Documents and Books Account as an Evidence) –अधिनियम की धारा 45F के अन्तर्गत बैंक के हिसाब की पुस्तकों व उनकी प्रतिलिपियों को साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। जो प्रतिलिपियां प्रस्तुत की जाती है वे मूल प्रविष्टियाँ बैंक पुस्तकों में विद्यमान है इस आशय का प्रमाण–पत्र आवश्यक रूप से देना होता है तथा इस प्रकार की प्रविष्टियों को बैंकिंग अधि ानियम के अन्तर्गत प्रमाणित माना जाता है।

2-5-40 n.M 0;oLFkk (Penalty) –भारतीय बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949 के प्रावधानों के प्रतिकूल कार्य करने वाले व्यक्तियों को इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार निम्न प्रकार से दण्डित किया जा सकता है –

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. अधिनियम की धारा 46 (1) के अनुसार किसी भी व्यक्ति द्वारा गलत बात को जान–बूझकर सही बताने पर या किसी विवरण, चिट्ठा या अन्य प्रपत्र में किसी तथ्य को प्रकट न करने पर तीन वर्ष तक की कैद व आर्थिक दण्ड से दण्डित किया जा सकता है।

2. अधिनियम की धारा 46 (2) के अनुसार यदि कोई व्यक्ति प्रदर्शित करने योग्य सूचनायें, प्रपत्र, पुस्तकें नहीं देता या निरीक्षण में निरीक्षक को सहयोग प्रदान नहीं करता है तो प्रत्येक त्रुटि पर 2,000रु. तक का आर्थिक दण्ड लगाया जा सकता है। साथ ही लगातार त्रुटि जारी रखने पर 100रू. प्रतिदिन का अतिरिक्त दण्ड भी लगाया जा सकता है।

3. अधिनियम की धारा 46 (3) के अनुसार यदि कोई संचालक या अधिकारी धारा 35 (4ए) के विरूद्ध निक्षेप प्राप्त करता है तो उसे उसकी दुगुनी राशि तक आर्थिक दण्ड लागया जा सकता है। यदि सिद्ध हो जाता है कि यह त्रुटि उसकी जानकारी में नहीं थी उसने इसे रोकने का उचित प्रयास किया था, तो वह दण्ड का भागी नहीं होगा।

4. अधिनियम की धारा 46 (4) के अनुसार इस अधिनियम की किसी धारा या नियम की अवहेलना करने पर संचालक, अधिकारी या त्रुटि के जिम्मेदार व्यक्ति पर 50,000 रूपये तक या राशि के दुगने तक जो भी अधिकतम हो, तक का अर्थदण्ड लगाया जा सकता है तथा त्रुटि लगातार जारी रहने पर 2500 रू. प्रतिदिन तक का अर्थदण्ड भी लगाया जा सकता है।

2-5-41 v/;{k lapkyd bR;kfn dk tulsod gksuk

(Chairman, Director etc. to be Public Servent)&अधिनियम की धारा 46-A में प्रावधान किया गया है कि प्रत्येक बैंकिंग कम्पनी का अध्यक्ष, प्रबन्ध संचालक, संचालक, अंकेक्षक, निस्तारक, मैनेजर तथा कर्मचारी भारतीय दण्ड संहिता के अध्याय IX के अन्तर्गत जनसेवक की परिभाषा में आयेंगे।

2-5-42 'kkfLr vkjksfir djus dk vf/kdkj (Power of Reserve Bank to Impose Penalty) & अधिनियम की धारा 47-A में प्रावधान किया गया है कि यदि बैंकिंग कम्पनी धारा 46(3) अथवा (4) के अन्तर्गत कोई अपराध किया जाता है तो रिजर्व बैंक को शास्ति आरोपित करने का अधिकार होगा।

2-5-43 cSafdax dEiuh ds uke esa ifjorZu (Change of Name by a Banking Comapny) &

अधिनियम की धारा 49-B में प्रावधान किया गया है कि केन्द्रीय सरकार किसी बैंकिंग कम्पनी के नाम में परिवर्तन रिजर्व बैंक के अनापत्ति प्रमाण–पत्र मिलने पर ही कर सकेगी। यह प्रावधान कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 21 के अध्यधीन होंगे।

2-6 Hkkjrh; cSafdax ¼fu;eu½ vf/kfu;e] 1949 ,oa Hkkjrh; fjtoZ cSad&भारतीय बैंकिंग नियमन अधिनियम, 1949 में भारतीय रिजर्व बैंक को बैंकिंग व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालन कराने व नियन्त्रण व्यवस्था के लिये व्यापक अधिकार दिये गये हैं। इस अधिनियम में आवश्यकतानुसार समय–समय पर संशोधन भी किये जाते रहे हैं। इस सम्बन्ध में रिजर्व बैंक को दिये गये कुछ अधिकारों का उल्लेख पूर्व में इस अधिनियम मे मुख्य प्रावधानों में किया गया है। रिजर्व बैंक को दिये गये कुछ महत्वपूर्ण अधिकार निम्नलिखित है –

1- **/kkjk 6** के अनुसार किसी बैंक की न्यूनतम पूंजी तथा रिजर्व के सम्बन्ध में भी **fjtoZ cSad dk fu.kZ; vfUre** होता है।

2- **/kkjk 10** के अनुसार किसी बैंक के **v/;{k] lapkyd] eSustj dks gVkus dk fjtoZ cSad dk fu.kZ; vfUre** होता हैं।

3- **/kkjk 12** के अनुसार रिजर्व बैंक किसी बैंक को प्रदत्त पूंजी व अधिकृत **iwath lEcU/kh fu;eksa dh ikyuk** से 2 वर्षों तक मुक्ति दे सकता है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

4- **/kkjk 17** के अनुसार रिजर्व बैंक किसी बैंकिंग कम्पनी को अपने लाभों की 20 प्रतिशत राशि **jf{kr Q.M e gLrkUrfjr djkù** सम्बन्धी प्रावधान में छूट दिलाने के लिये केन्द्रीय सरकार को सिफारिश कर सकता है।

5- **/kkjk 19** के अनुसार रिजर्व बैंक किसी भी बैंक को **fon'kk e dk;l dju d fy; lgk;d dEiuh cuku dh vuefr inku** कर सकता है।

6- **/kkjk 20** के अनुसार रिजर्व बैंक जमाकर्ताओं के अहित होने की स्थिति में किसी भी बैंक को आगे **_.k u nu ;k 'krk d lkFk _.k nu dk vkn'k** दे सकता है

7- **/kkjk 21** के अनुसार रिजर्व बैंक जनहित में किसी भी बैंक या समस्त बैंक के लिये **vfxe fu;U=.k dju gr ubl uhfr** बना सकता है।

8- **/kkjk 22** के अनुसार रिजर्व बैंक को बैंकिंग कम्पनियों को **ykblUl nu o bl jí** करने का अधिकार है।

9- **/kkjk 23** के अनुसार रिजर्व बैंक से बैंकों को **'kk[kk foLrkj ;k LFkkukUrj.k d fy; vuefr yuk** अनिवार्य है।

10- **/kkjk 26** के अनुसार प्रत्येक बैंक के लिये आवश्यक है कि हर वर्ष के अन्त में 30 दिनों के भीतर उन खातों का **fooj.k fuf'pr Qke** में रिजर्व बैंक के पास भेजे जिनमें पिछले 10 वर्षों से कोई व्यवहार नहीं हुआ।

11- **/kkjk 27** के अनुसार बैंकों के लिये आवश्यक है कि वे इस अधिनियम के तहत चाहे गये **leLr i=o lpuk; le;≤ ij fjtoc cd** के पास भेजें। साथ ही रिजर्व बैंक किसी भी बैंक को किसी भी प्रकार की सूचना भेजने के लिये भी कह सकता है।

12- **/kkjk 28** के अनुसार रिजर्व बैंक जनहित में प्राप्त किसी भी **lpuk dk idkf'kr** कर सकता है।

13- **/kkjk 38** के अनुसार रिजर्व बैंक न्यायालय में विशेष अवस्थाओं में किसी **cd d lekiu d fy; vkonu iLrr** कर सकता है।

14- **/kkjk 39** के अनुसार किसी बैंक के विघटन की दशा में **fuLrkjd fu;Dr** कर सकता है।

15- **/kkjk 45** के अनुसार रिजर्व बैंक को किसी बैंकिंग कम्पनी को ऋण स्थगन काल (Moratorium) स्वीकृत करने तथा **,dhdj.k dh ;ktuk** तैयार कर केन्द्रीय सरकार को अनुमोदन हेतु भिजवाने का अधिकार है।

2-7 **dUnh; ljdkj dk vf/kdkj (Power to Central Government)** – बैंकिंग नियमन अधिनियम के तहत केन्द्रीय सरकार को निम्नलिखित अधिकार है –

(1) **/kkjk 22¼5½** के प्रावधान के अनुसार रिजर्व बैंक द्वारा किसी बैंक का लाइसेन्स रद्द करने पर बैंक को 30 दिन के भीतर केन्द्रीय सरकार के पास अपील करने का अधिकार होता है और इस सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार का निर्णय अन्तिम होता है।

(2) **/kkjk 44,¼7½** – केन्द्रीय सरकार रिजर्व बैंक के परामर्श से जनहित में दो या दो से अधिक बैंकिंग कम्पनियों के एकीकरण के लिये कह सकती है।

(3) **/kkjk 45 ¼2½** – केन्द्रीय सरकार रिजर्व बैंक की सिफारिश पर अधिक से अधिक 6 माह के लिये किसी भी बैंक को विलम्बकाल (Moratorium) दे सकती है।

(4) **/kkjk 52 ¼1½** – रिजर्व बैंक से परामर्श करके बैंकिंग अधिनियम को लागू करने के लिये नियम बनाकर गजट में प्रकाशित कर सकती है। नियमों की व्याख्या भी कर सकती है। नियमों में परिवर्तन, परिवर्द्धन या संशोधन कर सकती है।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(5) **/kkjk 53 ¼1½** – केन्द्रीय सरकार रिजर्व बैंक की सलाह से किसी भी बैंक को इस अधिनियम की किसी या किन्हीं धाराओं या उपधाराओं से निश्चत अवधि या सामान्यतः लागू होने से मुक्त करने की घोषणा गजट में प्रकाशित कर सकती है।

fVIi.kh : रिजर्व बैंक द्वारा प्रस्तुत बैंकों के एकीकरण या पुनर्गठन की योजना को स्वीकृत कर सकती है।

2-8 vkykpukRed eY;kdu (Critical Evaluation) &

बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 के अध्ययन से स्पष्ट है कि रिजर्व बैंक को भारतीय बैंकिंग व्यवस्था के सम्बन्ध में विस्तृत अधिकार दिये गये हैं। इनका लक्ष्य बैंकिंग संस्थाओं पर वैधानिक नियंत्रण स्थापित कर एक सुविकसित एवं सुदृढ़ बैंकिंग व्यवस्था का निर्माण करना है।

भारतीय बैंकिंग अधिनियम में 1949 के पश्चात् अनेक संरचनात्मक एवं क्रियात्मक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं जिसके परिणामस्वरूप इसे एक नवीन दिशा और स्थायित्व प्राप्त हुआ है। भारत में रिजर्व बैंक को बैकिंग प्रणाली के नियमन एवं नियंत्रण सम्बन्धित अनेक अधिकार प्रदान किये गये हैं। रिजर्व बैंक पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी है कि वह इन दायित्वों का निर्वाह काफी विवेकपूर्ण तरीके से करें।

बैंकिंग (नियमन) अधिनियम की प्रमुख उपलब्धियां निम्न है :–

(i) सन् 1965 में सहकारी बैंकिंग संस्थाओं का देश की मौद्रिक एवं साख व्यवस्था में बढ़ते हुए प्रभाव को देखते हुए बैंकिंग (नियमन) अधिनियम इन संस्थाओं पर भी लागू कर दिया गया।

(ii) बैंक अनुज्ञा पत्र सम्बन्धी प्रावधान के परिणाम स्वरूप जमाकर्त्ताओं के हितों की सुरक्षा में वृद्धि हुई है।

(iii) अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण क्षेत्र, प्राथमिक क्षेत्रों को उपलब्ध बैंक – साख में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

(iv) बैंक के कार्य क्षेत्र में व्यापक विस्तार हुआ है।

(v) दुर्बल बैंक संस्थाओं का मजबूत बैंक संस्थाओं में समामेलन हुआ है।

(vi) बैंक सुविधाओं का ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार हुआ है।

(vii) बैंकों के असफल होने की प्रवृत्ति समाप्त हो गई है।

भारतीय बैंकिंग प्रणाली के दोष : आज भारतीय बैंकिंग प्रणाली अनेक दोषों से ग्रसित है यथा –

(i) आज भी देशी–बैंकर्स रिजर्व बैंक के नियंत्रण के बाहर है। इनका साख व मुद्रा बाजार में महत्वपूर्ण स्थान है।

(ii) शाखा विस्तार के बावजूद आज भी क्षेत्रीय असंतुलन बना हुआ है तथा अनेक ऐसे राज्य व क्षेत्र है जहां शाखा विस्तार की प्रक्रिया में आशातीत वृद्धि नहीं हो पायी है।

(iii) रिजर्व बैंक के पास बैंकों के निरीक्षण हेतु पर्याप्त स्टॉफ का अभाव है।

(iv) बैंकों के पूंजी कोष में निरन्तर कमी होती जा रही है।

(v) बैंकिंग कर्मचारियों की कार्यकुशलता में निरन्तर गिरावट दृष्टिगोचर होती है।

fu"d"kZ (Conclusion) %& अतः निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि इन बैंकों की पूर्ण सफलता हेतु उन्हें अपने कार्यक्षेत्र को विस्तृत करने के साथ–साथ राष्ट्रीय हित में बैंकिंग अधिनियम में विभिन्न प्रावधानों का पूर्णतः एवं कठोरता से पालन करना होगा।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

vH;kl gsrq iz'u

y?kqÙkjkRed iz'u %

(Short Answer Type Questions)

1. किसी देश की अर्थव्यवस्था के विकास के लिए बैंकिंग नियमन की आवश्यकता क्यों है?
2. भारत में बैंकिंग अधिनियम 1949 के पूर्व बैंकिंग विधान का क्या इतिहास रहा है?
3. भारत में बैंकिंग अधिनियम की आवश्यकता एवं उद्देश्य पर टिप्पणी लिखिये।
4. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 की प्रमुख विशेषताएँ बताइये।
5. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 को को किन मुख्य भागों में बांटा जा सकता है।
6. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 के अन्तर्गत बैंकिंग कम्पनी तथा बैंकिंग व्यवसाय की क्या परिभाषा दी गई है।
7. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम, 1949 के अन्तर्गत एक बैंक किन बैंकिंग कार्यों को सम्पादित कर सकता है।
8. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 के अन्तर्गत किन कार्यों को करने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है।
9. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 में बैंकों के प्रबन्ध व्यवस्था के सम्बन्ध में क्या प्रावधान किये गये है।
10. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 के अनुसार बैंकों में किन–किन व्यक्तियों की नियुक्तियों पर प्रतिबन्ध है।
11. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 में प्रदत्त पूँजी एवं रक्षित कोष सम्बन्धी प्रावधानों को स्पष्ट कीजिये।
12. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 में लाभांश वितरण पर प्रतिबन्ध के प्रावधान को स्पष्ट कीजिये।
13. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 में नकद कोषानुपात के सम्बन्ध में क्या प्रावधान है।
14. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 बैंकों द्वारा ऋण प्रदान करने पर क्या प्रतिबन्ध है।
15. रिजर्व बैंक सामान्यतया किन शर्तों को पूरा करने पर बैंकों को लाइसेन्स प्रदान करता है।
16. किसी भी स्थापित बैंकिंग कम्पनी द्वारा नई शाखा खोलने के लिए आवेदन करने पर रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया किन बातों पर विचार करता है।
17. वैधानिक तरल कोषानुपात (Statutory Liability Ratio Or S.L.R.) को समझाइये।
18. किसी भी बैंकिंग कम्पनी को बन्द करने (Winding-Up) करने सम्बन्धी प्रावधानों की व्याख्या कीजिए।
19. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 के अन्तर्गत भारतीय रिजर्व बैंक को क्या शक्तियाँ दी गई है।
20. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 के अन्तर्गत केन्द्र सरकार को क्या अधिकार है।

fucU/kkRed iz'u

(Descriptive Questions)

1. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 के प्रमुख प्रावधानों की विवेचना कीजिये।
2. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 के अन्तर्गत निम्न प्रावधानों का वर्णन कीजिये –
   (1) अन्तिम खाते एवं उनका अंकेक्षण (2) निरीक्षण
   (3) बैंकों का एकीकरण (4) दण्ड व्यवस्था
   (5) बैंकों का प्रबन्ध
3. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 पर एक लेख लिखिए।
4. रिजर्व बैंक को बैंकिंग के नियमन व नियन्त्रण में भारतीय बैंकिंग अधिनियम से किस प्रकार सहायता मिलती है? बताइये।
5. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 की प्रमुख विशेषताओं की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिये।
6. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 के अन्तर्गत निम्न प्रावधानों का वर्णन कीजिये –
   (1) रिजर्व बैंक को निर्देशन का अधिकार (2) बैंकिंग कम्पनी के व्यवसाय का निलम्बन
   (3) बैंकिंग कम्पनी के व्यवसाय का समापन (4) बैंकिंग कम्पनी के नाम में परिवर्तन
7. भारतीय बैंकिंग (नियमन) अधिनियम 1949 का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

खण्ड–द

इकाई – 1

प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की स्थापना

1.0 इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 परिचय

1.3 ग्रामीण बैंकों की स्थापना का उद्देश्य

1.4 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कुछ महत्वपूर्ण सूचनाएं

1.5 कार्यप्रणाली

1.6 सारांश

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.8 शब्द कोष

1.9 संदर्भ ग्रंथ

1.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(प) ग्रामीण क्षेत्रों में वित्त सम्बन्धित कौनसी समस्याएं थी।

(पप) ग्रामीण क्षेत्रों में प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की स्थापना के उद्देश्य क्या थे।

(पपप) किन परिस्थितियों में भारत में प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई।

1.2 परिचय :–

चार दशक पूर्व जनसाधारण बैंक एवं बैंकिंग सेवाओं से उदासीन था। उसके लिए बैंकिंग का कोई औचित्य नहीं था। बैंकिंग संस्थाएं उद्योगपतियों, व्यपारियों और समृद्ध लोगों की अथवा उनके लिए बनी संस्थायें मानी जाती थी। सामान्य व्यक्ति बैंकों में जाने से कतराता था अथवा दूसरे शब्दों में कहे तो बैंकों के दरवाजे उसके लिए बन्द थे। बैंकिंग का एक सामान्य मानदंड बन चुका था कि ग्रामीण गरीब परिवार उधार का पात्र नहीं होता। इस स्थापित मान्यता के विरूद्ध विरूद्ध राजकीय नीतियों के अनुसार कुछ ग्राम विकास कार्यक्रम हाथ में लिये भी गये, सहकारिता के माध्यम से ऋण सुविधाओं में वृद्धि भी होती रही तो भी अपेक्षित सुधारों को वांछित गति नहीं मिल पायी। आजादी के बाद विकास क्रम आरम्भ हुआ, योजनायें बनी, योजना आयोग बना और एक विशाल तंत्र विकास के नाम पर खड़ा किया गया जो खूब फला फूला और एक विशालकाय अजगर के रूप में विकास क्रम पर हावी होता गया। चहुँमुखी विकास की परिकल्पना में विकास की मूल इकाई ''गांव'' को अपेक्षित प्राथमिकता नहीं मिली। राष्ट्रीय व अन्य स्तरों पर किए उपायों का लाभ व्यावहारिक रूप में सामान्य

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

जन विशेषकर ग्रामीण, लघु और सीमान्त कृषकों को नहीं मिल पाया और विकास क्रम में निरन्तर सुधार की आवश्यकता महसूस होती गयी।

इस आशय के विचार, लगभग सभी वर्ग के प्रबृद्ध जनों के द्वारा व्यक्त किये गये कि वर्तमान में कार्यरत ऋण सुविधा प्रदान करने वाली संस्थायें चाहे वे वाणिज्य बैंक हो अथवा सहकारी बैंक, ग्रामीण क्षेत्रों में प्रभावी रूप से साधारण आदमी की आवश्यकता पूर्ति के लिए सक्षम/पर्याप्त नहीं हैं। विकास कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए लाभान्वित होने वाले वर्ग को समूह रूप में पहचाना जाना व एक ऐसी ऋण संस्था का गठन किया जाना आवश्यक होगा जो इस समूह की विभिन्न ऋण आवश्यकताओं की पूर्ति प्रभावी रूप में कर सकें। इस विचार क्रम पर विभिन्न विचार आते रहे, विचार क्रम आगे बढ़ता रहा और किसी अलग ऋण संस्था के गठन की आवश्यकता तीव्रता से महसूस होती रही जो आसानी से व कम खर्च में लक्ष्य समूह तक बैंकिंग सेवाओं को पहुँचा सके। प्रस्तुत इकाई में प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की स्थापना के मूलभूत उद्देश्यों की विवेचना की गई हैं।

1.3 ग्रामीण बैंकों की स्थापना का उद्देश्य :–

इन बैंकों की स्थापना का उद्देश्य ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि, उद्योग, व्यापार, वाणिज्य एवं अन्य उत्पादक गतिविधियों के लिए लघु एवं सीमान्त कृषकों, कृषि मजदूरों, दस्तकारों एवं लघु उद्यमियों को ऋण एवं अन्य सुविधायें प्रदान करना हैं। वस्तुतः इन बैंकों से लाभान्वित होने वाला वर्ग कमजोर वर्ग की श्रेणी में आता हैं। इन बैंकों को विभिन्न बैंकों द्वारा प्रायोजित किया गया हैं जो प्रायोजक बैंक के नाम से जाने जाते हैं। इनकी हिस्सा पूंजी में केन्द्रीय सरकार की भी हिस्सेदारी हैं। एक करोड़ की अधिकृत पूंजी से स्थापित होने वाले इन बैंकों में केन्द्रीय सरकार द्वारा 50 प्रतिशत संबंधित राज्य सरकार द्वारा 15 प्रतिशत और प्रायोजक बैंक द्वारा 35 प्रतिशत पूंजी अंशदान किया जाना निश्चित किया गया था। इन बैंकों की संचालन व्यवस्था का दायित्व एक स्वतंत्र संचालक मंडल पर हैं जो भारत सरकार द्वारा गठित किया जायेगा। इस संचालक मंडल में एक अध्यक्ष जो सामान्यतः प्रायेाजक बैंक का एक अधिकारी होगा तथा निम्न प्रकार अन्य संचालकगण होंगे :–

1. केन्द्रीय सरकार द्वारा नामित संचालक जिनकी संख्या 3 से ज्यादा नहीं होगी।
2. राज्य सरकार द्वारा नामित संचालक जिनकी संख्या 2 से ज्यादा नहीं होगी।
3. प्रायोजक बैंक द्वारा नामित संचालक जिनकी संख्या 3 से न्यादा नहीं होगी।

इसके अतिरिक्त भारत सरकार अन्य संचालक भी नामित कर सकेगी किन्तु कुल संचालकों की संख्या 15 से ज्यादा नहीं होगी। इस प्रावधान के अन्तर्गत कुछ स्थानीय व्यक्तियों, जो इन बैंकों से लाभान्वित होने वाले वर्ग समूहों में से किसी का प्रतिनिधित्व करते हो अथवा अपने क्षेत्र के प्रमुख व्यक्ति हों अनेक बैंकों में संचालक रूप में नामित गये हैं।

इन बैंकों की स्थापना के मूल में स्थानीय तत्व की प्रधानता के अतिरिक्त भी अन्य कारण जो रहा वह हैं कम लागत पर ग्रामीण क्षेत्रों में साख एवं बैंकिंग सेवाओं का विस्तार इन बैंकों में कार्यरत कर्मचारियों एवं अधिकारियों के वेतनमान व अन्य सुविधायें अन्य बैंकों के समान न होकर संबंधित राज्य सरकार के अनुरूप होंगी। अन्य खर्चों पर भी प्रतिबंधात्मक नियमन लागू होंगे। गठन के लगभग 5 वर्षों तक इन बैंकों में न्यूनतम

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

आवश्यक कर्मचारी व अधिकारी प्रायोजक बैंक द्वारा प्रदान किये जायेंगे, जिनका खर्च संबंधित प्रायोजक बैंक वहन करेंगे। यह व्यवस्था इन बैंकों की अपनी प्रारम्भिक स्थिति में आर्थिक अनुदान का काम करेगी और बैंकिंग व्यवस्था के अनुभवी लोग भी इन बैंकों को उपलब्ध हो सकेंगे।

ग्रामीण बैंकों का गठन विशिष्ट सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए किया गया था, किन्तु आने वाले समय में वे अर्थक्षम भी बन सकेंगे ऐसी परिकल्पना की गयी थी। ऋण कारोबार का स्तर जिसे प्राप्त कर ग्रामीण बैंक अपने सभी खर्चों की पूर्ति करने के दृष्टिकोण से ही नहीं वरन् एक निश्चित अवधि के बाद न्यूनतम संचित कोष के निर्माण की दृष्टि से भी अर्थक्षम बन सके ऐसी परिकल्पना की गयी थी और यह महत्वपूर्ण बिन्दु भी था।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की स्थापना के कोई दो उद्देश्य बताइए।

.....

.....

.....

1.4 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कुछ महत्वपूर्ण सूचक :–

सारणी–1

राशि करोड़ रूपये में

क्र.सं	सूचक	मार्च 2004	मार्च 2005	मार्च 2006
1	प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की संख्या	196	196	133
2	जिलों की संख्या	518	523	525
3	शाखाओं की संख्या	14496	14484	14494
4	स्टाफ की संख्या	69249	68912	68629
5	स्वकोष	5438	6181	6647
6	जमाए	56350	62143	71329
7	ऋण	4595	5524	7303
8	निवेश	36135	36761	41182
9	बकाया ऋण	26114	32870	39713
10	साख जमा अनुपात	:46:	53:	56:
11	स्वीकृत ऋण	15579	21082	25427
12	संचित हानि वाले प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की संख्या	90	83	58
13	संचित हानिया	2725	2715	2637
14	लाभ वाले प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की	163	166	111

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

	संख्या			
15	शुद्ध एन.पी.ए. (:)	8.55:	4.84:	3.99:
16	वसूली (:) 30 जून तक	73	78	80
17	प्रति शाखा उत्पादकता	5	6	7
18	प्रति कर्मचारी उत्पादकता	1.19	1.38	1.62

सारणी 1 में प्रादेशिक ग्रामीण बैकों के कुछ महत्वपूर्ण सूचक दिये गये हैं। इन बैंकों की शाखाएं वर्ष 2004 में 518 जिलों में थी जो कि वर्ष 2006 में बढ़कर 525 जिलों में हो गई । शाखाओं की संख्या भी 2004 में 14446 से बढ़कर वर्ष 2006 में 14494 हो गई। वर्ष 2006 में कुल 133 रजिस्टर्ड क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में से 111 ही लाभ में थे।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 वर्ष 2006 में प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की संख्या बताइये तथा उसमें कितने जिले सम्मिलित थे।

.....

.....

.....

प्र. 2 वर्ष 2006 में लाभ एवं हानि में चल रहे क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या बताइए।

.....

.....

.....

प्र. 3 वर्ष 2006 में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की प्रति शाखा उत्पादकता एवं प्रति कर्मचारी उत्पादकता बताइए।

.....

.....

.....

.....

1.5 कार्यप्रणाली :–

रिजर्व बैंक के ग्रामीण आयोजना और ऋण कक्ष द्वारा, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों पर गठित संचालन समिति के अनुरोध पर एक द्रुत अध्ययन किया गया। इस अध्ययन के लिए ऐसे पन्द्रह बैंकों की कार्य प्रणाली को लिया गया जिनका ऋण कारोबार दिसम्बर 1978 के अंत तक 3 करोड़ रूपये और अधिक हो चुका था या जिन्हें स्थापित हुए 3 वर्ष हो चुके थे। उक्त अध्ययन से निम्न निष्कर्ष सामने आये :–

1. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की सभी शाखाओं के लिए अर्थक्षम होना संभव नहीं हैं क्योंकि कुछ शाखाएं ऐसे केन्द्रों में स्थित हैं जहां संभावनाएं सीमित हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

2. कुछ शाखाएं वाणिज्य बैंकों की शाखाओं और सहकारी बैंकों से अत्यधिक प्रतिस्पर्धा के कारण अपने कारोबार को बढ़ा नहीं सकती।
3. सीमित कार्यक्षेत्र, कुछ क्षेत्रों में बाधक भौगोलिक स्थिति और उत्साहहीन ग्राहकों के बावजूद क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अब तक ग्रामीण क्षेत्रों में कमजोर वर्गों को उनकी सहायता करने के अपने प्रमुख लक्ष्य की पूर्ति करने में समर्थ हुए हैं।

अध्ययन के अनुसार कोई बैंक यदि उचित अवधि में ऋण कारोबार का एक स्तर प्राप्त कर लेता हैं और उससे अपने खर्चों की पूर्ति कर सकता हैं तथा किसी एक अवधि में न्यूनतम प्रारम्भिक निधियों के निर्माण के लिए आय स्तर प्राप्त कर लेता हैं तो उस बैंक को अर्थक्षम कहा जा सकता हैं। परन्तु एक या अधिक जिलों वाले क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के मामले में अर्थक्षमता का मूल्यांकन उपेक्षित वर्गों और दुर्गम क्षेत्रों तक पहुंचने के लिए उसके द्वारा जितना शाखा विस्तार किया जाता हैं उसके आधार पर किया जाना चाहिए। जिन क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का अध्ययन किया गया उनसे संबंधित आकंड़ों और उसके निष्कर्षों से इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि किसी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक को अर्थक्षमता प्राप्त करने के लिए करीब 6 वर्ष की अवधि, 70 शाखाएं, 8 करोड़ रूपये का ऋण कारोबार और उसके औसत उधार तथा ऋण पर ली जानेवाली ब्याज दरों के बीच लगभग 5 प्रतिशत का मार्जिन आवश्यक हैं। इसी संदर्भ में यह जान लेना आवश्यक हैं कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कुछ गंभीर प्रतिबंधों के साथ कार्य करते हैं। उन्हें केवल कमजोर वर्गों को ही ऋण देना पड़ता हैं, ब्याज की न्यूनतम दरें लगानी पड़ती हैं और न्यूनतम लागत पर ऋण प्रदान करने की अपनी छवि बनाये रखनी पड़ती हैं। दूसरे बैंकों की तुलना में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के मामले में वित्तीय क्षमता प्राप्त करने की अवधि अनिवार्य रूप से लम्बी होती हैं। इन सीमाओं के होते हुए भी उक्त निष्कर्षों से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के उत्साहजनक कार्यों और अर्थक्षम होने की उनकी क्षमता स्पष्ट होती हैं, परन्तु इसके लिए उन्हें नामित मार्जिन उपलब्ध होना चाहिए और कारोबार में विकास में वृद्धि के लिए स्थितियां निर्मित की जानी चाहिए। फिर भी अर्थक्षमता प्राप्त करने की आवश्यकता को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना के सामाजिक लक्ष्य के बराबर ही मानना चाहिए।

इस अध्ययन दल के प्रतिवेदन के बाद ग्रामीण बैंकों के कार्यकलापों में कुछ सुधार किये गये तथा उनके ग्राहकीय क्षेत्र में विस्तार का भी सीमित प्रयास किया गया। किन्तु परिणाम बहुत उत्साहजनक नहीं दिखाई देते। ये बैंक निरन्तर बढ़ते हुए अतिदेयों, नुकसान की राशि में वृद्धि और अन्य व्यावहारिक कठिनाईयों से घिरे हुए हैं। यदि समय रहते इनकी स्थिति में सुधार के प्रभावी उपाय नहीं किये गये तो इनके प्रति ग्रामीण क्षेत्रों में आस्था डगमगा जाएगी और उन्हें पुनः पटरी पर लाना दुरूह कार्य होगा। इन संस्थाओं में सामाजिक लक्ष्य प्राप्ति के उपायों के साथ ही उनकी आर्थिक स्थिति में मजबूती के उपाय भी अत्यन्त आवश्यक हैं। इन्हें सरकारी अनुदान पर जीने वाली संस्था यदि बन जाने दिया गया तो ग्रामीण क्षेत्रों में सक्षम बैंकिंग सेवाओं के विस्तार को गहरा धक्का लगेगा। आर्थिक उदार शर्तों पर पुर्नवित्त, ग्राहक समूह में विस्तार, राज्य सरकार द्वारा प्रायोजित कार्यक्रमों में ऋण सेवाएं प्रदान करने के बदले कुछ प्रशासनिक अंशदान अथवा ब्याज में अनुदान, सीमित तौर पर कुछ बैंकिंग व्यवसाय किये जाने की छूट दिया जाना एवं प्रशासन तंत्र को प्रभावी एवं सक्षम बनाने जैसे कुछ उपाय हैं जो तात्कालिक उपचार का काम कर सकते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 ग्रामीण बैंकों के अर्थक्षम होने का क्या अर्थ हैं ?

.....

.....

.....

प्र. 2 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कोई दो प्रतिबंध बताइये।

.....

.....

.....

1.6 सारांश :–

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय देश में बैंकिंग सेवाओं का जनसाधारण के लिए कोई औचित्य नहीं था, ये सेवाएं केवल उद्योगपतियों, व्यापारियों तथा समृद्ध लोगों के लिए ही मानी जाती थी तथा गरीब परिवारों को उधार का पात्र भी नहीं माना जाता, लेकिन धीरे–धीरे विकास हेतु सोच में परिवर्तन हुआ तथा लगभग वर्गों के प्रबुद्धजनों ने ग्रामीण क्षेत्रों में साख सुविधाओं के विस्तार पर बल दिया, तथा वर्ष 1975 में नरसिंहम समिति की सिफारिशों के आधार पर राष्ट्रीय स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण बैंकों की स्थापना का निर्णय किया गया। प्रस्तुत ईकाइ में ग्रामीण बैंकों की स्थापना के उद्देश्यों की विवेचना की गई हैं।

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

1.3 उत्तर 1. 133, 525

उत्तर 2. लाभ – 111

हानि – 58

उत्तर 3. प्रति शाखा उत्पादकता 7.66

प्रति कर्मचार उत्पादकता 1.62

1.4 उत्तर 1. कोई बैंक यदि उचित अवधि में ऋण कारोबार का एक स्तर प्राप्त कर लेता हैं और उससे अपने खर्चों की पूर्ति कर सकता हैं तथा किसी एक अवधि में न्यूनतम प्रारम्भिक निधियों के निर्माण के लिए आय स्तर प्राप्त कर लेता हैं तो उस बैंक को अर्थक्षम कहा जा सकता हैं।

उत्तर 2. 1. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के मामले में वित्तीय क्षमता प्राप्त करने की अवधि अनिवार्य रूप से लम्बी होती हैं।

2. ब्याज की न्यूनतम दरें

1.8 शब्द कोष :–

चहुँमुखी विकास	लक्ष्य समूह
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	अप्रत्याशित
लघु उद्यमियों	प्रतिबन्धात्मक
सक्षमता	अतिदेय

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

पंगु	दुष्चक्र
अर्थक्षम	संचित कोष
द्रुत अध्ययन	संभावनाएं
प्रतिस्पर्धा	दुर्गम क्षेत्र
दुरूह	पुनर्वित्त
चुकता पूंजी	प्रतिभूतियों
ऋण जमा अनुपात	निर्बल वर्ग
युक्तिकरण	परिचालानात्मक दक्षता
लक्ष्येतर समूह	वित्तपोषण
पुनआंबटन	विस्तार काऊंटर

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Deshpande D.V. M.K. Mudgal, and K.K. Gupta, Working oaoer on RRBs at Cross Road, Bunkers Institute of Rural Development, Lucknow

2. Bhat, N.S., Rural Banking in India.

3. Desai, SSM, Agriculture and Rural Banking in India, Himalya Publications

4. Singh, R.P. and Sathees Babu K. Performanve and Prospects of Reginal Rural Banks – An appraisal, Kurukshetra, July 1996

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

इकाई – 2
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रबन्ध

2.0 इकाई की रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 परिचय

2.3 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रबन्ध

2.3.1. संगठनात्मक संरचना

2.4 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों पर दांतेवाला समिति

2.5 कृषि एवं ग्रामीण विकास हेतु संस्थागत ऋण समिति

2.6 रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया समिति

2.7 एस.एम. केलकर समिति

2.8 ए.एम. खुसरों समिति

2.9 नरसिंहम समिति

2.10 सारांश

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

2.12 शब्द कोष

2.13 संदर्भ ग्रंथ

2.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(i) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के प्रबन्धक मण्डल में कौन–कौन सदस्य होते हैं।

(ii) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सुधार हेतु किन–किन समितियों का गठन किया गया।

(iii) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सुधार हेतु गठित समितियों ने क्या–क्या सिफारिशें दी।

(iv) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्यप्रणाली में किन परिवर्तनों की आवश्यकता हैं।

2.2 परिचय :–

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में साधारण निर्देशन एवं प्रबंध संबंधी मामलों में निदेशक मण्डल उच्चतम अधिकृत हैं। प्रस्तुत इकाई में इन बैंकों के प्रबन्धक मण्डल के बारे में विस्तार से बताया गया हैं। इन बैंकों की कार्यप्रणाली में सुधार हेतु समय–समय पर विभिन्न समितियों का गठन किया गया हैं जैसे दांतेवाला समिति, केलकर समिति, खुसरो समिति आदि। इन समितियों के द्वारा दी गई सिफारिशों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत इकाई में किया गया हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्यकलापों में परिवर्तन की आवश्यकता को महसूस करते हुए समय–समय पर गठित इन समितियों की सिफारिशों से केवल एक ही बात मूल रूप में नजर आती हैं कि ये बैंक ग्रामीण क्षेत्र की ऋण सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें।

2.3 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रबन्ध :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में साधारण निर्देशन एवं प्रबंध संबंधी मामलों में निदेशक मण्डल उच्चतम अधिकृत हैं। प्रत्येक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के निदेशक मण्डल में चेयरमेन, केन्द्रीय सरकार द्वारा नामित दो निदेशक, संबंधित राज्य सरकार द्वारा नामित कम से कम दो राज्य सरकार द्वारा नामित सदस्य एवं कम से कम दो भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा नाबार्ड द्वारा नामित सदस्य होते हैं। केन्द्रीय सरकार इसके नामित सदस्यों की संख्या अधिकतम 15 तक कर सकती हैं। केन्द्रीय सरकार चेयरमेन की नियुक्ति अधिकतम 5 वर्षों के लिए कर सकती हैं लेकिन उसकी पुनः नियुक्ति भी की जा सकती हैं। चेयरमेन बैंकों का पूर्णकालिक अधिकारी होता हैं तथा बैंक के क्रियाकलापों का निर्देशक एवं मार्गदर्शक होता हैं। यद्यपि प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के चेयरमेन की नियुक्ति किसी भी संस्था से की जा सकती हैं, फिर भी भारत सरकार ने इन्हें अभी तक संबंधित बैंकों से ही इन्हें नियुक्त किया हैं।

प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की संगठनात्मक संरचना को चित्र 1 में दिखाया गया हैं। हालांकि इनका संगठन कई तथ्यों पर निर्भर करता हैं जैसे – स्टाफ की संख्या, व्यापार का स्तर, क्षेत्र, शाखाओं की संख्या तथा अन्य स्थानीय प्राथमिकताएं आदि। निदेशक मण्डल इन बैकों की उच्चतम प्रबंधकीय संस्था हैं तथा चेयरमेन मुख्य कार्यकारी अधिकारी होते हैं। चेयरमेन की सहायता के लिए सामान्य प्रबंधक तथा प्रशासनिक अधिकारी होते हैं। मुख्य कार्यालय के विभिन्न कार्यालयों में वरिष्ठ प्रबंधक स्तर के अधिकारी होते हैं। बहुत से प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग क्षेत्रीय कार्यालय भी स्थापित किये गये हैं, साधारणतया एक क्षेत्रीय कार्यालय 25–30 शाखाओं की देखरेख करता हैं, प्रत्येक शाखा कार्यालय में शाखा प्रबंधक होते हैं जिनके पास फील्ड अधिकारी, 2–3 बाबू तथा अन्य कार्यालय सहायक होते हैं, यद्यपि कई छोटी–छोटी शाखाओं में केवल व्यक्ति भी होता हैं। कई स्थानों पर शाखा कार्यालय प्रधान कार्यालय के परिसर में ही चलता हैं तथा वहां का वरिष्ठ प्रबंधक ही इसका कार्य सम्भालता हैं, लेकिन इस प्रकार की व्यवस्थाओं से शाखा कार्यालयों की कार्य प्रणाली पर बुरा प्रभाव पड़ता हैं।

Organisational Structure of RRB

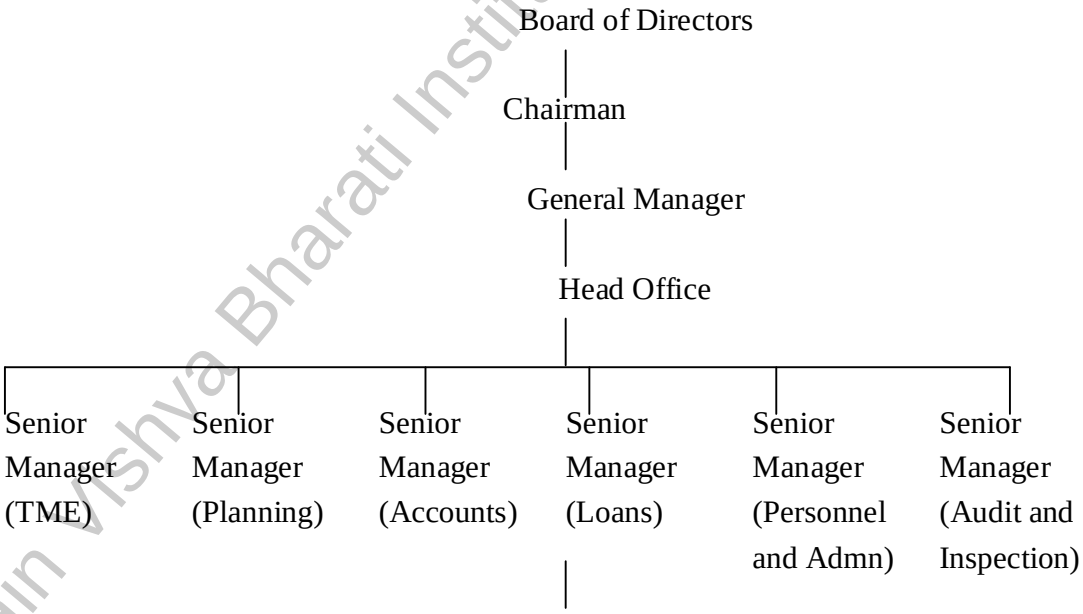

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

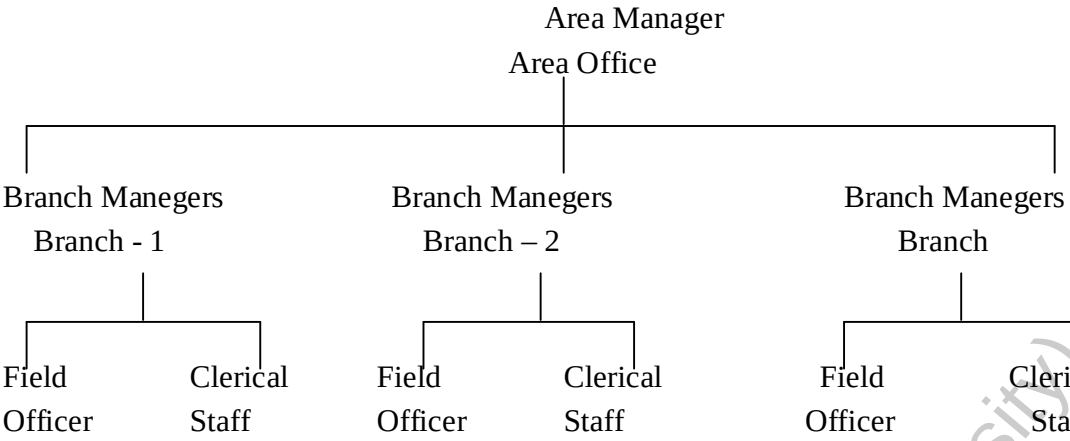

भारतीय रिजर्व बैंक प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों को उनके व्यापार विस्तार तथा ऋण एवं अग्रिम सुविधाओं हेतु ऋण प्रदान करता हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर दीर्घकालीन उद्देश्यों हेतु राष्ट्रीय कृषि साख प्रदान करता हैं। वर्ष 1982 में नाबार्ड की स्थापना के बाद में ये कार्य नाबार्ड के द्वारा किये जाते हैं। वर्तमान में नाबार्ड न केवल क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को ऋण एवं अग्रिम हेतु सुविधाएं देता हैं बल्कि इसके कार्यों का निरीक्षण भी करता हैं तथा समय–समय पर आवश्यकता पड़ने पर सलाह एवं मार्गदर्शन भी देता हैं।

प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की स्थापना का मूलभूत उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार करना था और इसमें इनकी महत्वपूर्ण भूमिका भी हैं किन्तु आर्थिक दृष्टि से इनकी स्थिति हमेशा ही कमजोर रही हैं तथा अधिकतर बैंक घाटे में ही चलते हैं, इसलिए भारत सरकार तथा भारतीय रिजर्व बैंक ने इन बैंकों में सुधार हेतु समय–समय पर कई समितियां गठित की हैं, इनमें से कुछ महत्वपूर्ण समितियां तथा उनकी सिफारिशें निम्नानुसार हैं :–

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के प्रबंधक मण्डल की रूपरेखा समझाइए।

.....

.....

.....

प्र. 2 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को भारतीय रिजर्व बैंक किस उद्देश्य के लिए ऋण प्रदान करता हैं।

.....

.....

.....

2.4 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों पर दांतेवाला समिति :–

1975 में प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की स्थापना के बाद भारतीय रिजर्व बैंक ने एम.एल. दांतेवाला की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की, जिसको इन बैंकों की कार्यप्रणाली की जांच करनी थी, उसके मुख्य निष्कर्ष निम्नलिखित हैं :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के संगठन व कार्यप्रणाली में कुछ परिवर्तन करने से ये बैंक ग्रामीण साख संरचना के महत्वपूण भाग बन सकते हैं।
2. दांतेवाला समिति प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के दो वर्षों के कार्य कलापों से पूरी तरह सन्तुष्ट थी, इसके अनुसार इनके कार्य पूरी तरह इनके उद्देश्यों की ओर इंगित करते थे।
3. दांतेवाला समिति ने इन प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों में परिवर्तन करने का सुझाव नहीं दिया।
4. समिति के अनुसार ग्रामीण जनता व उनकी साख जरूरतों के अन्तराल को पूरा करने में प्रादेशिक ग्रामीण बैंक सफल थे।
5. समिति ने इन बैंकों की संख्या में वृद्धि करने का सुझाव दिया।
6. समिति के अनुसार प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों का विस्तार उन क्षेत्रों में किया जाना चाहिए जहां केन्द्रीय सहकारी बैंक (क्ब्ब्) पर्याप्त साख सेवाएं नहीं दे पा रही हैं।

दांतेवाला समिति के अनुसार परिमाणात्मक व गुणात्मक दोनों ही स्तरों पर साख अन्तराल इतना अधिक हैं कि दोनों प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों तथा केन्द्रीय सहकारी बैंकों को एक साथ मिलकर एक दूसरे के हितों की रक्षा करते हुए प्रयास करने होंगे।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 दांतेवाला समिति की स्थापना कब व किसकी अध्यक्षता में की गई थी।

.....

.....

.....

प्र. 2 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में सुधार हेतु दांतेवाला समिति की कोई दो सिफारिशे बताइये।

.....

.....

.....

2.4 कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए संस्थागत ऋणों की समीक्षा समिति (CRICARD – Committee to Review the Arrangement for Institutional Credit for Agriculture and Rural Development) :–

भारत रिजर्व बैंक ने 1981 में ग्रामीण साख व्यवस्था में प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की भूमिका की जांच हेतु यह समिति नियुक्त की। इसके प्रतिवेदन के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित थे :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. चूंकि ये बैंक ग्रामीण विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं, इसलिए इन बैंकों की शाखाओं की स्थापना हेतु लाइसेन्स ग्रामीण क्षेत्रों में दिये जाने चाहिए।
2. रिजर्व बैंक को ग्रामीण व्यापारिक बैंकों का व्यापार इन बैंकों को स्थानान्तरित करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाने चाहिए।
3. प्रारम्भिक वर्षों की हानियां शेयरधारकों को न वहन करनी पड़े, ऐसे प्रयास किये जाने चाहिए।
4. प्रायोजित (चवदेवतमक) बैंकों द्वारा कम से कम 10 वर्ष तक सुविधाएं दी जानी चाहिए।
5. प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के नियमन, नियन्त्रण तथा अन्य गतिविधियों संबंधी सम्पूर्ण शक्तियां कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए राष्ट्रीय बैंक (छ।ठ।त्व) को स्थानान्तरित कर देनी चाहिए।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 **CRICARD** का पूरा नाम बताइये।

.....

.....

.....

प्र. 2 कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए संस्थागत ऋणों की समीक्षा समिति की कोई दो सिफारिशें बताइये।

.....

.....

.....

2.6 रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया समिति (RBI Study) :–

इसी समय वर्ष 1981 में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा भी प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की उपदेयता एवं कार्यप्रणाली का अध्ययन किया गया और पाया गया कि प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों द्वारा बहुत अधिक लगभग 8 करोड़ के रूप त्राये के ऋण विपरित किये गये, लेकिन निम्न कारणों से इनका व्यापार कुछ सीमित रहा जैसे :–

1. शाखाएं लगभग गांवों के मध्य स्थापित थी जिसके कारण व्यापार की संभावनाएं सीमित हो गई।
2. व्यापारिक बैंकों तथा सहकारी समितियों से प्रतियोगिता के कारण ग्रामीण बैंकों के व्यापार विस्तार में कठिनाई थी।
3. लक्षित समूह जिनसे ऋण एवं अग्रिम दिये व लिये जाते थे, ऐतिहासिक रूप से कमजोर था।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया द्वारा किये गये अध्ययन की कोई दो सिफारिशें बताइये।

.....

.....

.....

2.7 एस.एम. केलकर समिति :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की स्थापना के 10 वर्ष बाद भारत सरकार ने इन बैंकों की कार्यप्रणाली के विभिन्न पहलूओं का अध्ययन करने के लिए यह समिति 1984 में एस.एम. केलकर की अध्यक्षता में नियुक्त की। इस समिति ने भी प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों को जारी रखने की सिफारिश की। इस समिति की मुख्य सिफारिशें निम्नलिखित थी :–

1. 01 मार्च, 1987 से अल्पकालीन एवं मध्यमकालीन ऋणों में प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों का प्रतिशत क्रमशः 20 प्रतिशत तथा 30 प्रतिशत रहना चाहिए।
2. नाबार्ड एवं प्रतिभू बैंकों की पुनर्वित्त सुविधा अल्पकालीन ऋणों के लिए 50 प्रतिशत तथा मध्यमकालीन ऋणों के लिए 70 प्रतिशत होनी चाहिए।
3. प्रतिभू बैंकों द्वारा लिये जाने वाले ब्याज की दर 8.5 प्रतिशत से कम कर 7 प्रतिशत करना।
4. प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की पुनर्वित्त सुविधा के लिए भी उन्हीं शर्तों को लागू किया गया जो व्यापारिक बैंकों के लिए लागू होती हैं तथा इन पर लगे अन्य प्रतिबंध जैसे साख ऋण अनुपात आदि को हटा दिया गया।
5. इन बैंकों की अंश पूंजी को 1 करोड़ से बढ़ाकर 5 करोड़ कर दिया जाना चाहिए तथा निर्गमित पूंजी को 25 लाख से बढ़ाकर 1 करोड़ कर देना चाहिए।
6. प्रतिभू बैंकों को प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के विश्वास पर सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करना चाहिए।
7. प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के बेहतर नियन्त्रण हेतु इनकी शाखाओं का व्यवसाय दो जिलों तक ही सीमित रहना चाहिए साथ ही बहुत छोटे तथा अनार्थिक प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों को बन्द करने की सिफारिश भी की गई।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 केलकर समिति कब और किसकी अध्यक्षता में नियुक्त की गई।

.....

.....

.....

प्र. 2 केलकर समिति की कोई दो सिफारिशें बताइये।

.....

.....

.....

2.8 कृषि साख समीक्षा समिति (ए.एम. खुसरों समिति) :–

प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की संगठनात्मक समस्याओं को ध्यान में रखते हुए वर्ष 1989 में डॉ. ए.एम. खुसरों की अध्यक्षता में कृषि साख समीक्षा समिति गठित की गई, इस समिति ने इन बैकों को प्रतिभू बैंकों के साथ विलय कर देने की सिफारिश की। दिसम्बर 1986 में कुल 157 प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की संचित हानि लगभग 9431 लाख रूपये थी। समिति ने यह पाया कि कमजोर वर्गों को कम ब्याज दर पर ऋण प्रदान करने तथा छोटे–छोटे ऋणों की उच्च कार्यवाही लागत तथा बहुत से अनुदानों के कारण क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

हानि बढ़ती जा रही थी। ऋणों के दुरूपयोग, कर्मचारियों में असन्तोष, ऋण आदि की समस्याएं बढ़ती जा रही थी।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 खुसरों समिति कब व किसकी अध्यक्षता में नियुक्त की गई।

.....

.....

.....

.....

प्र. 2 खुसरों समिति की सिफारिशें बताइये।

.....

.....

.....

.....

2.9 वित्तीय व्यवस्था पर नरसिंहम समिति :–

वित्तीय व्यवस्था में सुधारों हेतु एम. नरसिंहम की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की गई जिसकी मुख्य सिफारिशें निम्नलिखित थी :– राष्ट्रीयकरण के बाद एक महत्वपूर्ण उपलब्धि बैंकों की शाखाओं में दिनोदिन हो रहे विस्तार की रही, साथ ही कृषि तथा अन्य गतिविधियों में भी विस्तार हो रहा था, लेकिन बहुत सी ग्रामीण शाखाएं अनार्थिक होती जा रही थी। ग्रामीण बैंकों द्वारा दिये गये ऋणों की वसूली सम्बन्धित अनेक समस्याएं थी तथा बैंकिंग व्यवस्था में कोई भी सुधार नहीं हो पा रहा था। इन व्यवस्थाओं में सुधार हेतु समिति की मुख्य सिफारिशें निम्नलिखित हैं :–

(i) शाखाओं का पुनः आवंटन :–

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को अब अपनी हानि उठाने वाली शाखाओं को मंडी, कृषि उत्पाद केन्द्रों, खंड/जिले के प्रधान कार्यालय जैसे नये स्थानों पर पुनः आवंटन करने की अनुमति दी जायेगी।

(ii) विस्तार काउंटर :–

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अपनी पंसद के स्थान पर विस्तार काउंटर खोल सकेंगे बशर्ते जहां काउंटर खोले जाने का प्रस्ताव हैं उस स्थान पर स्थित संस्थान के वे प्रमुख बैंकर हो। विस्तार काउंटर खोलने के लिए निकटतम शाखा से दूरी, खातों की संख्या, आदि से संबंधित शर्तें क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों पर लागू नहीं होंगी।

(iii) सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

ऐसे क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक जिनके वितरण वर्ष 1992–93 के दौरान 2 करोड़ रूपये से कम थे उन्हें अपने सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण से छूट होगी। ऐसे क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को लक्ष्य समूह के वित्त पोषण के लिये आंवटित गांवों को वाणिज्य बैंकों की शाखाओं के बीच पुनः आवंटित किया जायेगा।

(iv) लक्ष्येतर समूह को उधार :–

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्य और लाभप्रदता में सुधार लाने की दृष्टि से उन्हें अब पहले के 40 प्रतिशत के स्थान पर अपने नये ऋणों के 60 प्रतिशत तक लक्ष्येतर समूह को वित्तीय सहायता देने के लिए अनुमति दी जायेगी।

(v) गैर–निधिक कारोबार :–

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को अपने ग्राहकों की ओर से ड्राफ्टों/चैकों की खरीद/भुनाई करने और गारंटी देने के अधिक अधिकार भी दिये गये हैं। इस प्रयोजन के लिए प्रति ग्राहक और प्रति शाखा ड्राफ्ट/चैक की खरीद/भुनाई के बारे में राशियों की वर्तमान उच्चतम राशियां पहले की 10,000 रूपये और 20,000 रूपये से बढ़ाकर क्रमशः 25,000 रूपये और एक लाख रूपये की गयी हैं। इसके अलावा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अब आनुपातिक जमानत द्वारा समर्थित 50 प्रतिशत के नकदी मार्जिन की तुलना में शत प्रतिशत मार्जिन और 10 लाख रूपये तक के आधार पर किसी भी सीमा के बिना गारंटी दे सकेंगे। वे अब अपनी चुनी हुई शाखाओं में लॉकर सुविधा दे सकेंगे तथा उन्हें यात्री चैक, मांग ड्राफ्ट, डाक/तार अतंरग, आदि जारी करने के लिए अपने प्रायोजक बैंकों के साथ उपयुक्त व्यवस्थाएं करने के लिए अनुमति दी जायेगी।

(vi) भावी परिदृश्य :–

ग्रामीण बैंकों की निरन्तर खराब होती आर्थिक स्थिति के परिणामस्वरूप इन संस्थाओं के पुनर्गठन पर सक्रिय चर्चा जारी हैं। सरकार अभी किसी अंतिम निष्कर्ष पर नहीं पहुंची हैं। पुनर्गठन प्रक्रिया में सरकार मूल स्वरूप से दूर नहीं होना चाहती। साथ ही इन संस्थाओं को सक्षम बनाने की दिशा में निर्णायात्मक कदम भी उठाना चाहती हैं।

प्रस्तावित सूत्रों के अनुसार ग्रामीण बैंकों के पुनर्गठन के अन्तर्गत मूल रूप से 3 प्रस्तावों पर विचार किया जा रहा हैं।

(क) इन बैंकों को प्रायोजक बैंकों में समामेलित कर दिया जाए।

(ख) सभी 196 बैंकों को विलय कर एक अखिल भारतीय राष्ट्रीय ग्रामीण बैंक बनाना या क्षेत्रीय आधार पर कुछ बैंक बना देना।

(ग) वाणिज्यक बैंकों की भांति इन्हें सम्पूर्ण बैंकिंग कारोबर करने की इजाजत दी जाकर लाभकारी बनाना।

उपरोक्त सभी प्रस्तावों के पक्ष विपक्ष में अनेक तर्क वितर्क हैं। संचित घाटे का बोझा कौन उठाए यह मुख्य प्रश्न पुनर्गठन से सीधा जुड़ा हुआ हैं जिसका अभी तक समाधान नहीं हो पाया हैं। ग्रामीण बैंकों की स्वतंत्र पहचान बनाए रखना अथवा विलय के प्रश्न को अधिक दिनों तक टाला जाना इन संस्थाओं के हित में नहीं होगा। असमंजस की स्थिति से उबर कर ठोस निर्णय किए जाने की प्रभावी नीति अपनानी होगी। कई समितियों ने इस विषय में अध्ययन करके सिफारिशें की हैं। वे सिफारिशें विभिन्न मतों का प्रतिपादन करती हैं और कोई सर्वसम्मत हल उभरकर नहीं आया हैं। कई समितियों ने तो स्पष्ट रूप से मत व्यक्त किया हैं कि ग्रामीण बैंकों का गठन बड़ी गलती थी। उनकी स्थापना किसी सुस्पष्ट धारणा पर आधारित नहीं थी। उनकी यह

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

भी मान्यता हैं कि एक कमजोर बैंक किसी भी प्रकार कमजोर वर्ग का हित साधन नहीं कर सकता। अतः जितना शीघ्र हो स्पष्ट निर्णय किया जाना चाहिए।

खैर जो भी निर्णय लिया जाए सबके मूल में एक ही बात होनी चाहिए कि इस पुनर्गठन के पश्चात् ग्रामीण क्षेत्रों में विकास कार्यों के लिए निवेश की प्रक्रिया अथवा मात्रा में बाधा नहीं आनी चाहिए। नया प्रयोग भविष्य में सुधार की दिशा में काम करे न कि विकास प्रक्रिया में बाधा के रूप में।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 नरसिंहम समिति किसकी अध्यक्षता में नियुक्त की गई।

.....

....

.....

प्र. 2 नरसिंहम समिति की स्थापना के उद्देश्य बताइये।

.....

.....

.....

प्र. 3 नरसिंहम समिति की कोई दो सिफारिशें बताइये।

.....

.....

. .....

2.10 सारांश :–

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का संगठन कई तथ्यों जैसे :– स्टाफ की संख्या, व्यापार का स्तर, शाखाओं की संख्या आदि निर्भर करता हैं, इन बैंकों की स्थापना कई उद्देश्यों जैसे ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापार विस्तार, ऋण अग्रिम सुविधा आदि के लिए की गई और इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए समय–समय पर विभिन्न समितियां गठित की गई, जिनकी मुख्य सिफारिशों का विवेचन प्रस्तुत इकाई में किया गया हैं। प्रयास यही हैं कि ये बैंक विकास कार्यों के लिए निवेश की प्रक्रिया में सहायक बन सकें।

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

2.3

उत्तर 1. देखिए 2.3

उत्तर 2. भारतीय रिजर्व बैंक प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों को उनके व्यापार विस्तार तथा ऋण एवं अग्रिम सुविधाओं हेतु ऋण प्रदान करता हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर दीर्घकालीन उद्देश्यों हेतु राष्ट्रीय कृषि साख प्रदान करता हैं।

2.4

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

उत्तर 1. 1975, एम.एल. दांतेवाला की अध्यक्षता में

उत्तर 2. 1. प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों के संगठन व कार्यप्रणाली में कुछ परिवर्तन करने से ये बैंक ग्रामीण साख संरचना के महत्वपूण भाग बन सकते हैं।

2. दांतेवाला समिति ने इन प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों में परिवर्तन करने का सुझाव नहीं दिया।

2.5

उत्तर 1. **Committee to Review the Arrangement for Institutional Credit for Agriculture and Rural Development**

उत्तर 2. 1. चूंकि ये बैंक ग्रामीण विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं, इसलिए इन बैंकों की शाखाओं की स्थापना हेतु लाइसेन्स ग्रामीण क्षेत्रों में दिये जाने चाहिए।

2. रिजर्व बैंक को ग्रामीण व्यापारिक बैंकों का व्यापार इन बैंकों को स्थानान्तरित करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाने चाहिए।

2.6

उत्तर 1. 1. शाखाएं लगभग गांवों के मध्य स्थापित थी जिसके कारण व्यापार की संभावनाएं सीमित हो गई।

2. व्यापारिक बैंकों तथा सहकारी समितियों से प्रतियोगिता के कारण ग्रामीण बैंकों के व्यापार विस्तार में कठिनाई थी।

2.7

उत्तर 1. 1984, एस.एम. केलकर की अध्यक्षता में

उत्तर 2. 1. प्रादेशिक ग्रामीण बैंकों की पुनर्वित्त सुविधा के लिए भी उन्हीं शर्तों को लागू किया गया जो व्यापारिक बैंकों के लिए लागू होती हैं तथा इन पर लगे अन्य प्रतिबंध जैसे साख ऋण अनुपात आदि को हटा दिया गया।

2. इन बैंकों की अंश पूंजी को 1 करोड़ से बढ़ाकर 5 करोड़ कर दिया जाना चाहिए तथा निर्गमित पूंजी को 25 लाख से बढ़ाकर 1 करोड़ कर देना चाहिए।

2.8

उत्तर 1. 1989, डॉ. ए.एम. खुसरों की अध्यक्षता में

उत्तर 2. इस समिति ने इन बैकों को प्रतिभू बैंकों के साथ विलय कर देने की सिफारिश की।

2.9

उत्तर 1. एम. नरसिंहम की अध्यक्षता में

उत्तर 2. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्य और लाभप्रदता में सुधार लाना

उत्तर 3. 1. इन बैंकों को प्रायोजक बैंकों में समामेलित कर दिया जाए।

2. सभी 196 बैंकों को विलय कर एक अखिल भारतीय राष्ट्रीय ग्रामीण बैंक बनाना या क्षेत्रीय आधार पर कुछ बैंक बना देना।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

2.12 शब्द कोष :–

क्षेत्रीय ग्रामीण बैक
लाभप्रदता
कृषि साख समीक्षा समिति
यात्री चैक
पुनर्वित्त सुविधा
प्रायोजक बैंक
अंशपूंजी
जमानत
राष्ट्रीयकरण
लक्ष्येतर समूह
मांग ड्राफ्ट
साख ऋण

2.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Reserve Bank of India Reportson Currency and Finance, 1986-87
2. Report of M. Narsimham Committee on the Financial System Reserve Bank of India, Department of Banking Operations and Development Central Office, World Trade Centre, Nov. 1991, Bombay.
3. Dhingra, I.C., Rural Banking in India, Sultan Chand and Sons, New Delhi.
4. Ravishanker, A. and Chengappa, PG Regional Rural Banks at the Cross Road, Kurukshetra, July 1996.

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

इकाई – 3
केन्द्रीय सहकारी बैंक

3.0 इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 परिचय

3.3 ऐतिहासिक परिदृश्य

3.4 योजनाकाल के पूर्व की स्थिति

3.5 योजनाकाल के अन्तर्गत प्रगति

3.6 सहकारी बैंक के प्रकार

3.7 केन्द्रीय सहकारी बैंकों के उद्देश्य एवं कार्य

3.8 केन्द्रीय सहकारी बैंक का आकार

3.8.1 सदस्यता

3.8.2 शाखा बैकिंग

3.9 सारांश

3.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.11 शब्द कोष

3.12 संदर्भ ग्रंथ

3.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(प) केन्द्रीय सहकारी बैंकों की योजनाकाल के पूर्व क्या स्थिति थी?

(पप) केन्द्रीय सहकारी बैंक कितने प्रकार के होते हैं?

(पपप) केन्द्रीय सहकारी बैंकों के कार्य क्या हैं?

(पअ) केन्द्रीय सहकारी बैंकों का कार्यक्षेत्र क्या हैं?

3.2 परिचय :–

एक निर्दिष्ट क्षेत्र में पड़ने वाली सहकारी बैंक प्राथमिक समितियां एवं केन्द्रीय समिति के रूप में संघबद्ध हैं, जिसे केन्द्रीय बैंक या 'बैंकिंग संघ' कहते हैं। इन संस्थाओं को सहकारी साख के ढ़ांचे में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हैं, क्योंकि वे शिखर सहकारी बैंक और प्राथमिक कृषि साख समितियों के बीच महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में कार्य करती हैं। सहकारी साख आन्दोलन की सफलता एक बडी सीमा तक इन बैंकों की वित्तीय सुदृढ़ता पर निर्भर करती हैं। प्रस्तुत इकाई में केन्द्रीय सहकारी बैंकों के संक्षिप्त परिचय के पश्चात् इनकी एतिहासिक स्थिति को बताया गया हैं, इसके पश्चात् योजनाकाल से पूर्व एवं पश्चात् केन्द्रीय सहकारी बैंकों की प्रगति की जानकारी दी गई, तत्पश्चात् इन बैंकों के उद्देश्यों की जानकारी दी गई तथा केन्द्रीय बैंकों के प्रकार बताये गये हैं।

3.3 ऐतिहासिक परिदृश्य :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

सन् 1905 के पूर्व जबकि पहला सहकारी समिति अधिनियम पास किया गया था, केन्द्रीय समितियों या बैंकों को संगठित करने की कोई व्यवस्था नहीं थी। सहकारिता आन्दोलन के प्रवर्तकों को यह विश्वास था कि ग्रामीण सहकारी समितियाँ ही सदस्यों तथा ग्राम के धनी व्यक्तियों से जमाओं के रूप में काफी धन आकर्षित कर सकेंगी और इस प्रकार से ग्राम के जरूरतमन्द निर्धन व्यक्तियों की वित्तीय आवश्यकताएं पूरी करने में सफल होंगी। उस समय उनकी यह भी धारणा थी कि यदि इन समितियों को अतिरिक्त धन की आवश्यकता होगी तो इसकी पूर्ति ऋण के रूप में सरकार द्वारा कर दी जायेगी। परन्तु प्रवर्तकों की यह धारणा अव्यावहारिक सिद्ध हुई। बहुत सी समितियाँ कुप्रबन्ध तथा असहाय होने के कारण असफल हो गयी, क्योंकि प्रथम तो उन्हें धनी वर्ग से कोई सहयोग प्राप्त नहीं हो सका तथा द्वितीय, वे अपने ही सदस्यों में बचत तथा आत्म–सहायता की भावना का विकास नहीं कर सकीं।

धीरे–धीरे सहकारिता आन्दोलन अधिक लोकप्रिय होने लगा तथा समितियों की संख्या में तेजी से वृद्धि होने लगी। परन्तु उनकी बढ़ती हुई वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पूर्व अनुमानित वित्तीय स्त्रोतों से पर्याप्त वित्त प्राप्त न हो सका। इसलिए सहकारी समिति अधिनियम को 1912 में संशोधित किया गया, जिसके अन्तर्गत केन्द्रीय सहकारी समितियों की स्थापना एवं रजिस्ट्री के लिए अनुमति दी गई। इस सम्बन्ध में यह जान लेना आवश्यक हैं कि इस संशोधन के पूर्व भी कुछ केन्द्रीय बैंक स्थापित हो चुके थे जो प्राथमिक सहकारी समितियों को वित्त प्रदान कर रहे थे। सर्वप्रथम केन्द्रीय बैंक 1906 में उत्तर प्रदेश में एक प्राथमिक समिति के रूप में स्थापित किया गया था, परन्तु वास्तविक केन्द्रीय बैंक की स्थापना सबसे पहले मध्य प्रान्त तथा बिहार में हुई थी। राजस्थान में इस प्रकार का सबसे पहला बैंक अजमेर में 1910 में स्थापित किया गया था। परन्तु संशोधित अधिनियम ने केन्द्रीय वित्तीय संस्थाओं के संगठन को विशेष प्रोत्साहन प्रदान किया, जिसके फलस्वरूप कुछ ही वर्षों में ऐसे कई बैंक स्थापित हो गये। 1906 से 1918 तक की अवधि को देश के विभिन्न भागों में केन्द्रीय बैंक का **'उद्भव काल'** कहा जा सकता हैं।

सन् 1919 से 1929 तक के काल में, जो कि प्रथम विश्व युद्ध और विश्वव्यापी मन्दी के बीच की अवधि हैं, सहकारी बैकिंग प्रणाली का उल्लेखनीय विकास हुआ। सन् 1919–20 में इस प्रकार के बैंकों की संख्या 233 से बढ़कर 1929–30 में 588 हो गयी तथा उनकी सदस्यता भी 1.22 लाख से बढ़कर 1.91 लाख तक पहुंच गयी। कुल कार्यशील पूंजी भी 6.63 करोड़ रूपये से बढ़कर 30.90 करोड़ रूपये हो गयी।

परन्तु 1929 के बाद महान् आर्थिक मन्दी ने इन केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्य व्यवस्था को अव्यवस्थित कर दिया। इन बैंकों के अवधिपार ऋणों (वअमतकनमे) की राशियों मे वृद्धि होने लगी। उनकी सदस्यता भी घटने लगी। 1929–30 में उनकी सदस्यता 90 हजार थी जो घटकर 1936–37 में 85 हजार रह गयी। इसी प्रकार समितियों की सदस्यता भी 1.01 लाख से घटकर 91 हजार तक पहुंच गई। परन्तु बैंकों की संख्या, जो 1929–30 में 588 थी, बढ़कर 1936–37 में 611 हो गयी, क्योंकि इस काल में भारतीय राज्यों तथा उत्तर प्रदेश और बिहार में कुछ नये बैंकों की रजिस्ट्री की गयी थी।

द्वितीय विश्व युद्ध ने पुनः सहकारी बैंकों के विकास को प्रोत्साहन प्रदान किया। इन बैंकों की निजी पूंजी में पर्याप्त वृद्धि हुई। इस काल में इन बैंकों की स्थिति में सामान्य तौर पर सुधार हुआ और उन्होनें आर्थिक मन्दी के समय की अपनी अव्यवस्थित स्थिति को काफी ठीक कर लिया तथा मजबूत बना लिया।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

3.4 योजनाकाल के पूर्व की स्थिति :–

यद्यपि सहकारी बैकिंग व्यवस्था ने युद्धकाल में पर्याप्त प्रगति की थी, फिर भी प्रथम पंचवर्षीय योजना को चालू करने के पूर्व देश के कई भागों में सहकारी बैंकिंग संगठन दुर्बल था तथा उसके अभिनवीकरण (त्ंजपवदंसपेंजपवद) की आवश्यकता थी। कुछ राज्यों (जैसे–पंजाब, बिहार, मध्यप्रदेश, उड़ीसा तथा हैदराबाद) में बहुत अधिक संख्या में केन्द्रीय बैंक तथा बैंकिंग संघ थे। इसका परिणाम यह था कि प्रत्येक केन्द्रीय बैंक से बहुत ही कम संख्या में प्राथमिक समितियाँ सम्बद्ध थी और इससे बैंकों द्वारा किये जाने वाला व्यापार बहुत ही सीमित था। कुछ राज्यों (जैसे–राजस्थान) में इन दुर्बल इकाईयों के एकीकरण के अतिरिक्त एक अन्य समस्या थी जो यह कि बहुत से केन्द्रीय बैंकों का कार्यक्षेत्र एक जिले से अधिक होता था, जिसको सीमित करना भी आवश्यक था। वास्तव में अधिकांश राज्यों में सहकारी केन्द्रीय वित्तीय संस्थाओं का संगठन अव्यवस्थित था जिसको पुनः संगठित करने की आवश्यकता थी। ग्रामीण साख सर्वे कमेटी (Rural Credit Survey Committee) के अनुसार केन्द्रीय सहकारी बैंक उस समय सन्तोषजनक स्थिति में नहीं थे।

कई राज्यों में इन बैंकों की पूंजी का ढ़ाँचा (Capital Structure) बहुत ही दुर्बल था। बम्बई तथा मद्रास को छोड़कर प्रति केन्द्रीय बैंक की औसत पूंजी एक लाख रूपये से भी कम थी। 12 राज्यों में प्रति केन्द्रीय बैंक औसत पूंजी 50,000 रूपये से भी कम थी। इसी प्रकार वैधानिक रक्षित कोष (ststutory reserves) भी एक लाख रूपये से कम था। निजी पूंजी (Owned Capital) तीस लाख रूपये से भी कम थी, जो रिजर्व बैंक की कृषि साख पर सलाहकार समिति (RBI's Standing Advisory Committee on Agriculture Credit) के अनुसार न्यूनतम सीमा थी। केवल तीन राज्यों में ही रिजर्व बैंक की उक्त समिति द्वारा निर्धारित न्यूनतम सीमा के बराबर प्रति बैंक की कार्यशील पूंजी थी।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता हैं कि केन्द्रीय बैंक की पूंजी का ढ़ाँचा दुर्बल था, उनके अपने साधन कम थे और वित्तीय साधनों के लिए वे शीर्ष बैंकों पर ही अधिक निर्भर थे। इन बैंकों की ऋण सम्बन्धी क्रियाओं में निम्नलिखित असन्तोषजनक स्थितियाँ थी :

(1) व्यक्तिगत सदस्यों को अधिक अनुपात में ऋण देना तथा प्राथमिक साख समितियों की आवश्यकताओं के प्रति उपेक्षा बरतना।
(2) कुछ बैकों द्वारा व्यापार किया जाना।
(3) कई राज्यों में अवधिपार ऋणों (Overdues) का प्रतिशत अधिक होना।
(4) कुछ राज्यों में बहुत बड़ी मात्रा में अपर्याप्त तथा संदिग्ध ऋणों (bad and doubtful debts) का होना।
(5) सामान्य तौर पर, केन्द्रीय बैंकों द्वारा नियुक्त किये गये कर्मचारियों का अयोग्य एवं अकुशल होना।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 पहला सहकारी समिति अधिनियम कब पास किया गया था?

.....

.....

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

.....

प्र. 2 राजस्थान में पहला सहकारी बैंक कब और कहां स्थापित हुआ ?

.....

.....

.....

प्र. 3 सर्वप्रथम केन्द्रीय सहकारी बैंक की स्थापना कब और कहां हुई ?

.....

.....

.....

3.5 योजनाकाल के अन्तर्गत प्रगति :–

केन्द्रीय वित्तीय संस्था के संगठन की इस दुर्बल एवं असन्तोषजनक स्थिति को देखकर ग्रामीण साख सर्वे कमेटी ने यह सुझाव दिया था कि प्रत्येक राज्य को केन्द्रीय सहकारी बैंकों के अभिनवीकरण एवं सुदृढ़ीकरण की योजनाएं बनानी चाहिए। इस सुझाव के आधार पर ही प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल में राज्यों में केन्द्रीय सहकारी बैंकों के पुनर्संगठन एवं एकीकरण की नीति अपनायी गयी। इस नीति का द्वितीय पंचवर्षीय योजनकाल में कड़ाई से पालन किया गया तथा 'एक जिले में एक ही केन्द्रीय सहकारी बैंक' स्थापित करने का प्रयास किया गया। जिस जिले में एक से अधिक बैंक या संघ थे, उनका एकीकरण करके जीवन–योग्यता के आधार पर उन्हें एक शक्तिशाली इकाई के रूप में संगठित कर दिया गया। जहां कई जिलों के लिए एक ही केन्द्रीय सहकारी बैंक था, वहां उसका कार्यक्षेत्र एक ही जिले तक सीमित कर दिया गया तथा अन्य जिलों के लिए नये बैंक स्थापित किये गये।

पुनर्संगठन एवं एकीकरण की नीति का यह परिणाम हुआ कि केन्द्रीय सहकारी बैंकों की संख्या 1950–51 में 505 से घटकर 1955–56 में 478 एवं 1960–61 में 380 हो गयी। पुनर्संगठन एवं एकीकरण के कारण इन बैंकों की संख्या, जो 1960–61 में 380 थी, घटकर 3 जून, 1979 में 358 ही रह गयी। केन्द्रीय बैंकों के अभिनवीकरण की योजना प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्त में प्रारम्भ की गई थी, जो तृतीय योजना के अन्त तक परिश्म बंगाल के अतिरिक्त भारत के अन्य राज्यों में पूरी हो गयी।

योजनाओं के अन्तर्गत प्रगति :–

तालिका 1 में योजनाओं के अन्तर्गत केन्द्रीय सहकारी बैंकों द्वारा की गयी प्रगति का विस्तृत विश्लेषण किया गया हैं :

तालिका 1 से स्पष्ट हैं कि योजनाकाल के केन्द्रीय सहकारी बैंकों का बहुमुखी विकास हुआ हैं। विशेष रूप से उनकी कार्यशील पूंजी में वृद्धि हुई हैं। यह पूंजी 1950–51 में 56 करोड़ रूपये थी, जो बढ़कर 1978–79 में 3,376 करोड़ हो गयी। इस प्रकार प्रति बैंक औसत कार्यशील पूंजी भी 11 लाख रूपये से बढ़कर 986 लाख रूपये तक पहुंच गयी। अब ऐसे केन्द्रीय बैंक को जीवन योग्य (टपंइसम) नहीं समझा जाता, जिसकी पूंजी एक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

करोड़ रूपये से कम हैं। 30 जून, 1979 को देश में कुल 338 केन्द्रीय सहकारी बैंकों में से 129 केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यशील पूंजी 5 करोड़ रूपये से अधिक थी तथा 129 केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यशील पूंजी 1 करोड़ से 5 करोड़ के बीच में थी। देश में कोई भी ऐसी बैंक नहीं थी जिसकी कार्यशील पूंजी 1 करोड़ रूपये से कम थी। इससे स्पष्ट हैं कि जहां तक वित्तीय साधनों का प्रश्न हैं, इन बैंकों ने इस दिशा में काफी प्रगति की हैं जिससे वे अब भविष्य में अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

तालिका 1

केन्द्रीय सहकारी बैंकों की प्रगति

विवरण	1950–51	1955–56	1960–61	1965–66	1976–77	1978–79
1. केन्द्रीय बैंक की संख्या	505	478	380	346	344	338
2. सदस्यता (लाखों में)	2.07	3.00	3.87	3.62	2.89	2.71
3. अंश –पूंजी (करोड़ रू.में)	4	9	38	76	269	546
4. जमा पर प्राप्त धन (करोड़ रू. में)	37	56	111	237	1,154	1,669
5. कार्यशील पूंजी (करोड़ रू. में)	56	93	300	584	2,514	3,376
6. औसत प्रति बैंक						
(अ) अंश पूंजी (लाख में)	0.80	2	10	22	78	160
(ब) जमा ('')	7	12	29	68	329	488
(स) कार्यशील पूंजी (लाख रू.)	11	19	79	169	719	986

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 योजनाकाल के पूर्व रिजर्व बैंक की कृषि साख पर सलाहकार समिति के अनुसार निजी पूंजी की न्यूनतम सीमा क्या थी ?

.....

.....

.....

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

प्र. 2 योजनाकाल के पूर्व सहकारी बैंकों की ऋण संबंधी क्रियाओं की कोई दो कमियां बताइये। .....
.....

.....

.....

प्र. 3 सन् 1950–51 में केन्द्रीय बैंकों की संख्या कितनी थी ?

.....

.....

.....

3.6 सहकारी बैंक के प्रकार :–

केन्द्रीय सहकारी बैंकों को उनके संगठन के आधार पर निम्न वर्गों में रखा जा सकता हैं : (1) व्यक्तिगत सदस्यता वाले बैंक, जिनकी सदस्यता व्यक्तियों तक सीमित होती हैं।

(2) समितियों की सदस्यता वाले बैंक, जिनकी सदस्यता समितियों तक सीमित होती हैं।

(3) मिश्रित बैंक जिनकी सदस्यता समितियों तथा व्यक्तियों दोनों के लिए खुली रहती हैं।

3.6.1. व्यक्तिगत सदस्यता वाले बैंक (Banks Confined to Individuals) :–

इस प्रकार के बैंकों की सदस्यता केवल व्यक्तियों के लिए ही खुली रहती हैं। यदि इसमें समितियों को सदस्यता प्रदान भी की जाती हैं तो उन्हें व्यक्तियों की ही तरह अंशधारी के रूप में प्रवेश करने का अधिकार दिया जाता हैं।

3.6.2 समितियों की सदस्यता वाले बैंक (Banks Confined to Individuals) :–

इस वर्ग के बैंकों में सदस्यता केवल प्राथमिक सहकारी समितियों को ही प्रदान की जाती हैं। इनके अंशधारी, ऋणी तथा ऋणदाता वही (अर्थात् प्राथमिक सहकारी समितियां ही) होती हैं। मैकलेगन कमेटी (डंबसंहंद ब्वउउपजजमम) इस प्रकार के शुद्ध (च्नतम) केन्द्रीय बैंकों के ही पक्ष में थी, जिनमें केवल सहकारी समितियां ही सदस्य हो सकती थी। इस प्रकार के बैंक सबसे अच्छे समझे जाते हैं, क्योंकि इनमें अंशधारियों तथा ऋण लेने वाली समितियों के हितों में किसी प्रकार के संघर्ष की संभावना नहीं रहती।

3.6.3 मिश्रित बैंक

इस प्रकार के बैंकों की सदस्यता समितियों तथा व्यक्तियों दोनों के लिए खुली रहती हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 केन्द्रीय सहकारी बैंकों को उनके संगठन के आधार पर कितने वर्गों में रखा गया हैं? नाम बताइये।

.....

.....

.....

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

3.7 केन्द्रीय सहकारी बैंकों के उद्देश्य एवं कार्य :–

केन्द्रीय बैंक का प्रमुख उद्देश्य सदस्य समितियों की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करना हैं। वे कृषि समितियों को उत्पादन कार्यों के लिए, विपणन समितियों को विपणन तथा पूर्ति कार्यों के लिए तथा औद्योगिक एवं अन्य समितियों को उनके कार्यशील व्ययों की पूर्ति करने के लिए वित्त प्रदान करते हैं। ये प्राथमिक समितियों का मुद्रा बाजार से सम्बन्ध स्थापित करने में मध्यस्थ का कार्य करते हैं। वे प्राथमिक समितियों की कार्यशील पूंजी के आधिक्य को स्थानान्तरित करने अथवा उसकी कमी की पूर्ति करने में सन्तुलन केन्द्र (Balancing Centre) का भी कार्य करते हैं। जी. एम. लॉड (G.M. Laud) के अनुसार, ''जिला सहकारी बैंकों की स्थापना के पीछे आधारभूत विचार यह हैं कि प्राथमिक साख समिति (जो कि ग्रामीण आवश्यकताओं के सन्दर्भ में कृषकों द्वारा संचालित की जाती हैं, और जिसका मुद्रा बाजार से कोई सम्पर्क नहीं हैं) तथा, प्रान्तीय सहकारी बैंक (जो कि मुख्यता नगर के व्यक्तियों द्वारा, जिनकी शहरी पृष्ठभूमि होती हैं, संचालित किये जाते हैं और इसलिए इनका देहाती क्षेत्रों में कोई घनिष्ठ सम्पर्क नहीं होता) के बीच एक मध्यस्थ–संस्था होना आवश्यक हैं।'' समितियों को ऋण देने के अतिरिक्त वे उन्हें कुछ सामान्य बैंकिंग सुविधाएं भी प्रदान करते हैं, जैसे – जमा पर धन स्वीकार करना, कोषों का स्थानान्तरण चैकों के धन की वसूली, आदि। कुछ राज्यों में ये बैंक समितियों के कार्यों की जांच अथवा उनका निरीक्षण भी करते हैं। संक्षेप में इन बैंकों के निम्नलिखित कार्य हैं :–

(1) सन्तुलन केन्द्र के रूप में कार्य करना :– प्राथमिक समितियों की आवश्यकता पड़ने पर वित्त प्रदान करना अथवा उनके अतिरिक्त धन के लिए समाशोधन–गृह के रूप में कार्य करना, अर्थात् उनके अतिरिक्त धन (कोष), को अन्य समितियों को देकर उत्पादक कार्यों के लिए उनका प्रयोग करना।
(2) सदस्यों में बचत तथा मितव्ययता की भावना का विकास करना।
(3) प्राथमिक समितियों को अपने रक्षित कोषों के सुरक्षित विनियोग की सुविधा प्रदान करना।
(4) सदस्यों को अन्य बैंकिंग सुविधाएं प्रदान करना।
(5) ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार करना।
(6) द्वितीय स्तर पर जिले में सहकारी आन्दोलन का विस्तार करना।
(7) सदस्य समितियों की कार्य प्रणाली का निरीक्षण, नियन्त्रण एवं पथ प्रदर्शन करना।

उल्लेखनीय हैं कि भारत और यूरोपीय देशों के केन्द्रीय सहकारी बैंकों में एक बहुत ही महत्वपूर्ण अन्तर यह हैं कि यूरोपीय देशों में उनका मुख्य कार्य जहां और जब प्रचुरता उपलब्ध हो द्रव्य लेना और जहां व जब इसका अभाव हो, इसे वितरित करना होता हैं किन्तु भारत में इनका मुख्य कार्य आन्दोलन से बाहर के स्त्रोतों से पूंजी प्राप्त करके समितियों को प्रदान करना हैं। यह बात इस तथ्य से स्पष्ट हो जाती हैं कि भारत में उधार पूंजी कुल कार्यशील पूंजी का लगभग 50 प्रतिशत हैं जबकि यूरोपीय देशों में यह प्रतिशत काफी नीचा हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 केन्द्रीय सहकारी बैंकों के कोई दो कार्य बताइये।

.....

.....

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

.....

3.8 केन्द्रीय सहकारी बैंक का आकार

एक कुशल तथा आर्थिक इकाई बनने के लिए किसी भी केन्द्रीय सहकारी बैंक का एक ऐसा कार्यक्षेत्र होना चाहिए, जो उसे पर्याप्त व्यवसाय करने का अवसर प्रदान कर सकें तथा उसकी जीवन योग्यता में वृद्धि कर सकें। साथ ही साथ यह भी आवश्यक हैं कि उसका कार्यक्षेत्र इतना अधिक विस्तृत न हो कि वह उन प्राथमिक सहकारी समितियों की जिनके लिए इसकी स्थापना की गई हैं, पहुंच के बाहर हो। पहले अधिकांश सहकारी बैंकों का कार्यक्षेत्र इतना संकुचित एवं सीमित होता था कि आर्थिक इकाईयों के रूप में कार्य करने के रूप में असमर्थ थे। ग्रामीण साख सर्वे कमेटी ने यह सुझाव दिया था कि उनके आदर्श एवं अनुकूलतम आकार (Optimum Size) के लिए यह आवश्यक हैं कि प्रत्येक जिले में एक केन्द्रीय सहकारी बैंक हो। आर्थिक या जीवन योग्य इकाइयों (economic or viable units) से भी अधिक और सुदृढ़ता (strength) पर दिया गया। एक जिला, एक बैंक की नीति का अनुसरण करने से आशा की गयी कि बैंक एक सशक्त इकाई बन सकेंगे तथा सहकारी साख के ढ़ांचे में निचले स्तरों की समितियाों के प्रति अपनी जिम्मेदारियां अधिक कुशलता के साथ निभा सकेंगे। यह मानक सहकारी बैंकों की रचना के लिए अन्य मानकों (जैसे–एक न्यूनतम कार्यशील पूंजी होना) की अपेक्षा अधिक स्थायी आधार प्रदान कर सकेगा, क्योंकि (उदाहरणार्थ) न्यूनतम कार्यशील पूंजी का मानक अपनाये जाने की दशा में बैंकों के निरन्तर पुनर्गठन की आवश्यकता पड़ेगी। इसी प्रकार, न्यूनतम ग्रामीण परिवार वाला मानक अपनाने पर यह संभव हैं कि बैंक ऐसे क्षेत्र वाले बन जाएं जो कि जिलों की सीमाओं को काटने लगे।

3.8.1 सदस्यता :–

केन्द्रीय सहकारी बैंक की सदस्यता प्राथमिक सहकारी समितियों तथा व्यक्तियों दोनों के लिए ही खुली रहती हैं। केवल वे ही प्राथमिक समितियां इनकी सदस्य बन सकती हैं जिनकी रजिस्ट्री इनके कार्यक्षेत्र में की जाती हैं। व्यक्तिगत सदस्यता के लिए भी यह आवश्यक हैं कि सदस्यता प्राप्त करने वाले व्यक्ति उसके कार्यक्षेत्र में निवास करते हो। व्यक्तिगत सदस्यता के प्रश्न पर काफी समय तक विशेषज्ञों में मतभेद रहा हैं। मैकलेगन कमेटी (Maclagan Committee) व्यक्तिगत सदस्यता रहित शुद्ध केन्द्रीय बैंक के पक्ष में थी। केन्द्रीय बैंकिंग जांच कमेटी (Central Banking Enquiry Committee) व्यक्तिगत सदस्यता के पक्ष में थी। ग्रामीण साख सर्वे कमेटी (Rural Credit Survey Committee) ने उस समय तक के लिए, जब तक कि क्षेत्र विशेष में सहकारी समिति का गठन नहीं हो जाता, कृषकों को व्यक्तिगत सदस्यता प्रदान करने का सुझाव दिया था। मेहता कमेटी (Mehta Committee on Co-operation) ने यह सुझाव दिया हैं कि अधिक संख्या में व्यक्तियों को सदस्यता प्रदान करने की चेष्टाएं करना ठीक नहीं हैं।

आधुनिक प्रवृत्ति कम से कम व्यक्तियों को सदस्य बनाने तथा प्राथमिक समितियों तक ही केन्द्रीय सहकारी बैंक की सदस्यता सीमित रखने की हैं। इन बैंकों की सदस्यता का अध्ययन करने पर ज्ञात होता हैं कि 1955–56 में व्यक्तिगत सदस्यता 144 लाख थी जो घटकर 1978–79 में 69,930 रह गयी। इसके विपरित, उसी काल में समितियों की सदस्यता 1.56 लाख से बढ़कर 2 लाख हो गयी। इस समय केन्द्रीय सहकारी बैंकों की 74 प्रतिशत से अधिक सदस्यता समितियों की हैं। मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु तथा गुजरात में व्यक्तिगत

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

सदस्यता अब भी अधिक हैं। व्यक्तिगत सदस्यता को कम करने के लिए उनके अधिकारों को सीमित कर दिया गया हैं। उन्हें अब ऋण नहीं दिया जाता तथा प्रबन्ध–मण्डल में भी एक निश्चित संख्या से अधिक संचालकों को नियुक्त करने का अधिकार नहीं हैं।

3.8.2 शाखा बैंकिंग :–

केन्द्रीय सहकारी संस्थाओं का सम्बन्ध प्राथमिक स्तर पर स्थित सहकारी समितियों से स्थापित करने के लिए ग्रामीण साख सर्वे कमेटी ने गांव तथा जिले के मध्य स्तर (international level) पर केन्द्रीय सहकारी बैंक की शाखा खोलने की आवश्यकता पर जोर दिया था। प्राथमिक सहकारी समितियों की संख्या तथा उनके ऋण सम्बन्धी कार्यों में वृद्धि होने पर केन्द्रीय सहकारी बैंकों की शाखाएं खोलना अधिक आवश्यक सा प्रतीत होने लगा। अब यह महसूस किया जाने लगा हैं कि केन्द्रीय बैंकों की शाखाएं खुल जाने पर सदस्यों के ऋण सम्बन्धी आवेदन पत्रों पर शीघ्र कार्यवाही करने में सुविधा होगी तथा ग्रामीण क्षेत्र के लोगों की बचत को जमा के रूप में आकर्षित करने में कोई कठिनाई भी नहीं होगी। अधिकांश राज्यों में शाखा विस्तार कार्यक्रम अपनाया गया हैं। फलस्वरूप केन्द्रीय सहकारी बैंकों की शाखाओं की संख्या जो 1950–51 में 759 थी, बढ़कर 1978–79 में 6,890 हो गयी। इस प्रकार प्रति बैंक औसत शाखा जो पहले 1 थी इस अवधि में बढ़कर 20 हो गयी। मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात तथा उत्तरप्रदेश में शाखा बैंक व्यवस्था पर अधिक जोर दिया गया हैं। यह वास्तव में एक महत्वपूर्ण तथ्य हैं कि गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, उड़ीसा, पंजाब तथा पश्चिम बंगाल में केन्द्रीय सहकारी बैंकों की शाखाओं की संख्या राज्य की तहसीलों की कुल संख्या के या तो बराबर हैं या उससे अधिक हैं।

परन्तु केन्द्रीय बैंकों की शाखा बैंक व्यवस्था तथा उसके विस्तार के सम्बन्ध में कुछ बातों को ध्यान में रखना आवश्यक हैं। इस सम्बन्ध में यह देखा गया हैं कि कुछ राज्यों में शाखाओं को खोलने का उद्देश्य केवल ऋण लेने वाली समितियों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में उनको सुविधा प्रदान करना ही रहा हैं, न कि ग्रामीण क्षेत्र की बचत एकत्र करना, जो कि उसका प्रमुख उद्देश्य हैं। इसके अतिरिक्त कुछ राज्यों में स्वयं केन्द्रीय सहकारी बैंक अभी नयी संस्थाएं हैं जिनका मुख्य कार्यालय ही ठीक ढ़ंग से संगठित नहीं हो सका हैं। ऐसी स्थिति में इन बैंकों के लिए अपनी शाखाएं खोलना उचित प्रतीत नहीं होता। यदि केन्द्रीय सहकारी बैंक अपनी शाखाएं खोलना चाहते हैं तो उन्हें अपने कर्मचारियों तथा जांच विधि की कुशलता में पर्याप्त वृद्धि करनी होगी। जब तक कि प्रमुख कार्यालय द्वारा एक न्यूनतम प्रमाप की कार्यकुशलता तथा एक निश्चित मात्रा में व्यापार के लक्ष्य प्राप्त नहीं कर लिये जाते, तब तक किसी भी बैंक को शाखा विस्तार की कल्पना नहीं करनी चाहिए।

3.9 सारांश :–

एक निर्दिष्ट क्षेत्र में पड़ने वाली सहकारी प्राथमिक समितियां एक केन्द्रीय समिति के रूप में संघबद्ध हो जाती है जिसे केन्द्रीय बैंक या बैंकिंग संघ कहते हैं। प्रस्तुत इकाई में केन्द्रीय सहकारी बैंकों की स्थापना की विस्तृत विवेचना की गई हैं। इसमें बताया गया हैं किन परिस्थितियों में इन बैंकों की आवश्यकता महसूस की गई, इसकी सदस्यता योजनाकाल में प्रगति आदि की विस्तृत विवेचना की गई हैं। संगठन के आधार पर केन्द्रीय सहकारी बैंक तीन प्रकार के होते हैं 1. व्यक्तिगत सदस्यता वाले बैंक 2. समिति सदस्यता वाले बैंक एवं 3. मिश्रित बैंक। इन्हीं की विवेचना उपर्युक्त इकाई में की गई हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

3.10 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

3.4

उत्तर 1. सन् 1905 में

उत्तर 2. अजमेर, सन् 1910 में

उत्तर 3. सन् 1906 में उत्तर प्रदेश में

3.5

उत्तर 1. 1 लाख

उत्तर 2. 1. कुछ बैकों द्वारा व्यापार किया जाना।
2. कई राज्यों में अवधिपार ऋणों (Overduè) का प्रतिशत अधिक होना।

उत्तर 3. 505

3.6

उत्तर 1. संगठन के आधार पर केन्द्रीय सहकारी बैंक तीन प्रकार के होते हैं 1. व्यक्तिगत सदस्यता वाले बैंक 2. समिति सदस्यता वाले बैंक एवं 3. मिश्रित बैंक। इन्हीं की विवेचना उपर्युक्त इकाई में की गई हैं।

3.7

उत्तर 1. 1. सदस्यों में बचत तथा मितव्ययता की भावना का विकास करना।
2. प्राथमिक समितियों को अपने रक्षित कोषों के सुरक्षित विनियोग की सुविधा प्रदान करना।

3.11 शब्द कोष :–

न्यूनतम ग्रामीण परिवार	सहकारी समिति अधिनियम
कुप्रबन्ध	सहकारिता आन्दोलन
उद्भव काल	अवधिपार ऋण
अभिनवीकरण	ग्रामीण साख सर्वे कमेटी
वैधानिक रक्षित कोष	संदिग्ध ऋण
पुनर्संगठन	जीवन योग्य
मिश्रित बैंक	मैकलेगन कमेटी
अंशधारी	सन्तुलन केन्द्र

3.12 संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. बी.एस. माथुर, ''सहकारिता'' साहित्य भवन, आगरा
2ण Deshpande D.V. M.K. Mudgal, and K.K. Gupta, Working oaoer on RRBs at Cross Road, Bunkers Institute of Rural Development, Lucknow
3. Bhat, N.S., Rural Banking in India.
4. Desai, SSM, Agriculture and Rural Banking in India, Himalya Publications
5. Singh, R.P. and Sathees Babu K. Performanve and Prospects of Reginal Rural Banks – An appraisal, Kurukshetra, July 1996

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

इकाई – 4

केन्द्रीय सहकारी बैंकों की पूंजी एवं ऋण संबंधी क्रियाएं

4.0 इकाई की रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 परिचय

4.3 कार्यशील पूंजी के स्त्रोत

4.3.1 अंश पूंजी

4.3.2 वैधानिक एवं अन्य कोष

4.3.3 जमाएं

4.3.4 उधार लेना

4.4 ऋण संबंधी क्रियाएं

4.4.1 ऋण देने की क्रियाविधि

4.4.2 अतिदेय

4.4.3 जमानत

4.5 प्रबंध

4.6 सारांश

4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.8 शब्द कोष

4.9 संदर्भ ग्रंथ

4.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(i) केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यशील पूंजी के स्त्रोत कौन–कौन से हैं ?

(ii) केन्द्रीय सहकारी बैंक के द्वारा किन उद्देश्यों के लिए तथा कितने–कितने ऋण दिये जाते हैं?

(iii) केन्द्रीय सहकारी बैंकों का प्रबंध किस प्रकार किया जाता हैं?

4.2 परिचय :–

केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यशील पूंजी के विभिन्न स्त्रोत हैं जैसे – अंश पूंजी, संचित तथा अन्य कोष, सदस्यों से प्राप्त जमा पर धन एवं सरकार से अनुदान आदि। इसी प्रकार सहकारी बैंको के ऋण देने के भी अलग–अलग उद्देश्य हैं। प्रस्तुत इकाई में सहकारी बैंकों की कार्यशील पूंजी के विभिन्न स्त्रोतों का विवेचन किया गया हैं तथा ऋण संबंधी कार्यों की विस्तृत विवेचना की गई हैं।

4.3 कार्यशील पूंजी के स्त्रोत :–

केन्द्रीय बैंक की कार्यशील पूंजी के निम्नलिखित स्त्रोत हैं :

(1) अंश पूंजी (Share Capital)

(2) संचित तथा अन्य कोष (Reserves and other funds)

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(3) सदस्यों तथा गैर सदस्यों से जमा पर प्राप्त धन (Deposit from Members and Non-members)।

(4) प्राप्त ऋण (Borrowing from)

  (i) राज्य सहकारी बैंक से।

  (ii) रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया से।

  (iii) सरकार से।

(5) सरकार से अनुदान (Grants from Government)।

4.3.1. अंश पूंजी (Share Capital) :–

केन्द्रीय सहकारी बैंक की अंश पूंजी सम्बद्ध प्राथमिक समितियों तथा व्यक्तिगत सदस्यों द्वारा प्रदान की जाती हैं। अंश (ितम) का अंकित मूल्य 50 रू. से 100 रू. तक का होता हैं। केन्द्रीय बैंकों के नवीनतम उपनियमों के अन्तर्गत प्राथमिक समितियों के लिए यह अनिवार्य नियम बना दिया गया हैं कि वे बैंक से लिये जाने वाले ऋणों के अनुपात में सहकारी बैंक के अंश खरीदेंगी। मेहता कमेटी ने केन्द्रीय सहकारी बैंकों की अंश–पूंजी को मजबूत बनाने को विशेष महत्वपूर्ण माना हैं। उसने यह सुझाव दिया हैं कि प्राथमिक सहकारी समितियों को बैंक से प्राप्त होने वाले ऋण के 1/20 भाग के बराबर मूल्य के केन्द्रीय बैंक के अंश खरीदना चाहिए। इन बैंकों के वित्तीय ढ़ांचे को मजबूत बनाने तथा उनमें जनता का विश्वास जाग्रत करने के उद्देश्य से राज्य सरकार इन बैंकों के अंश खरीदती रहती हैं।

योजनाकाल में इन बैंकों की चुकता पूंजी में पर्याप्त वृद्धि हुई हैं। 1950–51 में यह पूंजी 4 करोड़ रूपये के बराबर थी जो बढ़कर 1978–79 में 318 करोड़ रूपये के बराबर हो गयी। प्रति बैंक औसत पूंजी भी, जो प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल के प्रारम्भ में 80 हजार रूपये थी बढ़कर 1978–79 के अन्त में 94 लाख रूपये हो गयी। इसी अवधि में कार्यशील पूंजी में अंश–पूंजी का अनुपात भी 7 प्रतिशत से बढ़कर 16 प्रतिशत हो गया। केन्द्रीय सहकारी बैंकों की अंश–पूंजी में राज्यों के अंशदान भी 10 करोड़ रूपये से बढ़कर 93 करोड़ रूपये तक पंहुच गये। राज्यों का यह अंशदान बैंकों की कुल अंश–पूंजी में 30 प्रतिशत के बराबर था।

4.3.2 वैधानिक एवं अन्य कोष (Statutory & other Reserves) :–

वर्तमान समय में केन्द्रीय बैंक निम्न 4 प्रकार के कोष बनाते हैं : (1) वैधानिक कोष, (2) अप्राप्य तथा संदिग्ध ऋण कोष (Bad and Doubtful Debts Reserves), (3) कृषि साख स्थायीकरण कोष (Agricultural Credit Stabilisation Fund), तथा (4) अन्य कोष। 1950–51 में इन बैंकों का वैधानिक कोष 2.40 करोड़ रूपये का था जो बढ़कर 1978–79 में 53 करोड़ रूपये तक पंहुच गया। 10 राज्यों – आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, हरियाणा, केरल, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, पंजाब तथा उत्तर प्रदेश – में बैंकों के वैधानिक कोष में एक करोड़ रूपये से अधिक की रकम हैं। अन्य राज्यों में वैधानिक कोष में पर्याप्त रकम नहीं हैं।

वैधानिक सुरक्षित कोष रखने के अतिरिक्त अधिकांश केन्द्रीय बैंक अब अप्राप्य एवं संदिग्ध ऋण कोष भी रखते हैं। ऐसे कोष बनाने का उद्देश्य संदिग्ध एवं डूबे ऋणों को अपलिखित करने के लिए बैंक अधिकारियों के अधीन कुछ कोष उपलब्ध कराना हैं। ये कोष 1950–51 में 96 लाख रू. से बढ़कर 1978–79 में 59.4 करोड़ रू. हो गये। किन्तु उल्लेखनीय हैं कि ये अप्राप्य और संदिग्ध ऋण कोष वास्तव में डूबने वाले ऋणों की भरपाई के लिए अपर्याप्त रहे हैं। 1978–79 में डूबने और संदिग्ध ऋणों का अनुमान 92 करोड़ रू. था।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

कृषि साख स्थायीकरण कोष (Agricultural Credit Stabilisation Fund) :– ग्रामीण साख सर्वे समिति ने यह सिफारिश की थी कि रिजर्व बैंक में राष्ट्रीय स्तर पर कृषि साख (स्थायीकरण) कोष स्थापित किया जाये और ऐसे ही स्थायीकरण कोष विभिन्न स्तरों पर सहकारी साख संस्थाओं में बनाये जायें। ताकि कृषि कार्यों के हेतु दिये गये अल्पकालीन ऋणों को (यदि इनका पुनर्भुगतान अकाल, सूखा जैसी आपदाओं के कारण कठिन हो गया हैं) मध्यमकालीन ऋणों में परिणत किया जा सकें। राष्ट्रीय कृषि साख (स्थायीकरण) कोष रिजर्व बैंक ने 1956 में ही बना दिया था किन्तु राज्य एवं जिलर सहकारी स्तरों पर ऐसी व्यवस्थाएं करने में विशेष प्रगति नहीं हुई हैं, क्योंकि एक तो बैंकों के पास पर्याप्त धन नहीं था, और दूसरे ऐसे कार्यकलापों के लिए कोई निश्चित क्रियाविधि नहीं बनायी गयी थी। अतः ग्रामीण कृषि साख स्थायी सलाहकार समिति ने राज्य और केन्द्रीय बैंकों में कृषि साख स्थायीकरण कोषों की स्थापना के लिए एक विस्तृत स्कीम को अन्तिम रूप दिया और आवश्यक कार्यवाही के लिए सभी राज्य सरकारों के पास भेजा। इस स्कीम की प्रमुख विशेषताएं निम्नांकित थी :

- शीर्ष और केन्द्रीय सहकारी बैंकों को चाहिए कि अपने शुद्ध लाभ का 15 प्रतिशत प्रतिवर्ष अपने स्थायीकरण कोषों में हस्तान्तरित करें।
- राज्य सरकारों को चाहिए कि सहकारी साख संस्थाओं में लिये हुए अपने अंशों पर 3 प्रतिशत से अधिक जितना लाभांश प्राप्त करें वह सब का सब (न कि केवल भाग, जिसका सुझाव ग्रामीण साख सर्वे समिति ने दिया था) स्थायीकरण कोष में दे दें।
- राज्य सरकारें एक मुश्त योगदान शिखर स्तर पर बनाये गये स्थायीकरण कोषों में दे सकती हैं। यह योगदान विभिन्न राज्यों में केन्द्रीय बैंक स्तर पर कृषि ऋण शेषों (वनजेजंदकपदह वि हतपबनसजनतंस सवंदे) के 5 से 10 प्रतिशत तक सीमित हो सकता हैं।
- यह भी सुझाव दिया गया कि उपर्युक्त योगदान का 50 प्रतिशत भाग अनुदान के रूप में और शेष 50 प्रतिशत ब्याज मुक्त ऋण के रूप में होना चाहिए।

किन्तु स्थायीकरण कोषों की स्कीम ने कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं की हैं यद्यपि अधिकांश राज्य सरकारों ने इन कोषों के सम्बन्ध में आवश्यक नियम बना दिये हैं। केन्द्रीय सहकारी बैंकों ने जो स्थायीकरण कोष 1978–79 में बनाये उनमें जमा धन केवल 30 करोड़ रू. था। कुछ केन्द्रीय बैंकों के उपनियमों में केन्द्रों में बैंकों के 15 प्रतिशत योगदान के लिए कोई प्रावधान नहीं किया गया हैं। यही नहीं, कुछ केन्द्रीय बैंकों ने ऐसा प्रावधान होने के बावजूद अपने स्थायीकरण कोष नहीं बनाये हैं। कुछ बैंकों ने बहुत मामूली राशि ही इन कोषों में डाली हैं।

निजी कोष :–

केन्द्रीय सहकारी बैंकों के निजी कोषों (वूदमक निदके) में अंश–पूंजी तथा अन्य कोषों को सम्मिलित किया जाता हैं। अंश–पूंजी तथा कोषों में वृद्धि होने के कारण बैंकों के निजी कोषों में भी पर्याप्त वृद्धि हुई हैं। निजी कोषों को बढ़ाना इसलिए महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि कई राज्यों में ऋण प्राप्त करने की अधिकतम सीमा निजी कोषों के आधार पर निर्धारित की जाती हैं। 30 जून, 1979 को समस्त केन्द्रीय बैंकों के निजी कोष 546 करोड़ रूपये के बराबर थे। इनकी कार्यशील पूंजी में इन कोषों के अनुपात में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ हैं। 1960–61 में यह अनुपात 16.7 प्रतिशत था जो 1978–79 में 16.2 प्रतिशत रहा हैं।

4.3.3 जमाएं :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

केन्द्रीय सहकारी बैंकों को सदस्यों तथा गैर–सदस्यों में जमा पर धन प्राप्त होता हैं। इनके वित्तीय स्त्रोतों में जमा पर प्राप्त धन का तीसरा स्थान हैं। किसी भी कृषि उत्पादन कार्य में इस स्त्रोत से प्राप्त होने वाले वित्त की अपेक्षा नहीं की जा सकती। सभी कमेटियों तथा आयोगों ने इस बात पर जोर दिया हैं कि केन्द्रीय सहकारी बैंकों को ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों के लोगों के जमा धन पर प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए जिससे वे प्राथमिक समितियों को कृषि विकास के लिए आवश्यक वित्त प्रदान करने में समर्थ हो सकें।

सहकारी साख विषेयक कमेटी (Committee on Co-operative Credit), 1960 ने यह सिफारिश की थी कि सहकारी बैंकों को अर्द्ध–सरकारी संस्थाओं के कोष जमाओं के रूप में प्राप्त करने की पात्रता प्रदान की जाय और इस बात के प्रयास किये जाएं कि उन्हें ये कोष जमा हेतु वास्तव में प्राप्त भी हों। यद्यपि भारत सरकार ने राज्य सरकारों को सुझाव दिया था कि राज्य सहकारी बैंकों और ऐसे केन्द्रीय सहकारी बैंकों को, जो कि 3 वर्ष तक लगातार अंकेक्षण के अ और ब वर्गों में रखे जाते रहे हैं, स्थानीय निकायों और संविधिक संस्थाओं की जमाएं प्राप्त करने के आशय के लिए स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया के समकक्ष माना जाय, तथापि, जैसा कि अखिल भारतीय ग्रामीण साख समीक्षा समिति ने अपनी रिपोर्ट में बताया हैं, अनेक राज्यों में यह सुझाव लागू नहीं किया गया हैं। गुजराम, मध्यप्रदेश और तमिलनाडु में राज्य सरकारों ने स्थानीय निकायों को अपनी जमाएं सहकारी बैंकों में रखने की अनुमति दे दी हैं किन्तु महाराष्ट्र ही एक ऐसा राज्य हैं जहां कि पर्याप्त मात्रा में डिपाजिट्स आकर्षित किये जा सके हैं। अन्य राज्यों में, अनुमति मिलने पर भी, जमाएं प्राप्त करने में सहकारी बैंकों ने कोई विशेष प्रगति नहीं की हैं।

जमा पर धन प्राप्त करने में कठिनाई : केन्द्रीय सहकारी बैंकों द्वारा जमा पर धन प्राप्त करने में कई अड़चने हैं। वास्तव में केन्द्रीय बैंकों को व्यापारिक बैंकों की प्रतिस्पर्द्धा के कारण जमा पर अधिक धन प्राप्त नहीं हो सका हैं। कहा जाता हैं कि (1) व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंकों की तुलना में जमा पर अधिक ब्याज देते हैं, (2) उन्हें जमा बीमा की सुविधाएं भी प्राप्त होती हैं तथा (3) कुछ राज्यों में स्थानीय तथा शिक्षण संस्थाओं द्वारा अपने अतिरिक्त कोषों को केन्द्रीय सहकारी बैंकों में नियोजित किये जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं। इन सभी कारणों से व्यापारिक बैंकों का व्यवसाय निश्चय ही अधिक विस्तृत होता हैं।

उल्लेखनीय हैं कि राज्य सरकारें उक्त कठिनाईयों और बाधाओं को दूर करने के लिए प्रयत्न कर रही हैं। उदाहरणार्थ, राज्य सरकारों ने इस आशय के आदेश जारी कर दिये हैं कि पंचायती राज संस्थाएं, नगरपालिकाएं, शिक्षण संस्थाएं आदि अपनी बचतें सहकारी बैंकों में जमा करा सकती हैं।

ससंद ने जमा बीमा निगम (संशोधन) अधिनियम, 1968 पास कर दिया हैं। किन्तु जमा बीमा योजना के लाभ सहकारी बैंकों को तब ही मिल सकेंगे जबकि राज्य सहकारी समिति अधिनियमों में आवश्यक संशोधन कर दिये जाये, जिससे की रिजर्व बैंक सहकारी बैंकों के अतिक्रमण, पुर्गठन तथा परिसमापन सम्बन्धी अधिकारों का प्रयोग कर सकें।

जमा पर धन आकर्षित करने के लिए केन्द्रीय सहकारी बैंकों ने अपनी ाखाएं खोलना भी आरम्भ कर दिया हैं। 30 जून, 1974 को शाखाओं की संख्या 4,832 थी जो 30 जून, 1979 को बढ़कर 6,890 हो गई।

परन्तु इस सम्बन्ध में ध्यान रहे कि जब तक केन्द्रीय सहकारी बैंक व्यापारिक बैंकों की तरह कुशल प्रबन्ध की व्यवस्था नहीं करेंगे तब तक उन्हें जनता की बचत जमा के रूप में प्राप्त नहीं हो सकेगी। व्यापारिक

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

बैंक लोगों से जमा पर धन प्राप्त करने में केवल इसलिए सफल नहीं होते हैं कि वे अधिक ब्याज देते हैं अथवा उन्हें जमा बीमा योजना की सुविधा प्राप्त हैं, बल्कि वे सफल इसलिए हैं कि उनका संगठन अधिक सुदृढ़ तथा प्रबन्ध अधिक कुशल हैं। उन्होनें धैर्य तथा परिश्रम से जनता का विश्वास प्राप्त किया हैं तथा वे अपने ग्राहकों की सेवाएं करके उनसे सम्पर्क स्थापित करने में सफल होते हैं। केन्द्रीय सहकारी बैंकों में इन गुणों का अभाव हैं। जबकि व्यापारिक बैंकों के अधिकारी तथा संचालक जनता की बचत आकर्षित करने का पूर्ण प्रयास करते हैं, तब केन्द्रीय सहकारी बैंक के अधिकारियों को जो अधिकतर राजनीतिज्ञ एवं उच्च रोज्याधिकारी होते हैं, इन छोटे–मोटे कार्यों को करने का समय ही नहीं मिलता। इस उपेक्षा के कारण ही केन्द्रीय सहकारी बैंक जनता की बचत आकर्षित करने में असफल रहे हैं। जमाएं आकर्षित करने में केन्द्रीय सहकारी बैंकों की असफलता के अन्य कारण इस प्रकार हैं – (1) अच्छी सम्भावनाओं वाले केन्दों में कार्यालयों का अभाव होना, (2) अकुशल प्रबन्ध, (3) ऋण स्तर नीचा होना, (4) ऊँचे अतिदेय (5) निम्न हैसियत, (6) चैकों को भुनाने की सुविधा एवं अन्य बैंकिंग सेवाओं का अभाव, (7) कार्यालयों की स्थिति असुविधाजनक होना तथा उपयुक्त भवनों का अभाव एवं (8) राजनीतिक दल या गुट विशेष से बैंक का बंधा होना।

उल्लेखनीय हैं कि जमाएं बढ़ाने के लिए इन बैंकों को अवश्य ही पूर्ण प्रयास करना चाहिए, क्योंकि अल्पकालीन एवं सुदृढ़ सहकारी साख का ढाँचा उस समय तक नहीं खडा किया जा सकता जब तक कि ये बैंक जनता की बचत आकर्षित करके अपनी जमा राशियों में वृद्धि नहीं करेंगे।

जमाएं बढ़ाने के उपाय :–

सहकारी साख सरंचना संघात्मक होने के कारण केन्द्रीय सहकारी बैंक जो कि उच्च स्तरीय संगठन हैं, आधार स्तरीय प्राथमिक समितियों की साख सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के जिम्मेदार हैं। अतः यह अति महत्वपूर्ण हैं कि केन्द्रीय सहकारी बैंक शहरी क्षेत्रों में जमाएं एकत्र करने के लिए विशेष प्रयत्न करें, ताकि ये बचतें ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि विकास के लिए उपलब्ध की जा सकें। उन्हें इन दिशाओं में सक्रिय प्रयास करने चाहिए :–

(1) अपने कार्यालयों के लिए व्यापारिक क्षेत्रों में उपयुक्त स्थान प्राप्त करें।
(2) अपने ग्राहकों को बेहतर सेवाएं प्रदान करें।
(3) स्थानीय निकायों, शिक्षण संस्थाओं आदि की जमाएं प्राप्त करें।
(4) प्रतिस्पर्धात्मक ब्याज दर प्रदान करें।
(5) अधिक जमाएं खोलें।
(6) जमाओं को गतिशील बनाने हेतु प्रत्येक ब्लॉक प्रशासन की सहायता से अभियान संगठित चलाएं।

रिजर्व बैंक से मिलने वाली रियायती वित्त को डिपाजिटों के एकत्रण से सम्बन्धित करना (Linking Concessional Finance from Reserve Bank with Deposit Mobilisation) – रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया ने अपनी रियायती वित्त को केन्द्रीय सहकारी बैंकों द्वारा डिपाजिटों को गतिशील बनाने सम्बन्धी प्रयासों से जोड़ने की एक स्कीम बनाई, जिसे कृषि साख मण्डल (Agricultural Credit Board) ने कुछ संशोधनों सहित स्वीकार कर लिया और यह स्कीम 1 जुलाई, 1973 से लागू की गयी। इस योजना की प्रमुख बातें निम्नांकित हैं :–

1. मौसमी कृषि कार्यों के लिए केन्द्रीय सहकारी बैंकों को ऋण देने हेतु वित्त की सुविधा राज्य सहकारी बैंक से बैंक दर की अपेक्षा 1/2 प्रतिशत कम पर प्राप्त कर सकेंगे।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

2. एक बुनियादी उधार स्तर तक लिये गये ऋणों पर ब्याज में डेढ़ प्रतिशत रिबेट दिया जायेगा।
3. अतिरिक्त ऋणों पर, केन्द्रीय सहकारी बैंकों द्वारा अपने निजी साधनों से अल्पकालीन ऋणों में लगाई गयी रकम में वृद्धि दूनी राशि तक या लघु कृषकों को दी गयी अतिरिक्त वित्त की पूर्ण राशि तक ब्याज में डेढ़ प्रतिशत रिबेट दिया जायेगा।
4. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया से उधार के वर्तमान नीचे स्तर वाले मामलों में केन्द्रीय बैंकों द्वारा अल्पकालीन ऋणों में लगाई गयी राशि के चार गुना तक डेढ़ प्रतिशत का विशेष रियायती रिबेट दिया जायेगा, बशर्ते डिपाजिट अधिक मात्रा में प्राप्त करके दिखाए।
5. दुर्बल और जीवन अयोग्य बैंकों को इस स्कीम के संचालन से पृथक रखा गया हैं।
   अब यह स्कीम अधिकांश बैंकों पर लागू होती हैं तथा बुनियादी उधार स्तरों को समय समय पर बढ़ाया जाता रहा हैं।

4.3.4 उधार लेना (Borrowings) :–

केन्द्रीय सहकारी बैंक के वित्तीय साधनों में विभिन्न संस्थाओं, जैसे – राज्य सहकारी बैंक, रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया, व्यापारिक बैंक से प्राप्त किये जाने वाले ऋणों का भी महत्वपूर्ण स्थान हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल में प्राप्त किये जाने वाले ऋणों की कुल मात्रा अधिक नहीं थी। परन्तु द्वितीय तथा तृतीय पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में इसमें बहुत अधिक वृद्धि हुई हैं। बकाया ऋण शेष 1955–56 में 22 करोड़ रूपाये से बढ़कर 1978–79 में 955 करोड़ रू. हो गये हैं।

इन बैकों को ऋण प्रदान करने में शीर्ष या राज्य सहकारी बैंकों का प्रमुख स्थान रहा हैं। इनकी ऋण सीमा इनके निजी कोषों अर्थात् पूर्ण चुकता पूंजी तथा रक्षित कोष से सम्बन्धित हैं। समय–समय पर इस सीमा को बढ़ाया गया हैं जिससे ये बैंक स्वयं से सम्बद्ध सहकारी समितियों की बढ़ती हुई वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। इस समय साख सीमा निजी कोषों के 10 से 15 गुजे तक हैं।

केन्द्रीय सहकारी बैंक सरकार से भी ऋण लेते हैं, परन्तु उनकी पूंजी में ऐसे ऋणों का अनुपात नहीं के बराबर हैं। सरकार से प्राप्त परन्तु बकाया ऋणों (outstanding borrowing) की मात्रा 1978–79 में केवल 22.7 करोड़ रूपाये (कुल कार्यशील पूंजी के 1 प्रतिशत से भी कम) थी।

पहले रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया केन्द्रीय सहकारी बैंकों को प्रत्यक्ष रूपा से ऋण नहीं देता था। वह राज्य सहकारी बैंकों को अल्प तथा मध्यमकालीन ऋण दे देता था। जिसे वे फिर केन्द्रीय बैंकों में वितरित कर देते थे। कुछ राज्य सहकारी बैंक अपनी आर्थिक दशा ठीक न होने के कारण केन्द्रीय बैंकों की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाते थे। अतः रिजर्व बैंक ने एक स्कीम बनाई, जिसके अन्तर्गत केन्द्रीय बैकों को चार वर्गों – 'अ', 'ब', 'स' तथा 'द' (A, B, C and D) में बांटा गया। इस स्कीम के अन्तर्गत केवल 'अ', 'ब' तथा 'स' वर्गों के बैंक रिजर्व बैंक से ऋण प्राप्त करने के अधिकारी हैं। 'स' वर्ग के बैंक को रजिस्ट्रार की सिफारिश पर सरकार की गारण्टी या जमानत के विरूद्ध ऋण दिया जाता हैं।

कुछ केन्द्रीय बैंक व्यापारिक बैकों से भी उचित जमानत एवं सामान्य शर्तों पर नकद साख (Cash Credits), अधिविकर्ष (Overdrafts) तथा अग्रिम (Advancè) के रूपा में ऋण लेते हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

उधार कोषों पर केन्द्रीय बैकों की निर्भरता हाल के वर्षों में कम हुई हैं, जो इस बात का प्रमाण हैं कि इन बैकों ने निजी कोषों और जमाओं को बढ़ाने में काफी प्रगति की हैं। कुल कार्यशील पूंजी में निजी कोषों और जमाओं का सम्मिलित भाग 1960–61 में 53.5 प्रतिशत था जो बढ़कर 1978–79 में 65.6 प्रतिशत हो गया। उधार शेष का भाग 1960–61 में 46.5 प्रतिशत से घटकर 1978–79 में 36 प्रतिशत रह गया। इस प्रकार कुल कार्यशील पूंजी में उधार कोषों का भाग घटा हैं। यह अखिल भारतीय स्थिति हैं। राज्य क्रम से विश्लेषण करने पर पता चलता हैं कि हिमाचल, महाराष्ट्र और पंजाब में जमाओं का प्रतिशत काफी ऊँचा हैं किन्तु असम, बिहार, जम्मू कश्मीर, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु एवं पश्चिम बंगाल प्रसाधनों के मामले में उधार कोषों पर अत्यधिक निर्भर बने हुए हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यशील पूंजी के स्त्रोत बताइये।

.....

.....

.....

प्र. 2 केन्द्रीय सहकारी बैंक कितने प्रकार के कोष बनाते हैं? नाम बताइये।

.....

.....

.....

प्र. 3 जमा पर धन प्राप्त करने में केन्द्रीय सहकारी बैंक को क्या कठिनाई हैं?

.....

.....

.....

4.4 ऋण संबंधी क्रियाएं :–

केन्द्रीय सहकारी बैंक सम्बद्ध समितियों को कृषि वित्त की पूर्ति करने के लिए ऋण प्रदान करते हैं। मौसमी कृषि कार्यों के लिए 12 महिने तक के अल्पकालीन ऋण प्रदान किये जाते हैं। मध्यमकालीन ऋण बैल–गाय तथा पम्पिंग मशीन खरीदने, कुएं खोदने अथवा मरम्मत कराने तथा भूमि सुधार के लिए एक से पांच वर्ष के लिये दिये जाते हैं।

4.4.1 ऋण देने की क्रियाविधि :–

जिस समिति को केन्द्रीय सहकारी बैंक से ऋण लेना होता हैं, वह बैंक के पास एक निर्धारित आवेदन पत्र या प्रार्थना पत्र निम्नलिखित के साथ भेजती हैं :

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. सामान्य सभा या प्रबन्ध समिति द्वारा पास किये गये प्रस्ताव की प्रमाणित प्रतिलिपि जिनमें ऋण की रकम अथवा साख–सीमा का उल्लेख हो जिसके लिए प्रार्थना पत्र दिया जा रहा हैं।
2. सम्पत्तियों का विवरण : यह विवरण एक निर्धारित फार्म में समिति के प्रत्येक सदस्य की सम्पत्तियों के सम्बन्ध में प्रस्तुत किया जाता हैं।
3. समिति की वित्तीय स्थिति का विवरण।
4. ऋण के लिए, प्रथम बार आवेदन पत्र देने पर, उपनियमों की सही प्रमाणित प्रतिलिपियां।
5. फसल ऋण की मांग की दशा में, प्रत्येक सदस्य के लिए ऐसा विवरण पत्र (निर्धारित फार्म में) जिसमें विभिन्न फसलों के लिए प्रयोग में लायी गयी भूमि का विवरण दिया गया हो।

मध्यमकालीन ऋण के लिए भी आवेदन पत्र पर निर्धारित फार्म में देना पड़ता हैं तथा उसके साथ अल्पकालीन ऋण के सम्बन्ध में वर्णित 1, 2, 3 तथा 4 संख्या के विवरण संलग्न किये जाते हैं।

समिति का आवेदन पत्र सामान्यतया उसके सचिव या समूह–सचिव या पयवेक्षक (Supervisor) द्वारा तैयार किया जाता हैं। इसे पूर्ण कर लेने के बाद यह माध्यमिक एजेन्सी द्वारा जैसे कि बिहार एवं उड़ीसा में सहकारी बैंक के पर्यवेक्षकों द्वारा तथा जम्मू कश्मीर में विभागीय पयवेक्षकों और सहायक रजिस्ट्रार के द्वारा, केन्द्रीय सहकारी बैंक को अग्रेषित कर दिया जाता हैं। इसके अतिरिक्त गुजरात, महाराष्ट्र और तमिलनाडु में आवेदन पत्रों को स्थानीय पर्यवेक्षण संघ (local supervising unions) के द्वारा भी भेजना होता हैं। असम में आवेदन पत्र सीधे बैंक को भेज दिये जाते हैं, जो अपने पर्यवेक्षकों के द्वारा जांच पड़ताल कराता हैं। पंजाब में 'अ' व 'ब' वर्ग की समितियां अपने आवेदन पत्र बैंक को सीधे ही भेज देती हैं लेकिन 'स' वर्ग की और अवर्गित समितियां सहकारिता विभाग के द्वारा आवेदन पत्र भेजती हैं। राजस्थान में 'अ', 'ब' और 'स' वर्ग की समितियां सीधे बैंक को भेजती हैं लेकिन 'द' वर्ग की समितियों को प्रार्थना पत्र सहकारी विभाग के द्वारा भेजने होते हैं। जो प्रार्थना पत्र सब प्रकार से पूर्ण होते हैं उन्हें विचार के लिए एवं ऋण (या साख सीमा) की स्वीकृति हेतु संचालक मण्डल के साथ प्रस्तुत किया जाता हैं।

अधिकांश केन्द्रीय सहकारी बैंक में ऋणों की स्वीकृति देने का अधिकार संचालक मण्डल की एक अधिशासी (executive) या ऋण समिति (loan committee) को होता हैं। पंजाब में पूर्ण संचालक मण्डल द्वारा स्वीकृति दी जाती हैं। कुछ मामलों में तो एक व्यक्ति को जैसे कि प्रेसीडेण्ट, प्रबन्ध संचालक या प्रबन्धक को ही ऋण की स्वीकृति देने का अधिकार होता हैं।

साख–सीमा (credit limit) निर्धारित कर देने के बाद समिति को उस सीमा तक समय–समय पर आवश्यकतानुसार ऋण की रकम निकालने का अधिकार होता हैं। 'अ' तथा 'ब' वर्ग की समितियों को ऋण प्रदान करने के लिए रजिस्ट्रार की अथवा उसके द्वारा अधिकृत किसी अन्य व्यक्ति की अनुमति लेना आवश्यक हैं।

केन्द्रीय सहकारी बैंकों के ऋणों का विश्लेषण करने पर मुख्यतः निम्न बातें सामने आती हैं :– कृषि कार्यों के लिए दिये गये ऋण कुल अल्पकालीन ऋणों का एक बहुत बडा भाग हैं जबकि औद्योगिक एवं अन्य उद्देश्य दूसरे नम्बर पर हैं। मध्यमकालीन ऋण प्रायः बैलों के क्रय, भूमि सुधार एवं सिंचाई हेतु दिये गये हैं। किन्तु मध्यमकालीन ऋण कुल ऋणों का केवल 12 प्रतिशत बैठते हैं। मध्यमकालीन ऋणों की धीमी प्रगति के कुछ कारण निम्नलिखित हैं :

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

1. सहकारी बैकों के अपने मध्यमकालीन साधन होने के कारण उन्हें मुख्यतः उच्चतर वित्त संस्थाओं (शीर्ष बैकों) पर निर्भर रहना पड़ता हैं। चूंकि शीर्ष बैंकों से वर्ष के प्रारम्भ में ही सहायता सम्बन्धी कोई अग्रिम योजना नहीं बना पाते हैं।
2. राज्य सहकारी बैंक रिजर्व बैंक से ऋण सुविधा की मांग वर्ष में काफी करते रहे हैं तथा कुछ राज्य सरकारों ने भी रिजर्व बैंक के पक्ष में गारण्टियां देने में काफी विलम्ब किया हैं। फलस्वरूप शीर्ष बैंक और केन्द्रीय सहकारी बैंक रिजर्व बैंक से ऋण पाने में असमर्थ हो गये।
3. मध्यमकालीन ऋणों के वितरण के लिए केन्द्रीय बैकों द्वारा कोई उपयुक्त नियोजन नहीं किया जाता हैं।
4. कुछ केन्द्रीय बैंकों के लिए रिजर्व बैंक ने जो बुनियादी स्तर निर्धारित किया वह अनुचित रूप से ऊँचा था। इस ऊँचे स्तर ने एक प्रतिबन्ध के रूप में कार्य किया, क्योंकि अनेक सहकारी बैंकों के लिए अपने निजी साधनों से बुनियादी स्तर को बनाये रखना कठिन हो गया।
5. बुनियादी स्तर बनाये रखने के अतिरिक्त केन्द्रीय बैंकों से यह भी आशा की गयी कि वे बुनियादी स्तर से ऊपर 20 प्रतिशत जो नये ऋण दें उनकी पूर्ति निजी साधनों से करेंगे और शेष 80 प्रतिशक की पूर्ति (reimbursement) के लिए ही बैंक से आवेदन करेंगे। इससे उनकी कठिनाई और बढ़ जायेगी।
6. रिजर्व बैंक केन्द्रीय सहकारी बैंकों द्वारा पम्प सैटो, बन्ध–निर्माण, बागवानी के लिए भूमि की तैयारी आदि उद्देश्यों के हेतु ऋण देने के विरूद्ध आपत्ति उठाई, जिससे केन्द्रीय सहकारी बैंक मध्यमकालीन ऋणों के एक भाग की पूर्ति रिजर्व बैंक से नहीं करा पाये।

4.4.2 अतिदेय (ब्अमत क्नमे) :–

इन बैकों की कार्यप्रणाली का सबसे बड़ा दोष यह हैं कि इनके अवधिपार ऋणों की मात्रा में निरन्तर वृद्धि होती गई हैं। 1950–51 में अवधिपार ऋण 3 करोड़ रूपये के बराबर थे जो बढ़कर 1978–79 में 835 करोड़ रूपये के बराबर हो गये। बकाया ऋणों में इन अवधिपार ऋणों का अनुपात 9 प्रतिशत से बढ़कर 36 प्रतिशत हो गया। कुछ राज्यों (जैसे असम, जम्मू व कश्मीर, मध्य प्रदेश, उड़ीसा तथा राजस्थान) में यह अनुपात और भी अधिक था। यहां तक कि अधिक विकसित राज्य महाराष्ट्र में अवधिपार ऋणों की राशि कुल बकाया ऋणों की राशि के 28 प्रतिशत के बराबर थी। यह एक गम्भीर प्रश्न हैं। यदि इस सम्बन्ध में प्रभावशाली कदम नहीं उठाये गये तो हो सकता हैं कि कुछ राज्यों में सहकारी आन्दोलन समाप्त ही हो जाए।

ब्याज दर (Interest rate) :–

केन्द्रीय सहकारी बैंक अपने ऋणों पर उद्देश्यों में भिन्नता के आधार पर अलग–अलग दरों से ब्याज लेते हैं। केन्द्रीय बैंक शीर्ष बैंक से प्राप्त ऋणों में से समितियों को दिये जाने वाले ऋणों का एक निश्चित प्रतिशत 'मर्जिन' के रूप में रख लेता हैं। अलग–अलग राज्यों में मार्जिन के प्रतिशत अलग–अलग हैं, जैसे असम में 1 प्रतिशत, केरल में 1.3 प्रतिशत, कर्नाटक में 1.5 प्रतिशत, तमिलनाडु में 1.8 प्रतिशत, बिहार तथा उड़िसा में 2 प्रतिशत। अधिकांशतः लिये तथा दिये जाने वाले ब्याज में 1 से 3 प्रतिशत तक का अन्तर रहता हैं। अधिकांश राज्यों में मध्यमकालीन ऋण पर ब्याज–दर अल्पकालीन ऋणों पर लिये जाने वाले ब्याज के दर के बराबर ही हैं।

4.4.3 जमानत (Security) :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

केन्द्रीय सहकारी बैंक ऋण लेने वाली समितियों के प्रतिज्ञा–पत्रों (Prtomissory Notes) की जमानत पर ऋण देते है। समिति–स्तर पर ऋण शोधक्षम सदस्यों की व्यक्तिगत जमानत तथा भूमि की बन्धक पर प्रदान किये जाते हैं। ये जमानतें केन्द्रीय सहकारी बैंकों द्वारा दिये गये ऋणों के लिए भी जमानत का कार्य करती हैं। 30 जून, 1979 को केन्द्रीय सहकारी बैंकों के 2,328 करोड़ रूपये के ऋण व अग्रिम बकाया थे जिसमें से 1,791 करोड़ रूपये को समितियों के दिये ऋण सहकारी कागज (co-operative paper) के आधार पर, 41 करोड़ रू. अचल सम्पत्ति की बन्धक पर, 54 करोड़ रूपये कृषि उपज के आधार पर, 125 करोड़ रू. व्यापारिक सामान की बन्धक पर और 21 करोड़ रूपये प्रतिभू (नतपजल) के आधार पर दिये गये थे। लगभग 59 करोड़ रूपये के ऋण बिना जमानत के थे। शेष ऋण अन्य जमानतों के आधार पर दिये गये थे।

जांच एवं निरीक्षण (Checking and Saupervision) :–

ग्रामीण साख सर्वे कमेटी तथा सहकारी साख पर नियुक्त कमेटी (मेहता कमेटी) ने यह सुझाव दिया था कि सहकारी समितियों के माध्यम से साख सुविधाओं के विस्तार के सन्दर्भ में आवश्यक हैं कि केन्द्रीय सहकारी बैंक अपनी सम्बद्ध प्राथमिक समितियों के कार्यों का निरीक्षण एवं जांच करें। हाल ही में भारत सरकार के सामुदायिक विकास तथा सहकारिता मन्त्रालय द्वारा निर्गमित ।बजपवद च्तवहतंउउम में भी यह सुझाव दिया गया था कि प्राथमिक साख समितियों का निरीक्षण कार्य केन्द्रीय सहकारी बैंकों द्वारा ही किया जाना चाहिए। उसके अन्तर्गत इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिये गये थे :

1. निरीक्षण का उत्तरदायित्व केन्द्रीय सहकारी बैंकों पर ही होना चाहिए।
2. यदि निरीक्षण कार्य किसी संस्था द्वारा किया जा रहा हैं, तो उसे केन्द्रीय बैंकों को हस्तान्तरित कर देना चाहिए।
3. प्रत्येक 20 समितियों के लिए एक निरीक्षक तथा प्रत्येक 80 निरीक्षकों के लिए एक वरिष्ठ निरीक्षक की नियुक्ति की जानी चाहिए।
4. यदि केन्द्रीय सहकारी बैंक इस स्तर पर निरीक्षकों की नियुक्ति करने में असमर्थ हैं तो सरकार को इस उद्देश्य के लिए उन्हें उचित अनुदान देना चाहिए।

   आज भी पंजाब, राजस्थान तथा जम्मू व कश्मीर में समितियों के निरीक्षण कार्य के लिए सहकारी विभाग उत्तरदायी हैं।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 समय के आधार पर केन्द्रीय सहकारी बैंकों के ऋण कितने प्रकार के होते हैं?

.....

.....

.....

प्र. 2 ऋण हेतु प्रथम बार आवेदन करने की क्रिया विधि बताइये।

.....

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

.....

.....

4.5 प्रबन्ध (Management) :–

केन्द्रीय सहकारी बैंक का प्रबन्ध सामान्य तौर पर संचालक मण्डल (Board of Directors) द्वारा किया जाता हैं। इस मण्डल में 12 से 15 तक सदस्य होते हैं। पहले संचालक मण्डलों में व्यक्तिगत सदस्यों का बहुमत एवं प्रभुत्व होता था। आज भी, जहां इन बैकों में व्यक्तिगत सदस्यों का बहुमत हैं, इस प्रकार की स्थिति पायी जाती हैं। वर्तमान प्रवृत्ति इस प्रकार के व्यक्तिगत प्रतिनिधित्व को कम करने की हैं जिससे समितियों के प्रतिनिधित्व में वृद्धि हो सकें तथा वे केन्द्रीय बैकों की नीति निर्धारित कर सकें। अधिकांश बैकों में व्यक्तिगत सदस्यों के प्रतिनिधियों की संख्या घटाकर 2 से 3 कर दी गई हैं।

उच्च अधिकारी तथा अन्य कर्मचारी :–

केन्द्रीय सहकारी बैंक उस समय तक एक कुशल एवं प्रगतिशील संस्था के रूप में कार्य नहीं कर सकता जब तक कि उसे योग्य कर्मचारियों की सेवाएं उपलब्ध नहीं होंगी। उन सभी कर्मचारियों को, जो चाहे प्रमुख कार्यालय में कार्य करते हो अथवा अन्य किसी स्थान पर, कुशल एवं प्रशिक्षित होना आवश्यक हैं। सरकार के Action Programme में यह निर्धारित किया गया हैं कि :

1. केन्द्रीय सहकारी बैंक को चार उच्चाधिकारियों – (क) प्रबन्धक, (ख) प्रशासनिक अधिकारी फील्ड स्टाफ के कार्यों की देखरेख करने के लिए, (ग) प्रमुख लेखापाल तथा (घ) विपणन समितियों की देखभाल करने के लिए एक अधिकारी की नियुक्ति करनी चाहिए।
2. सरकार को इस सम्बन्ध में उन समितियों को वित्तीय सहायता प्रदान करनी चाहिए जो उक्त कर्मचारियों को नियुक्त करने में असमर्थ हैं।
3. शीर्ष या राज्य सहकारी बैकों को शिक्षित एवं अनुभवी कर्मचारियों को प्राप्त करने में केन्द्रीय सहकारी बैंकों की सहायता करने का उत्तरदायित्व सौंपना चाहिए।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 केन्द्रीय सहकारी बैंकों के उच्चाधिकारियों कौन–कौन होते हैं।

.....

.....

.....

4.6 साराश :–

प्रस्तुत इकाई में हमने केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यशील पूंजी के विभिन्न स्त्रोतों के संबंध में जानकारी प्राप्त की। केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यशील पूंजी के स्त्रोतों में अंश पूंजी, वैधानिक, संचित एवं अन्य कोष तथा सरकार से अनुदान आदि प्रमुख हैं। इन बैंकों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि, पशुपालन आदि विभिन्न क्रियाओं हेतु समय–समय पर अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन ऋण भी प्रदान किये जाते हैं। अल्पकालीन ऋण मौसमी कृषि कार्यों के लिए 12 महिनों तक की अवधि के लिए जबकि मध्यमकालीन ऋण पम्पिंग मशीन

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

खरीदने, कुएं खोदने व मरम्मत करवाने तथा भूमि सुधार के लिए एक से पांच वर्ष तक के लिए दिये जाते हैं। इन बैंकों की कार्यप्रणाली में अवधि पार ऋणों की मात्रा भी अधिक होती हैं, जिसका विवेचन भी प्रस्तुत अध्याय में किया गया हैं।

4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

4.3

उत्तर 1. (1) अंश पूंजी (Share Capital)

(2) संचित तथा अन्य कोष (त्मेमतअमे ंदक वजीमत निदके)

(3) सदस्यों तथा गैर सदस्यों से जमा पर प्राप्त धन (Deposit from Members and Non-members)।

(4) प्राप्त ऋण (Borrowing from)

(i) राज्य सहकारी बैंक से।

(ii) रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया से।

(iii) सरकार से।

(5) सरकार से अनुदान (Grants from Government)।

उत्तर 2. (1) वैधानिक कोष (2) अप्राप्य तथा संदिग्ध ऋण कोष (3) कृषि साख स्थायीकरण कोष तथा (4) अन्य कोष।

उत्तर 3. (1) व्यापारिक बैंक केन्द्रीय बैंकों की तुलना में जमा पर अधिक ब्याज देते हैं, (2) उन्हें जमा बीमा की सुविधाएं भी प्राप्त होती हैं तथा (3) कुछ राज्यों में स्थानीय तथा शिक्षण संस्थाओं द्वारा अपने अतिरिक्त कोषों को केन्द्रीय सहकारी बैंकों में नियोजित किये जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं।

4.4

उत्तर 1. 1. अल्पकालीन 2. मध्यकालीन 3. दीर्घकालीन

उत्तर 2. देखिये 4.4.1

4.5

उत्तर 1. प्रबन्धक, प्रशासनिक अधिकारी तथा प्रमुख लेखापाल

4.8 शब्द कोष :–

अंश–पूंजी	अनुदान
चुकता पूंजी	संदिग्ध ऋण कोष
कृषि साख स्थानीयकरण कोष	वैधानिक कोष
कार्यशील पूंजी	सहकारी साख
विषय कमेटी	कृषि साख मण्डल
अधिविकर्ष	अग्रिम

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. बी.एस. माथुर, ''सहकारिता'' साहित्य भवन, आगरा
2. Deshpande D.V. M.K. Mudgal, and K.K. Gupta, Working oaoer on RRBs at Cross Road, Bunkers Institute of Rural Development, Lucknow
3. Bhat, N.S., Rural Banking in India.
4. Desai, SSM, Agriculture and Rural Banking in India, Himalya Publications
5. Singh, R.P. and Sathees Babu K. Performanve and Prospects of Reginal Rural Banks – An appraisal, Kurukshetra, July 1996

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

इकाई – 5
केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कठिनाईयां एवं सुझाव

5.0 इकाई की रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 परिचय

5.3 केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में दोष

- 5.3.1 संगठन संबंधी दोष
- 5.3.2 ऋण नीति संबंधी दोष
- 5.3.3 ऋणों की स्वीकृति में विलम्ब
- 5.3.4 विनियोग नीति संबंधी दोष
- 5.3.5 प्रबंध सम्बन्धी दोष
- 5.3.6 अन्य दोष
- 5.3.7 अपर्याप्त नियोजन
- 5.3.8 राजनीति का बोलबाला

5.4 केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में सुधार हेतु सुझाव

- 5.4.1 वित्तीय साधनों में वृद्धि हेतु सुझाव
- 5.4.2 ऋण नीति के सम्बन्ध में सुझाव
- 5.4.3 प्रबंध के सम्बन्ध में सुझाव
- 5.4.4 संगठन के सम्बन्ध में सुझाव
- 5.4.5 विनियोग के सम्बन्ध में सुझाव
- 5.4.6 ग्रामीण साख समीक्षा नीति के सुझाव

5.5 सारांश

5.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.7 शब्द कोष

5.8 संदर्भ ग्रंथ

5.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान पाएंगे कि :–

(प) केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में क्या–क्या दोष हैं ?

(पप) केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में किस प्रकार से सुधार किया जा सकता हैं?

5.2 परिचय :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

केन्द्रीय सहकारी बैंक व्यवस्था में कई प्रकार के दोष पाए गए हैं जैसे – संगठन सम्बन्धी दोष, वित्तीय साधनों की कमी, कुशल सेवाओं की कमी, अनावश्यक राजनीतिक हस्तक्षेप, विनियोग नीति में दोष, प्रबंध सम्बन्धी दोष आदि। प्रस्तुत इकाई में सहकारी बैंकिंग व्यवस्था में पाए गए इन्हीं दोषों की विस्तृत विवेचना की गई हैं तथा इन दोषों को दूर करने हेतु सुझाव दिए गए हैं।

5.3 केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में दोष एवं कठिनाईयां :–

केन्द्रीय सहकारी बैंक व्यवस्था में निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं :–

5.3.1 संगठन सम्बन्ध दोष (Organisational Defects)

(1) **सहकारी आन्दोलन को नेतृत्व प्रदान करना :–** केन्द्रीय सहकारी बैंक के संगठन के सम्बन्ध में यह नीति निर्धारित की गयी थी कि आर्थिक इकाई के रूप में कार्य करने के लिए एक जिले में एक ही केन्द्रीय बैंक होना चाहिए। यद्यपि अधिकांश राज्यों में इस दिशा में पर्याप्त प्रगति हुई हैं, लेकिन फिर भी एक जिले में कई केन्द्रीय बैंकें पायी जाती हैं।

(2) **प्राथमिक समितियों के निरीक्षण का अभाव :–** केन्द्रीय सहकारी बैंकों के सन्तोषजनक कार्य संचालन के लिए आवश्यक हैं कि वे सम्बद्ध समितियों के निरीक्षण के लिए अपना 'स्टाफ' रखें। कुछ राज्यों, जैसे पंजाब, उत्तर प्रदेश, राजस्थान तथा जम्मू कश्मीर में आज भी प्राथमिक समितियों का निरीक्षण राज्य सरकारों के अधीन कर्मचारियों द्वारा किया जाता हैं।

5.3.2 आन्तरिक दोष (Internal Defects)

(1) **वित्तीय साधनों का अभाव :–** केन्द्रीय सहकारी बैंकों का सबसे बड़ा दोष यह रहा हैं कि वे सम्बद्ध समितियों की बढ़ती हुई वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए अपने वित्तीय साधनों को बढ़ाने में असमर्थ रहे हैं। यद्यपि इन बैंकों की जमा राशियों तथा निजी कोषों में पर्याप्त वृद्धि हुई हैं, तथापि ये राशियां समिति के सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अपर्याप्त रही हैं।

(2) **ऋण सीमा तथा अंश–पूंजी के पारस्परिक सम्बन्ध का अभाव :–** यद्यपि बैंकों ने इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया हैं कि समिति को दिये जाने वाले ऋणों की सीमा उसकी अंश–पूंजी के अनुपात से निर्धारित की जानी चाहिए, तथापि बहुत से बैंकों द्वारा उस सिद्धान्त का पालन नहीं किया जाता हैं।

(3) **कुशल सेवाओं की कमी :–** इन बैंकों में सबसे बड़ी कमी यह हैं कि ये जमा पर धन प्रदान करने वाले व्यक्तियों को पर्याप्त एवं कुशल बैंकिंग सेवाएं एवं सुविधाएं प्रदान नहीं करते। असम, बिहार, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, पंजाब, मध्यप्रदेश तथा आन्ध्र प्रदेश में कुछ बैंकों ने बैंकिंग संस्थाओं के रूप में विकसित होने के लिए शायद ही कोई प्रयास किया हैं।

5.3.3 ऋण नीति तथा विधि में दोष (Defects in Loan Policy and Procedures) :–

(1) **फसल ऋण प्रणाली को लागू न करना :–** अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वे कमेटी ने केन्द्रीय सहकारी बैंकों की ऋण नीति में फसल ऋण प्रणाली के आधार पर आवश्यक परिवर्तन एवं संशोधन करने का सुझाव दिया था। कुछ राज्यों में केन्द्रीय सहकारी बैंकों ने सर्वे कमेटी की रिपोर्ट के सुझावों के अनुसार अपनी ऋण नीति में सुधार नहीं किया हैं। उनकी ऋण नीति में निम्नलिखित दोष हैं :–

1. ऋण के प्रभावकारी प्रयोग के निरीक्षण की पर्याप्त व्यवस्था का अभाव।
2. किस्तों तथा वस्तुओं के रूप में ऋण देने की व्यवस्था का न होना।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

3. फसल बोने तथा कटने के समय से ऋणों के प्रदान करने के समय का सम्बन्धित न होना तथा वर्ष भर ऋण देने की व्यवस्था का होना।
4. साख तथा विपणन में पारस्परिक समन्वय का अभाव।

(2) ऋणों की स्वीकृति में विलम्ब होना :–

यह देखा गया हैं कि ऋणों के लिए स्वीकृति देने में असाधारण देरी होती हैं। बहुधा आवेदन–पत्र वहां अटके रह जाते हैं जहां कि केन्द्रीय बैंक केवल संचालक मण्डल के द्वारा ऋणों की स्वीकृति देते हैं। पूर्ण संचालक मण्डल, जिसमें जिले भर से चुने गये 20 या अधिक सदस्य होते हैं, तिमाही में एक से अधिक बार बैठक नहीं कर पाता। अखिल भारतीय ग्रामीण साख समीक्षा समिति की रिपोर्ट के अनुसार बिहार, मध्यप्रदेश, उड़ीसा और राजस्थान में अपेक्षाकृत एक छोटी समिति जैसी कि अधिशासी या कार्यवाहक समिति भी कई बार बैठक नहीं कर पाती हैं फिर बड़ी समितियों की तो बात ही क्या। ऋणों की स्वीकृति में विलम्ब होने का एक अन्य कारण यह हैं कि केन्द्रीय बैंकों में आवेदन पत्रों की जांच पड़ताल के लिए अपनायी गई समय खाने वाली विस्तृत कार्यविधियां (elaborate and time consuming procedures) अपनायी जाती हैं। कुछ बैंकों आवेदन पत्रों में चार चरणों से गुजरना पड़ता हैं – ऋण लिपिक, सहायक एकाउन्टेन्ट, प्रबन्धक और प्रबन्ध संचालक। इनके बाद वह स्वीकृति समिति (sanctioning authority) के समक्ष पेश होता हैं। कभी–कभी किसी समिति को साख सीमा स्वीकार करने में देर इसलिए हो जाती हैं कि नवीन वित्त के लिए पात्रता उसे अभी प्राप्त नहीं हुई हैं। यद्यपि यह पात्रता आहरण के लिए अनुमति देने के आशय से ही महत्वपूर्ण हैं न कि ऋण की स्वीकृति देने के आशय से ऋणों के वितरण में भी विलम्ब होते पाये गये हैं, क्योंकि बैंक सम्बन्धित समितियों को ऋण स्वीकृति के बारे में सूचना देने में विफल रहते हैं या उनके पास ऋणों के वितरण के लिए पर्याप्त कोष नहीं होता।

(3) अल्पकालीन तथा मध्यमकालीन ऋणों के अन्तर की उपेक्षा :– कुछ बैंक अल्पकालीन तथा मध्यमकालीन ऋणों के अन्तर पर विशेष ध्यान नहीं देते तथा वे व्यक्तियों को भी ऋण प्रदान करते हैं।

(4) गलत लेखे :– बहुत से बैंकों में ऋण की वसूली के सम्बन्ध में गलत लेखे पाये जाते हैं। अर्थात् ऋण की राशि वसूल नहीं होती लेकिन वह वसूल हुई दिखाते हुए नया ऋण दिया हुआ प्रकट कर दिया जाता हैं। इस प्रकार किताबी समायोजनों के कारण बैंक की वास्तविक आर्थिक स्थिति का पता नहीं चलता।

(5) अवधिपार (overdueè) ऋणों की बढ़ती हुई रकम :– इन बैंकों का सबसे बड़ा दोष यह भी हैं कि इनके अवधिपार ऋण निरन्तर बढ़ते जा रहे हैं। ये बैंक इनको वसूल करने के लिए आवश्यक उपाय नहीं कर रहे हैं। कुछ राज्यों में तो इस सम्बन्ध में स्थिति अत्यन्त गम्भीर हो गई हैं। कुछ बैंक तोउन समितियों को भी ऋण देते जा रहे हैं जिनसे प्राप्त होने वाले अवधिपार ऋण काफी ज्यादा हैं। 30 जून, 1979 को केन्द्रीय बैंकों के अवधिपार ऋणों की मात्रा 835 करोड़ रूपये थी।

केन्द्रीय सहकारी बैंकों के स्तर पर भारी अतिदेयों ने उनकी उच्चतर वित्त एजेन्सियों (higher financing agencies) से ऋण लेने सम्बन्धी क्षमता को कुण्ठित कर दिया हैं। रिजर्व बैंक ऐसे केन्द्रीय बैंकों से साख सीमाओं के लिए आवेदन पत्र स्वीकार नहीं करता हैं जिनके अवधिपार ऋण 60 प्रतिशत से अधिक हो या जो कि 'द' वर्ग में रखे गये हों।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(6) **अप्राप्त तथा संदिग्ध ऋण कोष की अपर्याप्तता** :– कुछ बैंकों ने अप्राप्त तथा संदिग्ध ऋणों के लिए पर्याप्त कोष का निर्माण नहीं किया हैं, जिसके फलस्वरूप ऐसे बैंकों के अप्राप्त ऋण उनकी पूर्ति करने के लिए बनाए गये कोष से अधिक हैं।

(7) **ब्याज की दर का अधिक होना** :– कुछ केन्द्रीय सहकारी बैंकों की ब्याज दर काफी ऊँची हैं। कहीं–कहीं तो इन बैंकों द्वारा दिये जाने वाले ब्याज तथा दिये गये ऋणों पर लिये जाने वाले ब्याज की दरों में 3 प्रतिशत का अन्तर पाया जाता हैं।

5.3.4 विनियोग नीति सम्बन्धी दोष (Defect in Investment Policy) :–

केन्द्रीय सहकारी बैंकों भी विनियोग नीति की सुपरिचित क्षेत्रों में आलोचना का विषय बनी हैं। प्रमुख आलोचनाएं निम्न प्रकार हैं :–

(1) **व्यापारिक बैंकों में जमा** :– समय–समय पर कहा गया हैं कि केन्द्रीय सहकारी बैंकों को अपने समस्त कोष आन्दोलन के भीतर ही रखने चाहिए तथा व्यापारिक बैंकों में कम से कम विनियोग करना चाहिए। परन्तु देखने में यह आता हैं कि केन्द्रीय सहकारी बैंक अपने कोषों का अधिकांश भाग व्यापारिक बैंकों में चालू या मांग जमा के रूप में रखते हैं।

(2) **नये उद्यम में विनियोग** :– कुछ बैंक अपने प्रभावशाली संचालकों के दबाव पर, बिना इस बात की जांच किये कि वे उद्यम सफल होंगे या नहीं, नये उद्योगों में बहुत बड़ी रकम लगा देते हैं।

(3) **सरकारी प्रतिभूतियों में विनियोग** :– कुछ बैंकों ने सरकारी अधिकारियों के दबाव में आकर निर्धारित सीमा से अधिक धन सरकारी ऋणपत्रों, राष्ट्रीय बचत सर्टीफिकेट आदि में विनियोजित कर दिया हैं जिसके फलस्वरूप वे सहकारी समितियों को उनकी आवश्यकतानुसार ऋण नहीं दे सके हैं।

(4) **बिना जांच पड़ताल के ऋण दे देना** :– कुछ केन्द्रीय सहकारी बैंकों ने इन विधायन इकाइयों को प्रोजेक्ट की आर्थिक व तकनीकी वांछनीयता का अध्ययन किये बिना ही अल्प या दीर्घ अवधियों के लिए ऋण दे दिये। ऐसे ऋण बहुधा कठिनाईयों से वसूल हुए।

(5) **अन्य सहकारी संस्थाओं की अंश–पूंजी में भाग लेना** :– केन्द्रीय सहकारी बैंकों की एक वृद्धिशील प्रवृत्ति यह देखी गई हैं कि उन्होनें अन्य सहकारी संस्थाओं, विशेषतया सहकारी चीनी मिलें, कताई मिलों, शीर्ष विपणन समितियों के अंशों में अधिकाधिक कोष विनियोजित किये हैं। रिजर्व बैंक का कृषि साख विभाग बैंकों को ऐसे विनियोग न करने की सलाह देता रहा हैं लेकिन बैंकों ने ध्यान नहीं दिया हैं।

5.3.5 प्रबन्ध सम्बन्धी दोष (Defects in Management)

(1) **व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व** :– इन बैंकों की प्रबन्ध व्यवस्था का आज भी यह एक महान दोष हैं कि उनके संचालक–मण्डल में व्यक्तियों का बहुत अधिक प्रतिनिधित्व हैं।

(2) **अकुशल कर्मचारी** :– इन बैंकों का प्रबन्ध आज भी अप्रशिक्षित तथा अयोग्य व्यक्तियों द्वारा किया जा रहा हैं। इनके कर्मचारियों को उचित वेतन नहीं मिलता। अब तक इन बैंकों के कुशल कार्य संचालन के लिए उपयुक्त तथा योग्य कर्मचारियों को नियुक्त करने की व्यवस्था नहीं की गयी हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(3) **राजनीतिज्ञों का प्रभुत्व** :– कुछ दशाओं में यह देखा गया हैं कि बैंक के संचालक मण्डलों में राजनीतिज्ञों का प्रभुत्व हैं। ये राजनीतिज्ञ अधिक व्यस्त रहने के कारण बैंकों के कार्यों में विशेष रूचि नहीं लेते। यहां तक कि कुछ बैंक दलबन्दी तथा राजनीति के अखाड़े बन गये हैं।

(4) **कर्मचारियों की उपेक्षा** :– बैंकों के कर्मचारियों की तरक्की, नियुक्ति तथा उनको दी जाने वाली प्रेरणाओं के लिए कोई सुनिश्चित नीति नहीं अपनीयी जाती।

5.3.6 अन्य दोष (व्जीमत क्मिबजे) :–

(1) **प्राथमिक समितियों तथा केन्द्रीय सहकारी बैंक के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध का अभाव** :– केन्द्रीय सहकारी बैंक आज तक प्राथमिक समितियों के साथ निकट सम्पर्क एवं सम्बन्ध स्थापित करने में असमर्थ रहे हैं।

(2) **अन्य प्रकार की सहकारी संस्थाओं को ऋण की सुविधाएं न देना** :– ये बैंक औद्योगिक उपभोक्ता तथा अन्य गैर साख सहकारी संस्थाओं को पर्याप्त मात्रा में ऋण नहीं देते।

(3) **पथ प्रदर्शन में असमर्थ** :– अधिकांश बैंक प्राथमिक सहकारी समितियों का पथ प्रदर्शन करने में असमर्थ रहे हैं। वे उनके कार्य संचालन में मित्र तथा पथ प्रदर्शक के रू‍प में सहायता करने में असफल सिद्ध हुए हैं।

5.3.7 अपर्याप्त नियोजन (Insufficient Planning) :–

अधिकतर राज्यों में केन्द्रीय सहकारी बैंकों ने मध्यमकालीन वित्त की आवश्यकताओं का न तो कोई व्यवस्थित अध्ययन कराया हैं और न ऐसी वित्त प्रदान करने के लिए कोई योजनाबद्ध कार्यक्रम ही किया हैं। कुछ बैंकों ने अपनी मध्यमकालीन ऋण नीतियों के विवेकीकरण हेतु उपयुक्त कदम भी नहीं उठाये हैं। रिजर्व बैंक द्वारा कराये गये अध्ययनों से प्रकट हुआ हैं कि मध्यमकालीन ऋण देते समय न तो विनियोग सम्बन्धी प्रस्तावित परिव्यय का और न ऋण लेने वाले की पुनर्भुगतान क्षमता का ही ध्यान रखा गया हैं।

5.3.8. लाभदायकता (Profitability) :–

केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यक्षमता इनकी लाभदायकता से मालूम की जा सकती हैं। 1978–79 में 338 केन्द्रीय बैंकें कार्य कर रही थी जिनकी कुल 6,890 शाखाएं थी। इनमें से 5,967 कार्यालयों की लाभप्रदता के बारे में आंकड़े उपलब्ध हैं जिसमें से 4,035 कार्यालय लाभ पर व शेष 1,932 हानि पर चल रहे थे।

5.3.9 सहकारी बैंकिंग में राजनीति का बोलबाला (Dominance of Politics) :–

देश में सहकारी बैंकिंग संस्थाओं पर राजनीतिक घटकों के प्रभाव की चर्चा करते हुए अखिल भारतीय ग्रामीण साख समीक्षा समिति ने लिखा हैं कि अनेक दशाओं में एक विशेष दल का सहकारी संस्था पर प्रभुत्व स्थापित होने का परिणाम यह हैं कि अन्य दलों के सदस्यों को, विशेषतः प्राथमिक स्तर पर, सदस्यता या साख प्रदान करने से मनाही हो जाती हैं। कभी–कभी प्रतिद्वन्दी गुट के सदस्य लोगों को अपने देय न चुकाने के लिए उकसाते हैं ताकि जिस दल की प्रबन्धकारिणी कार्यशील हैं वह परेशानी में पड़ जाए। राजनीतिक प्रभाव के कारण बैंकों के प्रबन्धक मण्डल मनमाने ढ़ंग से निरस्त कर दिये गये हैं या उनमें कुछ राजनीतिक दलों के या उसी दल के गुट विशेष के नामजद व्यक्तियों से भर दिया जाता हैं। कुछ मामलों में, जोकि न्यायालय में पहुंचे, यह आरोप लगाया गया कि सत्तारूढ़ दल सरकारी मशीनरी का दुरूपयोग करके न्याय प्रशासन में बाधा डाल रहा हैं। कभी–कभी राजनीति तकावी ऋणों के वितरण एवं उनकी वसूली पर प्रभाव डालते हुए सहकारी साख को भी अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 केन्द्रीय सहकारी बैंक व्यवस्था में संगठन सम्बन्धी कौन–कौन से दोष पाये जाते हैं?

.....

.....

.....

प्र. 2 केन्द्रीय सहकारी बैंक व्यवस्था के आन्तरिक दोष बताइये।

.....

.....

.....

प्र. 3 केन्द्रीय सहकारी बैंक की ऋणनीति में क्या–क्या दोष हैं?

.....

.....

.....

प्र. 4 केन्द्रीय सहकारी बैंक विनियोग नीति सम्बन्धित दोष बताइये।

.....

.....

.....

प्र. 5 केन्द्रीय सहकारी बैंक प्रबन्ध सम्बन्धी दोष बताइये।

.....

.....

.....

5.4 केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में सुधार हेतु सुझाव (Suggestions to Improve the working of the CCB's) :–

केन्द्रीय सहकारी बैंकों (CCB's) के कार्यचालन को सुधारने हेतु निम्नांकित सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं:–

5.4.1 वित्तीय साधनों में वृद्धि करने के लिए सुझाव :–

(1) **जमा पर ब्याज में वृद्धि :–** केन्द्रीय सहकारी बैंकों को मुद्रा बाजार में प्रचलित ब्याज दर की जांच करके विभिन्न प्रकार की जमा राशियों पर प्रतिस्पर्धात्मक दर पर ब्याज देना चाहिए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

(2) **विभिन्न संस्थाओं को अतिरिक्त रकमों को जमा करने की व्यवस्था** :– सरकार को चाहिए कि स्थानीय निकायों, प्रन्यासों, शिक्षण संस्थाओं आदि को अनुमोदित केन्द्रीय बैंकों में अपनी अतिरिक्त रकमें जमा कराने की अनुमति दे दे।

(3) **बैंकिंग सुविधाएं प्रदान करना** :– जनता की बचत आकर्षित करने के लिए केन्द्रीय सहकारी बैंकों को चाहिए कि वह लोगों को चालू खाते खोलने की सुविधा प्रदान करें। इसके अतिरिक्त उन्हें अपने ग्राहकों को अन्य बैंकिंग सुविधाएं जैसे – उनके चैको तथा बिलों की रकमें वसूल करना, मांग पर देय ड्राफ्ट जारी करना आदि की सुविधाएं प्रदान करना चाहिए।

(4) **शाखा विस्तार** :– लोगों की बचत को जमा के रूप में आकर्षित करने के लिए इन बैंकों का उपयुक्त स्थानों पर अपनी शाखाएं खोलनी चाहिए।

(5) **शहरी जनता को बैंकों में धन जमा के रूप में रखने के लिए प्रोत्साहन** :– इन बैंकों के संचालकों तथा गैर सरकारी अध्यक्षों को चाहिए कि वे शहरी जनता को अपने अतिरिक्त धन या बचत इन बैंकों में जमा करने के लिए प्रोत्साहित करें।

(6) **राष्ट्रीय बचत योजना के प्रयासों से समन्वय** :– इन बैंकों द्वारा जमा पर धन प्राप्त करने के लिए किये गये प्रयत्नों तथा राष्ट्रीय बचत योजना के लिये किये जाने वाले सरकारी प्रयत्नों में किसी प्रकार की प्रतिस्पर्धा नहीं होनी चाहिए।

5.4.2 ऋण नीति के सम्बन्ध में सुझाव :–

(1) **ऋण नीति में परिवर्तन** :– केन्द्रीय सहकारी बैंकों को फसल ऋण प्रणाली के आधार पर अपनी ऋण नीति में आवश्यक संशोधन एवं परिवर्तन करने चाहिए। किस्तों में ऋण देने की व्यवस्था की जानी चाहिए तथा ऋण देने के समय को फसल बोने के समय से तथा ऋण वसूली के समय को फसल कटने के समय से सम्बन्धित करना चाहिए।

(2) **ऋण देने की विधि** :– ऋण प्रदान करने की विधि को अधिक सरल बनाना चाहिए जिससे ऋण देने अथवा ऋण की सीमा निर्धारित करने में अधिक समय न लगे।

(3) **अवधिपार ऋणों की वसूली** :– इन बैंकों को दीर्घकालीन अतिदेय ऋणों को वसूल करने के लिए शीघ्र एवं प्रभावकारी कदम उठाने चाहिए।

(4) **झूठे लेखों पर नियन्त्रण** :– इन बैंकों को चाहिए कि वे अप्राप्त ऋणों के झूठे लेखे न करें और न इनके सम्बन्ध में हिसाब की पुस्तकों में कोई समायोजन लेखा ही करें।

(5) **ब्याज दरों में अन्तर** :– बैंकों को प्राप्त ऋणों पर देय ब्याज तथा दिये जाने वाले ऋणों पर प्राप्त ब्याज की दरों में एक या दो प्रतिशत से अधिक अन्तर नहीं रखना चाहिए।

(6) **अप्राप्त तथा संदिग्ध ऋणों के लिए पर्याप्त व्यवस्था** :– इन बैंकों को अप्राप्त तथा संदिग्ध ऋणों के लिए पर्याप्त कोष की व्यवस्था करनी चाहिए।

(7) **अन्य सहकारी समितियों को भी ऋण की सुविधाएं प्रदान करना** :– इन बैंकों की गैर साख समितियों, जैसे – औद्योगिक सहकारी समितियों तथा सहकारी समितियों को भी ऋण प्रदान करने की व्यवस्था करनी चाहिए।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

5.4.3 प्रबन्ध के सम्बन्ध में सुझाव :–

(1) **समितियों का संचालक मण्डल में पर्याप्त प्रतिनिधित्व :–** सामान्य नियम के रूप में इन बैंकों के संचालक मण्डल में सम्बद्ध समितियों को ही स्थान मिलना चाहिए। व्यक्तिगत सदस्यों को केवल एक या दो प्रतिनिधियों से अधिक की नियुक्ति का अधिकार नहीं होना चाहिए।

(2) **कुशल कर्मचारियों की नियुक्ति :–** बैंक के कर्मचारी प्रशिक्षित तथा उचित वेतन प्राप्त होने चाहिए।

(3) **संचालकों द्वारा बैंक के कार्यों में रूचि लेना :–** संचालक मण्डल के सदस्यों को बैंक के विकास तथा उसके कार्यों में विशेष रूचि लेनी चाहिए।

(4) **कर्मचारियों से सम्बन्धित सुनिश्चित नीति :–** कर्मचारियों की नियुक्ति एवं तरक्की तथा उनके सम्बन्ध में प्रेरणादायक योजनाओं के लिए इन बैंकों को एक सुनिश्चित नीति अपनानी चाहिए। सहकारी बैंकों के लिए सेवा सम्बन्धी स्वीकृत योजना लागू की जानी चाहिए।

(5) **राजनीति से अप्रभावित होना :–** इन बैंकों को राजनीति तथा दलबन्दी के कुप्रभावों से मुक्त होना चाहिए।

5.4.4 संगठन के सम्बन्ध में सुझाव :–

प्रत्येक जिले में एक सुदृढ़ केन्द्रीय सहकारी बैंक होना चाहिए। इस बैंक को अपनी सम्बद्ध समितियों के कार्यों का निरीक्षण तथा उनका पथ प्रदर्शन करना चाहिए जिससे वे अधिक कुशलतापूर्वक कार्य कर सकें।

5.4.5 विनियोगों के सम्बन्ध में सुझाव :–

उल्लेखनीय हैं कि सहकारी बैंकिंग एवं व्यापारिक बैंकिंग के सिद्धान्तों में कठिनाई से ही कोई मौलिक भिन्नता हो सकती हैं। दोनों प्रकार की संस्थाएं जमाएं लेती हैं और इसलिए उन पर अपने कोषों का विनियोग इस प्रकार से करने की जिम्मेदारी हैं कि उनके जमाधारियों के हित सुरक्षित रहें। कोषों के विनियोग में तरलता और सुरक्षा सम्बन्धी सिद्धान्त दोनों पर समान रूप से लागू होते हैं। अतः यह बहुत ही वांछनीय हैं कि अपने कोषों का विनियोग करते समय केन्द्रीय सहकारी बैंक समस्त आवश्यक सावधानी रखें।

सहकारी बैंकों को चाहिए कि स्वस्थ बैंकिंग के आदर्शों और शर्तों का पालन करें और इस दृष्टि से उनके लिए यह अनुचित होगा कि अपने कोषों को उत्पादन, विपणन और परिवहन जैसे कार्यों के लिए संगठित अन्य सहकारी संस्थाओं के अंशों में फंसा कर रखें। सिद्धान्त एवं व्यवहार दोनों ही दृष्टिकोणों से ऐसे विनियोगों को हतोत्साहित करना चाहिए। एक ऋण लेने वाली समिति से स्वयं को एक अंश भागी के रूप में जोड़ देने से केन्द्रीय बैंकों की अपनी और अन्य समितियों की उचित कार्य करने सम्बन्धी स्वतंत्रता कम हो जाती हैं। चूंकि इन बैंकों के अधिकांश कोष अल्पकालीन उधार कोष के रूप में होते हैं, इसलिए उनके लिए यह बुद्धिमत्तापूर्ण बात न होगी कि कोषों को दीर्घकालीन विनियोग करें (जैसे कि अन्य सहकारी संस्थाओं के अंश खरीदने में अटका दें)।

ग्रामीण साख समीक्षा समिति के सुझाव :–

अखिल भारतीय ग्रामीण साख समीक्षा समिति ने केन्द्रीय सहकारी बैंकों के पुनर्गठन एवं सुदृढ़ीकरण के लिए निम्नांकित उपाय सुझाये हैं ताकि वे प्राथमिक समितियों को कृषि साख प्रदान करने में एक अधिक सार्थक भूमिका निभा सकें :–

(1) **अंश–पूंजी में राज्य का अंशदान बढ़ाना :–**

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

जिन क्षेत्रों में साख की प्रगति असन्तोषजनक रही हैं वहां के केन्द्रीय सहकारी बैंकों की अंश–पूंजी में सरकार का अंशदान इतनी पर्याप्त सीमा तक बढ़ा दिया जाए जिससे कि वह अधिक मात्रा में उधार दे सकें तथा उनके निजी साधनों का विस्तार हो सकें। निजी साधनों के बढ़ जाने से वे उच्चतर वित्तीय संस्थाओं से उपलब्ध साख सीमाओं के आधार पर निर्विध्न रूप से कार्य कर सकेंगे। राज्य के अंशदान में वृद्धि होना इसलिए आवश्यक हैं कि अनेक मामलों में केन्द्रीय बैंकों में काफी कोष अतिदेयों में अटक गये हैं तथा अतिदेयों को आत्मसात करने के लिए पर्याप्त जमाएं भी आकर्षित नहीं की जा सकी हैं।

(2) त्रुटि न करने वाले सदस्यों को प्रत्यक्ष सहायता :–

उन क्षेत्रों में जहां कि कृषि साख समितियां सुप्त पड़ी हुई हैं तथा उनके समापन या नवीनीकरण की प्रगति धीमी हैं, वहां केन्द्रीय बैंक अपनी निकटतम शाखा के द्वारा समितियों के त्रुटि न करने वाले सदस्यों को वित्त प्रदान कर सकते हैं। किन्तु यह व्यवस्था केवल अस्थायी उपाय मात्र हैं। जैसे ही सुप्त समितियों का पुर्नवास हो जाए संस्थाओं की त्रिस्तरीय ढ़ांचे के अनुसार सामान्य कार्य विधि को पुनः लागू कर देना चाहिए।

(3) कमचारी वर्ग का गुणात्मक सुधार :–

मुख्यालय एवं फील्ड स्तर पर केन्द्रीय सहकारी बैंकों के स्टाफ में आवश्यकतानुसार वृद्धि की जानी चाहिए। उपयुक्त भर्ती और प्रशिक्षण के माध्यम से स्टाफ के गुणात्मक सुधार का प्रयास भी करना चाहिए। प्रशिक्षण के दौरान कर्मचारियों को नवीन कृषि तकनीकों, कृषि ऋणों सम्बन्धी प्रक्रिया तथा ऋणों के उपयोग की देखरेख के विषय में जानकारी प्रदान करनी चाहिए।

(4) राज्य सरकारों द्वारा विशेष अनुदान :–

राज्य सरकार केन्द्रीय बैंकों को सही प्रकार के एवं पर्याप्त संख्या में कर्मचारी रखने तथा कुछ विशेष परिस्थितियों में डूबे ऋणों को अपलिखित करने में समर्थ बनाने हेतु विशेष अनुदान प्रदान करें।

(5) दीर्घावधि जमा कराना :–

कुछ दशाओं में एक केन्द्रीय सहकारी बैंक रिजर्व बैंक से उपलब्ध साख सुविधाओं के आधार पर कार्य करने में इसलिए असमर्थ रहता हैं क्योंकि उससे अतिदेयों का स्तर बहुत ऊँचा हो गया हैं। ऐसी दशा में अतिदेयों की वसूली बढ़ाने और त्रुटि के कारणों को जानने व सुधारने हेतु कदम तो उठाने ही चाहिए, किन्तु साथ–साथ यह भी आवश्यक हैं कि राज्य सरकार सम्बन्धित केन्द्रीय सहकारी बैंक के पास कुछ राशि एक दीर्घ अवधि के लिए जमा कराये ताकि वह उसके अतिदेयों को आत्मसात कर सकें और उसको उच्चतर वित्तीय संस्थाओं से उपलब्ध साख सीमा के आधार पर कार्य करना सम्भव बनाये।

(6) प्रबन्ध को अपदस्थ करना :– यदि यह देखा जाए कि केन्द्रीय सहकारी बैंक का प्रबन्ध अकुशल हैं और वांछित सुधार करने में सहयोग नहीं देता हैं तो रिजर्व बैंक से सलाह लेकर राज्य सरकार ऐसे प्रबन्ध को अपदस्थ कर सकती हैं और सरकारी या शीर्ष बैंक के विशेष अधिकारियों को प्रबन्ध संचालन के लिए नियुक्त कर सकती हैं।

(7) प्रबन्धकीय स्तर पर समुचित वर्ग :–

केन्द्रीय सहकारी बैंकों को चाहिए िकवे प्रबन्धकीय स्तर पर समुचित वर्ग (कैडर) का निर्माण करें जिससे कि कर्मचारी स्वतंत्र रूप से कार्य कर सकें। इससे बैंकों की नौकरी के लिए योग्य एवं अनुभवी व्यक्ति आकर्षित होंगे।

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University) Ladnun

(8) विलम्ब को रोकने का प्रयत्न :–

केन्द्रीय सहकारी बैंकों को चाहिए कि वे विलम्ब को कम से कम करने की दिशा में भरसक प्रयत्न करें, जैसे – वे समितियों की सरल फार्म बनाने में सहायता दें, शाखा वृद्धि के कार्यक्रम चालू करें एवं ऋण की स्वीकृति सम्बन्धी अधिकार ऋण कमेटियों को सौप दें।

(9) कालातीत ऋणों को वसूल करने से सम्बन्धित अभियान :–

प्रत्येक केन्द्रीय सहकारी बैंक को जो कि कालातीत ऋणों के कारण ठीक तरह से कार्य नहीं कर पा रहा हैं, पुनर्गठन का कार्यक्रम बनाना चाहिए एवं कालातीत ऋणों की वसूली करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न करने चाहिए।

(10) किताबी समायोजन को रोकना :–

भारतवर्ष में सहकारी बैंकिंग में एक बहुत महत्वपूर्ण गड़बड़ी किताबी समायोजन की हैं। समिति ने सुझाव दिया हैं कि सहकारी बैंक एवं सहकारी विभाग देखें कि बड़े पैमाने पर किताबी समायोजन न होने पाये एवं इसको रोकने के लिए कोई भी प्रयत्न बाकी नहीं रखा जाए, जैसे – ऋण देने एवं वसूल करने में मौसम अनुरूपता के सिद्धान्त का पालन करना, एक पुराने ऋण की वसूली और नया ऋण देने की तारीखों के बीच उचित समयान्तर रखना आदि।

(11) छोटे किसानों के लिए एक विशेष अधिकारी की व्यवस्था :–

सहकारी समितियों पर एक महत्वपूर्ण दोषारोपण यह किया जाता हैं कि छोटे किसानों को समुचित ऋण नहीं मिलता। इसके लिए ग्रामीण ऋण समीक्षा समिति ने यह सुझाव दिया हैं कि प्रत्येक केन्द्रीय बैंक में एक विशेष अधिकारी (एक या दो निरीक्षकों के साथ) इस कार्य की भी देखरेख करें।

(12) त्रुटि करने वाली समितियों और सदस्यों को प्रतिनिधित्व से वंचित करना :–

त्रुटि करने वाले सदस्यों और समितियों के संचालक मण्डल में स्थान न दिया जाय। इस आशय के नियम सभी राज्यों में बना दिये जाने चाहिए।

(13) ऋण स्वीकरण की शक्तियों का विकेन्द्रीकरण :–

केन्द्रीय बैंक की ऋण स्वीकार करने की शक्तियों का विकेन्द्रीकरण प्रयोगात्मक आधार पर निम्न दो चरणों में करने का सुझाव दिया गया हैं – प्रथम, केन्द्रीय सहकारी बैंक की प्रत्येक शाखा पर सलाहकार समितियां गठित कर दी जाएं और इन्हें सम्बन्धित शाखा के प्रभाव क्षेत्र की समितियों को ऋण स्वीकार करने की सीमित शक्तियां सौंप दी जाए। हाँ प्रत्येक सलाहकार समिति कितने ऋण की स्वीकृति दे सकती हैं इसके लिए कुल राशि सम्बन्धी सीमा बांध दी जाएं। दूसरे, चुनिन्दा कृषि साख समितियों को, जिनके कुशल कार्यकलापों का रिकार्ड अच्छा हैं और वसूली कार्यक्रम भी सन्तोषजनक रहे हैं इस बात कि अनुमति दे दी जाए कि वे अपने सदस्यों को एक निश्चित राशि तक ऋण केन्द्रीय बैंक से अनुमोदन की प्रतीक्षा न करते हुए स्वीकार कर सकें। यह प्रयोग उन चुनी हुई अच्छी समितियों से शुरू किया जा सकता हैं, जिनके निजी कोष पर्याप्त हैं और बाद में यह स्कीम अन्य समितियों पर भी विस्तृत की जा सकती हैं।

(14) प्राथमिक समितियों को ऋण स्वतः प्राप्त होने की सुविधा :–

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

चुने हुए क्षेत्रों में और प्रयोगात्मक आधार पर ऐसी व्यवस्था की जा सकती हैं जिससे कि एक कृषक को वर्ष विशेष के लिए अपनी समिति से उत्पादन साख पाने का अधिकार (entitlement of production credit) स्वतः प्राप्त हो जाया करें, बशर्ते उसने अपने पिछले देने समय पर एवं पूर्णतया चुका दिये हो। ऐसा अधिकार विगत वर्ष में उसको स्वीकृत की गयी सीमा के 75 प्रतिशत तक दिया जा सकता हैं। शेष उसे तब दिया जाए जबकि चालू वर्ष का सामान्य साख विवरण स्वीकृत हो जाए। इस प्रकार से दी गयी व्यक्तिगत सीमाओं के योग की सीमा तक स्वयं कृषि साख समिति को भी केन्द्रीय बैंक से ऋण प्राप्ति का अधिकार स्वतः (automatic line of credit) मिल जाना चाहिए।

बोध प्रश्न :–

प्र. 1 केन्द्रीय सहकारी बैंक के वित्तीय साधनों में वृद्धि करने हेतु सुझाव दीजिए।

.....

.....

.....

प्र. 2 केन्द्रीय सहकारी बैंक की ऋण नीति के सम्बन्ध में सुझाव दीजिए।

.....

.....

.....

प्र. 3 केन्द्रीय सहकारी बैंक की प्रबन्ध नीति के सम्बन्ध में सुझाव दीजिए।

.....

.....

.....

प्र. 4 केन्द्रीय सहकारी बैंक के संगठन के सम्बन्ध में सुझाव दीजिए।

.....

.....

.....

5.4 सारांश :–

प्रस्तुत इकाई में केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में पाए गये विभिन्न दोषों की विवेचना की गई हैं। इन बैंकों में कुछ आन्तरिक दोष जैसे–वित्तीय साधनों का अभाव, ऋण सीमा तथा अंश–पूंजी के पारस्परिक सम्बन्ध का अभाव तथा कुशल सेवाओं की कमी आदि पाए जाते हैं। दूसरी और फसल ऋण नीति को लागू न करना, ऋणों की स्वीकृति में विलम्ब, गलत लेखे तथा बढ़ते हुए अवधिपार ऋण आदि की भी समस्याएं हैं। इन

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

बैंकों की विनियोग नीति में भी कई कमियां पाई गई हैं जैसे – बिना जांच पड़ताल के ऋण दे देना, नये उद्यम में विनियोग आदि। इसके अतिरिक्त इन बैंकों में प्रबन्ध सम्बन्धी तथा पारस्परिक समन्वय का अभाव आदि कमियां भी पाई जाती हैं।

केन्द्रीय सहकारी बैंकों की कार्यप्रणाली में सुधार हेतु विभिन्न सुझावों की विवेचना भी प्रस्तुत इकाई में की गई हैं। वित्तीय साधनों में वृद्धि हेतु कई सुझाव जैसे जमा पर ब्याज में वृद्धि, शाखा विस्तार, अवधिपार ऋणों की वसूली, संदिग्ध ऋणों के लिए पर्याप्त व्यवस्था आदि सुझाव दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त ऋण नीति, प्रबन्ध, संगठन तथा विनियोगों के सम्बन्ध में सुझाव आदि की विवेचना भी प्रस्तुत अध्याय में की गई हैं।

5.7 बोध प्रश्नों के उत्तर :–

5.3 उत्तर 1. 1. सहकारी आन्दोलन को नेतृत्व प्रदान करना 2. प्राथमिक समितियों के निरीक्षण का अभाव

उत्तर 2. 1. वित्तीय साधनों का अभाव 2. ऋण सीमा तथा अंश–पूंजी के पारस्परिक सम्बन्ध का अभाव 3. कुशल सेवाओं की कमी

उत्तर 3. 1. फसल ऋण प्रणाली को लागू न करना 2. ऋणों की स्वीकृति में विलम्ब होना 3. अल्पकालीन तथा मध्यमकालीन ऋणों के अन्तर की उपेक्षा 4. गलत लेखे अवधिपार (वअमतकनमे) ऋणों की बढ़ती हुई रकम 5. अप्राप्त तथा संदिग्ध ऋण कोष की अपर्याप्तता 6. ब्याज की दर का अधिक होना

उत्तर 4. 1. व्यापारिक बैंकों में जमा 2. नये उद्यम में विनियोग 3. सरकारी प्रतिभूतियों में विनियोग 4. बिना जांच पड़ताल के ऋण दे देना 5. अन्य सहकारी संस्थाओं की अंश–पूंजी में भाग लेना

उत्तर 5. 1. व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व 2. अकुशल कर्मचारी 3. राजनीतिज्ञों का प्रभुत्व 4. कर्मचारियों की उपेक्षा

5.4 उत्तर 1. 1. जमा पर ब्याज में वृद्धि 2. विभिन्न संस्थाओं को अतिरिक्त रकमों को जमा करने की व्यवस्था 3. बैंकिंग सुविधाएं प्रदान करना 4. शाखा विस्तार 5. शहरी जनता को बैंकों में धन जमा के रूप में रखने के लिए प्रोत्साहन 6. राष्ट्रीय बचत योजना के प्रयासों से समन्वय

उत्तर 2. 1. ऋण नीति में परिवर्तन 2. ऋण देने की विधि 3. अवधिपार ऋणों की वसूली 4. झूठे लेखों पर नियन्त्रण 5. ब्याज दरों में अन्तर 6. अप्राप्त तथा संदिग्ध ऋणों के लिए पर्याप्त व्यवस्था 7. अन्य सहकारी समितियों को भी ऋण की सुविधाएं प्रदान करना

उत्तर 3. 1. समितियों का संचालक मण्डल में पर्याप्त प्रतिनिधि 2. कुशल कर्मचारियों की नियुक्ति 3. संचालकों द्वारा बैंक के कार्यों में रूचि लेना 4. कर्मचारियों से सम्बन्धित सुनिश्चित नीति 5. राजनीति से अप्रभावित होना

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun

उत्तर 4. प्रत्येक जिले में एक सुदृढ़ केन्द्रीय सहकारी बैंक होना चाहिए। इस बैंक को अपनी सम्बद्ध समितियों के कार्यों का निरीक्षण तथा उनका पथ प्रदर्शन करना चाहिए जिससे वे अधिक कुशलतापूर्वक कार्य कर सकें।

5.8 शब्द कोष :–

सीमान्त कृषक	कृषि मजदूर
अर्थक्षम	अतिदेय
संस्थागत ऋण	संचित घाटा
अवधिपार	अपर्याप्त नियोजन
लाभदायकता	प्राथमिक समितियां
राष्ट्रीय बचत योजना	

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. बी.एस. माथुर, ''सहकारिता'' साहित्य भवन, आगरा
2. Deshpande D.V. M.K. Mudgal, and K.K. Gupta, Working oaoer on RRBs at Cross Road, Bunkers Institute of Rural Development, Lucknow
3. Bhat, N.S., Rural Banking in India.
4. Desai, SSM, Agriculture and Rural Banking in India, Himalya Publications
5. Singh, R.P. and Sathees Babu K. Performanve and Prospects of Reginal Rural Banks – An appraisal, Kurukshetra, July 1996

Jain Vishva Bharati Institute (Deemed University), Ladnun